(आ) सभङ्ग पद यमक

जतय पदकेँ तोड़ि-जोड़ि कए भिन्नार्थक प्रतीति होअए ओतय सभङ्ग पद यमक होइछ।

उदाहरण :

1. **कानब सुन क्यो कान न**
   कानन-सन जग रे ।
   जन बिच दुःखक असर न
   अ-सरण सभ लग रे ॥ (बाजि उठल मुरली)

एतय 'कान न' क अर्थ थिक बिनु कानेँ, 'कानन'क अर्थ जंगल तथा 'असर न' प्रभावरहित एवं 'अ-सरण' ठोकर खाएब। अतः सभङ्गपद यमक भेल।

2. **रहितहु दोष, दोष हमरा नहि—**
   दऽ सकता सज्जन ई मानि ।
   दोषाकर बुझितहुँ दोषाकर—
   केँ चढ़ौल शङ्कर चट चानि ॥ (राधा-विरह)

एतय प्रथम दोषाकर दोषक आकर (समूह) थिक किन्तु दोसर दोषाकरक रूढ़ि अर्थ चन्द्रमा थिक।

प्रथमकेँ भङ्ग करए पड़ैत छैक आ दोसरकेँ नहि। अतः सभङ्ग पद यमक भेल।

यमक एवं लाटानुप्रास

यमक एवं लाटानुप्रास दुनूमे वर्ण समुदायक आवृत्ति रहैत अछि, किन्तु यमकमे अर्थ भिन्न रहब आवश्यक, जखन कि लाटानुप्रासमे एकार्थक वर्णक आवृत्ति रहैत अछि। यमकमे निरर्थक एवं सार्थक दुनू वर्णक आवृत्ति होइत अछि किन्तु लाटानुप्रासमे मात्र सार्थक वर्णक आवृत्ति होइछ।

3— श्लेष

(शब्द श्लेष)

एकहि शब्दमे यदि दू वा दूसँ अधिक अर्थ ओझरायल रहय तऽ श्लेष अलङ्कार होइछ।

श्लेषक अर्थक होइछ आलिङ्गन— लेपटायब। एहि अलंकारमे एकहि शब्दमे अनेक अर्थ ओझराएल रहैत अछि। ई शब्द एवं अर्थ दुनूमे होइछ। यदि शब्दमे श्लेष रहैत अछि तऽ शब्दश्लेष भेल आ यदि अर्थमे रहय तऽ अर्थ-श्लेष। एतय शब्दश्लेषक चर्चा कयल जाइत अछि। अर्थश्लेषक चर्चा अर्थालङ्कारक क्रममे होयत।

लक्षणः

1. **शिलष्टैः पदैरनेकार्थाभिधाने श्लेष इष्यते।** (सा० द०)
   शिलष्ट पदक द्वारा अनेक अर्थक बोध होयब श्लेष अलंकार थिक।

अलङ्कार-क्रम

शब्दालङ्कार	पृष्ठ संख्या

अर्थालङ्कार

अर्थालङ्कार — **पृष्ठ संख्या**

अर्थालङ्कार	पृष्ठ संख्या

अर्थालङ्कार	पृष्ठ संख्या

शब्दार्थालङ्कार

(आ) अन्त्यानुप्रास

ई अनुप्रास पदान्तमे दृष्टिगोचर होइत अछि तेँ एकर नाम थिक अन्त्यानुप्रास । एकरा तुकान्त सेहो कहल जाइत अछि ।

उदाहरण :

केश छत्ता जकाँ माथ हत्ता जकाँ
आँखि खत्ता जकाँ दाँत फारे बुझू ।
बोल रोड़ा जकाँ चालि घोड़ा जकाँ
पेट मोरा जकाँ वा बखारे बुझू ॥ (सीताराम झा)

एतय 'जकाँ' एवं 'बुझू' केर आवृत्तिसँ अन्त्यानुप्रास भेल ।

2— यमक

भिन्नार्थक प्रतिपादनक हेतु एक शब्दक बेरि–बेरि आवृत्तिसँ यमक अलङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारमे एकहि शब्द बेरि–बेरि भिन्न–भिन्न अर्थक प्रतिपादनक हेतु प्रस्तुत कयल जाइत अछि । एहिमे सार्थक एवं निरर्थक दुनू वर्णक आवृत्ति होइत अछि ।

लक्षण :

1. **सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्य□जनसंहतेः**
क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते ॥ (सा.द.)

यमक ओ अलङ्कार थिक जाहिमे सार्थक भेलोपर, भिन्न–भिन्न अर्थवला स्वर–व्य□जनक समूहक पूर्वक्रमानुसार आवृत्ति होइछ ।

भेद :

एकर दू भेद कयल जा सकैछ— (अ) अभङ्ग पद यमक (आ) सभङ्ग पद यमक ।

(अ) अभङ्ग पद यमक

जतय पदकेँ बिनु तोड़ने–जोड़ने यमक होअए ओतय अभङ्ग पद यमक होइछ ।

उदाहरण :

सारङ्ग नयन वयन पुनि सारङ्ग
सारङ्ग तसु समधाने ।
सारङ्ग उपर उगल दस सारङ्ग
केलि करथि मधुपाने ।। (विद्यापति)

एतय प्रत्येक सारङ्गक भिन्न–भिन्न अर्थ अछि, जे थिक क्रमशः — हरिण, कोकिल, धनुष (कामदेवक), कमल (पयोधर) एवं भ्रमर (आङुर) । अतः यमक अलङ्कार भेल । एतय शब्द तोड़ल नहि गेल अछि तेँ अभङ्ग पद यमक भेल ।

उपमेय सतत उपमानसँ निकृष्ट रहैत अछि किन्तु उपमेयोपमामे अभेद बुझना जाइत अछि, प्रतीपध्वनि सेहो रहैत अछि ।

10— रशनोपमा

जतय पूर्व कथित उपमेय उत्तरोत्तर उपमान बनल चल जाइत अछि ओतय रशनोपमा अलङ्कार होइछ ।

रशनाक शाब्दिक अर्थ थिक 'करघनी' । अर्थात् जहिना करघनीमे अनेक कड़ीक शृंखला होइत अछि तहिना एहि अलङ्कारमे पूर्व कथित उपमेय उत्तरोत्तर कथित उपमानक उपमेय बनैत अछि आ एहि प्रकारेँ उपमानक एकटा शृंखला बनि जाइत अछि ।

लक्षण :

1. **कथिता रशनोपमा यथोर्ध्वयमुपमेयस्य यदि स्यादुपमानता ।** (सा० द०)

रशनोपमा ओ अलङ्कार थिक जाहिमे पूर्व वर्णित उपमेय उत्तरोत्तर उपमान बनि जाइत अछि ।

2. **क्रमशः जे उपमेय से उपमाने बनि जाए ।**
ई कविकुल व्यवहारमे रशनोपमा कहाए । (अ०क०)

क्रमशः यदि उपमेय उपमान बनैत जाए तऽ रशनोपमा कहबैत अछि ।

उदाहरण :

कुमुद कलित सर जनु लसित नखत भरित आकाश ।
गगन तारकित जनु धनिक कुसुम ग्रथित कच-पाश ॥ (अ० मा०)

कुमुदसँ भरल सरोवर लगैत अछि जेना नक्षत्रसँ भरल आकाश हो आ नक्षत्रसँ भरल आकाश बुझि पड़ैछ जेना नायिकाक पुष्प-ग्रथित केश-पाश हो ।

11—मालोपमा

एकटा उपमेयक हेतु जखन अनेक उपमान रहैत अछि तऽ ओतय मालोपमा होइछ ।

मालोपमाक शब्दिक अर्थ थिक— उपमाक माला । कविकेँ जखन एकटा उपमानसँ तृप्ति नहि होइत छनि तऽ ओ अनेक उपमानक प्रयोग करैत छथि जे माला जकाँ उपमेयकेँ घेरि लैत अछि ।

लक्षण :

1. **मालोपमा यदेकस्योपमानं बहु दृश्यते ।** (सा०द०)

मालोपमा ओ अलङ्कार थिक जाहिमे एकटा उपमेयक अनेक उपमान दृष्टिगोचर होइत अछि ।

2. **एके टा उपमेय केर जँ अनेक उपमान ।**
से कहबए मालोपमा, ई कवि-कुलक विधान ॥ (अ०क०)

अलङ्कार-भास्कर

डॉ० रमण झा
प्राचार्य
विश्वविद्यालय मैथिली विभाग
ल० ना० मिथिला विश्वविद्यालय
कामेश्वरनगर, दरभङ्गा

प्रकाशक :
शंकर आभूषणालय
टावर चौक, दरभंगा

प्रकाशक :
श्री राम प्रकाश अग्रवाल
शंकर आभूषणालय
टावर चौक, दरभङ्गा ।
दूरभाष : 222214

परिव□ित संस्करण : 2003
मूल्य : दू सय टाका मात्र

मुद्रक :
प्रिंटवेल,
टावर चौक, दरभङ्गा ।
दूरभाष : 235205

Alankar–Bhaskar
(Poetics)
By Dr. Raman Jha

Rs 200/-

९—उपमेयोपमा

उपमेयोपमा ओ अलङ्कार थिक जाहिमे उपमेय एवं उपमान क्रमशः एक दोसराक उपमेय एवं उपमान बनि जाइत अछि ।

एहि अलङ्कारमे उपमेयसँ उपमानक एवं उपमानसँ उपमेयक सादृश्य देखओलासँ अन्य उपमान तिरस्कृत भए जाइत अछि । कविक मस्तिष्क प्रस्तुते उपमेयोपमानसँ तृप्त भए जाइत अछि तेँ अन्य उपमानक ताक करबाक प्रयोजन नहि भऽ पबैत अछि । एहिमे तृतीय सादृश्यक प्रयोजन नहि रहि जाइत अछि ।

लक्षण :

1. **पर्यायेण द्वयोस्तच्चदुपमेयोपमा मता ।**
   धर्मोर्थि इव पूर्णश्रीरर्थो धर्म इव त्वयि ॥ (कुव०)

जतय उपमान एवं उपमेय क्रमशः एक दोसराक उपमान एवं उपमेय हो ओतय उपमेयोपमा अलङ्कार होइत अछि; यथा– अपनेमे धर्म अर्थ सदृश पूर्ण अछि एवं अर्थ धर्म सदृश ।

2. **पर्यायेण द्वयोरेतदुपमेयोपमा मता ।** (सा०द०)

उपमेयोपमालङ्कारमे दू वस्तु बेरा–बेरी एक–दोसराक उपमेय तथा उपमान होइत अछि ।

3. **उपमानो उपमेय पुनि उपमेयो उपमान ।**
   'उपमेयोपम' नाम सँ वर्णन करिअ प्रमाण ॥ (अ० मा०)

जतय उपमान उपमेय एवं उपमेय उपमान भए जाय ओतय उपमेयोपमा अलङ्कार होइछ ।

उदाहरण :

1. **अहँक प्रभो अछि श्री सम बु□ ।**
   बु□ सदृश पुनि श्रीक समृ□ ॥ (एकावली–परिणय)

एतय पहिल पाँतीमे श्री (लक्ष्मी)— उपमान तथा बु□— उपमेय अछि तथा दोसर पाँतीमे बु□— उपमान एवं श्री— उपमेय ।

2. **अहँक वदन सम चान,**
   चान सम अहँक वदन पुनि ।
   कुच-युग पद्म समान
   पद्म अछि कुच-युग सम पुनि ॥ (लेखक)

उपर्युक्त पद्यक पूर्वा□मे वदन एवं चान तथा उत्तरा□मे कुच–युग एवं पद्म क्रमशः एक दोसराक उपमेय एवं उपमान थिक । अतः उपमेयोपमालङ्कार भेल ।

उपमा एवं उपमेयोपमा

उपमालङ्कारमे उपमेय एवं उपमान स्थायीरूपसँ रहैत अछि जखनकि उपमेयोपमामे क्षणमात्रहिमे उपमेयकेँ उपमान एवं उपमानकेँ उपमेय बनए पड़ैत छैक । उपमालङ्कारमे

6. वाचकोपमान लुप्ता

जतय वाचक एवं उपमान दुनू लुप्त रहय; यथा—

आँखि-लाल भुज-विशाल
उन्नत-भाल ठोर-लाल
दाँत-फार नाक-ताड़
परशुराम हाथ-खाँड़ ॥ (लेखक)

एतय आँखि, भुज, भाल, ठोर, दाँत, नाक एवं हाथ उपमेय तथा लाल, विशाल, उन्नत, लाल, फार, एवं ताड़ साधारण धर्म थिक । वाचक एवं उपमान लुप्त अछि ।

7. धर्मोपमान लुप्ता

जतय धर्म एवं उपमान लुप्त रहय; यथा—

हरिश्चन्द्र सम क्यो न आइ ।
दधि-बलि सम अछि पुनि नहि देखाइ ॥ (लेखक)

एहिमे हरिश्चन्द्र एवं दधि-बलि उपमेय तथा सम वाचक थिक । धर्म लुप्त अछि तथा 'न आइ' एवं 'नहि देखाइ' सँ उपमाक निषेध कयल गेल अछि । अत: धर्म एवं उपमान दुनू अकथित अछि ।

8. धर्मोपमान वाचक लुप्ता

जतय केवल उपमेयक कथन हो— धर्म, वाचक एवं उपमान लुप्त रहय, यथा—

अनुपमेय जत बसथि सियावर ।
रम्य, रुचिर, प्रासाद सुमन-सर ॥ (लेखक)

एतय सियावरक निवासस्थलकेँ अनुपमेय कहि— धर्म, उपमान एवं वाचक-तीनूक निषेध कयल गेल अछि ।

9. उपमेय लुप्ता

जतय उपमेय लुप्त रहय; यथा—

शशि समान आह्लादक पुनि दाहक पावक सम ।
कमल सदृश कोमल विकसित अछि गिरिक शृङ्ग सम ॥ (लेखक)

एतय उपमेय (स्तन)क कथन नहि अछि, आओर तीनू तत्त्व विद्यमान अछि । पूर्वा□मे विरोधाभास एवं सम्पूर्णमे भिन्नधर्मा उपमेय लुप्ता मालोपमा सेहो द्रष्टव्य थिक।

10. धर्मोपमेय लुप्ता

जतय धर्म एवं उपमेय लुप्त रहय; यथा—

शरद शशधर सम देखल ।
हृदय मोर जीतल ॥ (लेखक)

एतय शरद-शशधर उपमान एवं सम वाचक थिक । धर्म एवं उपमेय लुप्त अछि ।

भूमिका

भारतीय साहित्यशास्त्रक दृष्टि त्रिविध रहल अछि— कवि, काव्य एवं सहृदय । फलत: काव्यक प्रत्येक तत्त्व जतए कविक दृष्टिमे रीति किंवा मार्ग कहल गेल, सहृदयक दृष्टिएँ रस, ओतहि काव्यक दृष्टिसँ अलंकार, आ जँ एहि दृष्टिएँ विचार करी तँ रसहु अलंकारहि थीक आ ओकरा रसालंकारक सम्बोधन देल जाएत । सहृदयक दृष्टिसँ रस एक आस्वाद मात्र थीक कारण अलंकारहु एक आस्वाद थीक आ तेँ ओ रस सेहो अछि । मात्रागत अन्तरसँ महत्त्वमे अन्तर अस्वाभाविक नहि किन्तु तत्त्वमे कोनो अन्तर नहि । चौदह-पन्द्रह सय वर्षक इतिहासमे साहित्यशास्त्रक समीक्षा मात्र काव्यक दृष्टिएँ प्रस्तुत भेल किन्तु सातम-आठम शताब्दी धरि अलंकारकेँ काव्यक मेरुदण्ड मानि लेल गेल । ओहि समय धरि विविध तत्त्वक अलंकारहि महासंज्ञा रहल । एकर पश्चात् मिश्रित समीक्षाक युग आएल जे एकांगी समीक्षाक रूपमे बदलि गेल । काव्यक प्रत्येक तत्त्वक प्रतिनिधित्व गौण कएल जाए लागल । ई समय छल अनुभाविताक अथवा सहृदयक प्रबल पक्षक फलस्वरूप आस्वादनक आधारपर काव्यक मूल्यांकन करबाक । एहि युगक महासंज्ञा बनल 'ध्वनि' किन्तु कविपक्षक उपेक्षा नहि भेल आ ध्वनि युगक पूर्वार्धक किछुए दशकक अन्तरालमे पुन: काव्य समीक्षा मुखरित भेल जकर महासंज्ञा बनल 'वक्रोक्ति' । एवंप्रकारेण काव्यक सर्जनात्मक प्रक्रियाकेँ अधिक सूक्ष्मता एवं प्रधानताक संग प्रस्तुत कएल जाए लागल । वक्रोक्ति द्वारा अनुभाविताक पक्षकेँ ध्वनि एवं रस पक्षक द्वारा तथा स्वयं काव्यक पक्षकेँ प्रस्तुत कएल गेल 'अलंकार' नामक व्यापक अर्थमे प्रयुक्त संज्ञा द्वारा ।

दशम शताब्दी धरि अबैत-अबैत पूर्वक सभ विचार-चिन्तन स्थापित भए चुकल छल, तेँ परवर्ती आचार्य लोकनि तीनूक समन्वय आवश्यक बूझि एहि शताब्दीक पूर्वार्धसँ पूर्व धरि महत्त्व आस्वाद पक्षकेँ देलनि तथा ओकर अंगक रूपमे प्रस्तुत कएलनि काव्यक स्वगत विशेषता सभकेँ । एहि विशेषता सभमे गुण ओ उपमा आदि अलंकारकेँ प्रमुख माननलि तथा गुणक संख्याकेँ ओज, माधुर्य एवं प्रसाद धरि सीमित कए देलनि । पश्चात् गुणहुकेँ हँटाए काव्यक फलकेँ रसधर्म घोषित कए देलनि । परिणामस्वरूप काव्यक शरीरमे रहएबला धर्मक रूपमे अवशिष्ट रहि गेल उपमा आदि वर्ग, जकरा अलंकारक नामसँ संबोधित कएल जाइत रहल । कालान्तरेँ काव्य समीक्षा संस्कृत दिस उन्मुख भए अलंकार तत्त्वकेँ उपमा आदिक संकीर्ण सीमासँ बहिर्भूत कए एहन धरातलपर प्रतिष्ठित कएलक जाहिपर आठम शताब्दीक पश्चातहु ओ सुदृढ़ रहल । रसकेँ काव्यक धर्म नहि मानि काव्यक फल मानल गेल जे अनुभव

ओ तर्कसंपुष्ट छल । एहि तरहेँ पुनः ओहि सभ विशेषताकेँ काव्य-धर्म तथा अलंकार मानल गेल जकर कारणेँ सहृदयकेँ काव्यक विशिष्ट आस्वाद प्राप्त होमए लगलनि ।

एहि प्रकारक संक्रमणमे काव्यसँ शब्द पृथक् भए गेल तथा चेतनासंपृक्त व्यक्ति ओकरा सूक्ष्म शरीरक समान काव्यक उपाधि मानि लेलनि । फलतः आस्वादवादी युगमे शब्दालंकारकेँ प्रथम तथा अर्थालंकारकेँ बादमे स्थान देलनि । प्रस्तुत ग्रंथ **अलंकार-भास्कर**मे एही क्रमक अनुपालन भेल अछि ।

एहि तरहेँ ई सुविदित तथ्य थीक जे साहित्यमे जेना-जेना रसक महत्ता स्वीकृत होइत गेल, अलंकारक गरिमा क्षीण होइत गेलैक, शब्दालंकारक प्रति उपेक्षाभाव जागृत होमए लगलैक, किन्तु कालान्तरसँ अर्थालंकार तँ पूर्वहि प्रतिष्ठित भए चुकल छल, शब्दालंकार सेहो पूर्ण गरिमाक संग प्रतिष्ठित भेल ।

मानव मनक प्रसुप्त कल्पना एवं अनुभूतिकेँ रूपायित करबाक प्रयास असीम ओ अनन्त होइछ । जाहिमे सहृदयक निमित्त एक साधन अलंकार सेहो अछि । चमत्कृत आँगनमे कला ओ काव्य मर्मक मृदुल मिश्रण ओ मादक क्षण थीक जकरा सरस्वतीक वरद-पुत्र अपन लेखनी एवं तूलिकासँ प्रतिध्वनित करैत छथि, आ यैह प्रतिध्वनि- श्रवणक अभिलाषी सहृदय श्रोता ओ पाठक होइत छथि । काव्यमे अलंकारक महत्त्वक विषयमे अधिकांश आचार्य लोकनि एकमत छथि । जँ आचार्य भामह **न कान्तमपि निर्भूषं विभाति वनितामुखम्** कहि अलंकारक महत्त्व ख्यापित करैत छथि तँ आचार्य दण्डी **काव्यशोभाकरान्धर्मानलंकारान्प्रचक्षते**। एतेक धरि जे अग्निपुराणकार काव्यमे अलंकार तत्त्वक प्रति पूर्वाग्रह ग्रसित सदृश अपन उक्ति देबासँ विरत नहि होइत छथि—

अलंकार रहिता विधवेव सरस्वती ।

अस्तु, काव्यमे अलंकारक अनिवार्यता रहैत अछि, रूपभिन्नता जे रहओ ।

प्रस्तुत ग्रंथ **अलंकार-भास्कर** डॉ० रमण झाक एक अमूल्य अलंकार-संग्रह ग्रंथ थीक। प्रस्तुत ग्रंथक अन्तर्गत विविध अलंकारकेँ तीन कोटि मध्य विभाजित कएल गेल अछि— शब्दालंकार, अर्थालंकार एवं उभयालंकार । एहि शताधिक अलंकारक संग्रह सम्पूर्ण ग्रंथमे प्रत्येक अलंकारक सूक्ष्मातिसूक्ष्म भेदक निदर्शन, लक्षण ओ उपलक्षणक सोदाहरण संपुष्टि, साम्य-वैषम्यक निर्देश-पूर्वक विशिष्ट विश्लेषण क्षमताक संग प्रस्तुत भेल अछि । डॉ० रमण झाकेँ जाहि कोनो सूक्ष्म भेदयुक्त अलंकारक उदाहरण सहजतासँ उपलब्ध नहि भए सकलनि ओतहु ओ अपन कवि-प्रतिभाक उपयोग कए ओहि अलंकारकेँ लक्षण ओ उदाहरणसँ संपुष्ट कएने छथि जे निर्विवाद रूपसँ हिनक साहित्यशास्त्रीय ज्ञानक परिचायक थीक ।

ता पुनु अपरुप देखल रे
कुच-युग-अरविन्द । (विद्यापति)

एतय अपरुप— साधर्म्य, कुचयुग— उपमेय एवं अरविंद— उपमान थिक । अतः वाचक लुप्त अछि ।

2. धर्म लुप्ता

जतय केवल धर्म लुप्त रहय; यथा—

हेम कलश सम युगल पयोधर
हेरितहि हृदय हनए पचशर । (लेखक)

एतय हेमकलश— उपमान, सम— वाचक, एवं युगल पयोधर— उपमेय थिक; सामान्य धर्म लुप्त अछि ।

3. धर्मवाचक लुप्ता

जतय धर्म एवं वाचक लुप्त रहय; यथा—

नव-नागरि पिय-दोष लखि,
सखी-वचन दए कान ।
महि सम्मुख मुख-कमल कए
तानल भौँह कमान ।। (एकावली-परिणय)

एतय तृतीय चरणमे मुख—उपमेय एवं कमल—उपमान थिक तथा चतुर्थ चरणमे भौँह— उपमेय एवं कमान— उपमान थिक । धर्म एवं वाचकक कथन लुप्त अछि ।

4. वाचकोपमेय लुप्ता

जतय वाचक एवं उपमेय लुप्त रहय; यथा—

चंचला चमकि मन मोहि लेलक ।
कामक धनु लगइछ जोहि लेलक ॥ (लेखक)

एतय विद्युत समान आभावाली नायिका अपन रूप देखाय मोनकेँ मोहित कय लेलक, बुझि पड़ैछ जेना कामदेव वाण चलयबाले प्रस्तुत होथि ।

उक्त पंक्तिमे उपमेय नायिका तथा वाचक लुप्त अछि । चंचला— उपमान एवं चमकि-साधर्म्य थिक ।

5. उपमान लुप्ता

जतय मात्र उपमानक लोप हो; यथा—

सरस आम सन दोसर फल नहि ।
भव्य कमल सन आन पुष्प नहि ॥ (लेखक)

एतय 'सरस' एवं 'भव्य' साधर्म्य, 'सन' वाचक तथा 'फल' 'आ' पुष्प' उपमेय थिक । 'दोसर फल नहि' आ 'आन पुष्प नहि' कहि उपमानक निषेध कयल गेल अछि तेँ उपमान लुप्त अछि ।

कहबैछ; यथा— हे कृष्ण ! अहाँक कीर्त्ति हंसिनीक सदृश स्वर्गङ्गाक अवगाहन करैत अछि ।

एहिमे उपमाक चारू तत्त्व (उपमान, उपमेय, साधर्म्य एवं वाचक) विद्यमान अछि ।

3. उपमेयक उपमान सङ समता 'उपमा' उक्त ।
अहँक कीर्त्ति सौरभ जकाँ पसरल दिस-दिस युक्त ॥ (अ० मा०)

उपमेयक उपमान संग यदि समता देखाओल जाय तऽ उपमालङ्कार कहबैछ; यथा— अहाँक कीर्त्ति सुगन्धि जकाँ सभ दिशामे व्याप्त अछि ।

भेद :

आचार्य मम्मटक अनुसारेँ उपमाक 25 टा भेद अछि— 6 पूर्णोपमाक एवं 19 लुप्तोपमाक, किन्तु कुवलयानन्दकार अप्पयदीक्षित केवल लुप्तोपमाक 8 भेदक वर्णन कयलनि अछि । ओ मम्मटक मतकेँ बेसी महत्त्व नहि देलनि अछि । वस्तुत: बेसी भेदोपभेद भेलासँ वास्तविकता नहि रहि जाइत छैक तेँ कुवलयानन्दक अनुसार चलब बेसी नीक होयत।

प्रथमत: उपमाक दू भेद भेल—

(अ) पूर्णोपमा (आ) लुप्तोपमा ।

पूर्णोपमा

जतय उपमाक चारू तत्त्व विद्यमान रहैत अछि ओतय पूर्णोपमा होइछ ।

उदाहरण :

होएत शम्भु सन ओ उदार
विद्याक प्रजापति सम अगार ।
सुरगुरुकेँ बु□क बलेँ जीति
शुक्रहुकेँ देत सिखाए नीति ॥ (एकावली-परिणय)

एतय पद्यक प्रथम चरणमे शम्भु—उपमान, सन—वाचक, ओ—उपमेय एवं उदार—साधर्म्य थिक, तेँ पूर्णोपमा भेल ।

लुप्तोपमा

जतय उपमाक कोनो अंग लुप्त रहय से लुप्तोपमा कहबैछ । एकर निम्नलिखित आठ भेद अछि—

1. वाचक लुप्ता 2. धर्म लुप्ता 3. धर्मवाचक लुप्ता 4. वाचकोपमेय लुप्ता 5. उपमान लुप्ता 6. वाचकोपमान लुप्ता 7. धर्मोपमान लुप्ता 8. धर्मोपमानवाचक लुप्ता ।

एतदतिरिक्त आओर दूटा भेद मान्य अछि, जे थिक—

9. उपमेय लुप्ता 10. धर्मोपमेय लुप्ता ।

1. वाचक लुप्ता

जतय केवल वाचक लुप्त रहय किन्तु अन्य सभ तत्त्व वर्त्तमान रहय, वाचक लुप्ता लुप्तोपमा कहबैछ; यथा—

हम हिनक एहि कृति **अलंकार-भास्कर**क संवर्धना करैत छी । जतए धरि एहि ग्रंथक उपयोगिताक प्रसंग अछि, मुक्त स्वरसँ कहब जे ई पुस्तक उच्च शिक्षाक प्रत्येक स्तरपर तँ उपयोगी होएबे करत, सामान्य ज्ञान रखनिहार विद्यालयीय छात्र लोकनिक हेतु सेहो न्यूनाधिक रूपसँ सहायक होएत ।

एही शब्दमे एहि ग्रंथक रचयिता डॉ० रमण झाकेँ हम आशीर्वाद दैत छियनि आ साधुवाद एहू हेतुएँ दैत छियनि जे एहिसँ पूर्व कतोक अलंकारक पुस्तक मैथिली भाषामे प्रकाशित भए चुकल छल, किन्तु जाहि प्रकारक सर्वांगीणता एहिमे देखि सकलहुँ से निश्चय हिनक सचेष्ट प्रयासक प्रतिफल थीक । एही तरहेँ ई मिथिला मैथिलीक अन्वेष्टा, अध्यापक ओ अध्ययनरत छात्रक दृष्टिएँ रचना कए मैथिलीक भंडारकेँ समृ□ करैत रहथु— यैह हमर कामना अछि— **शुभास्ते सन्तु पन्थान: ।**

फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा
दिनाङ्क 18 मार्च 2003

प्राचार्य एवं अध्यक्ष
विश्वविद्यालय मैथिली विभाग
ल०ना०मिथिला विश्वविद्यालय
कामेश्वरनगर, दरभङ्गा ।

प्रसंगवश

काव्य एक वस्तु थिक, काव्यशास्त्र दोसर। काव्यक रचयिता कवि कहबैत छथि, काव्यशास्त्रक रचयिता आचार्य। काव्य जँ भोज्य पदार्थ थिक तँ काव्यशास्त्र थिक जीह। सकल गुणवती रूपवती सुसज्जिता वनिता जँ मानी काव्यकेँ, तँ काव्यशास्त्रकेँ सुधीक विवेकशील आँखि मानऽ पड़त। कवि जँ कल्पनाक पाँखिपर उड़निहार द्रुतगामी पक्षी थिकथि तँ आचार्य हुनक सृष्टिक रंग-रूप-स्वर-संस्कारक सूक्ष्म लक्ष्यी।

गुणक महत्त्व तखनहिँ जँ गुणपारखी हो। जँ जौहरी नहि रहैत तँ हीरा पन्ना पोखराजकेँ चिन्हैत के? ओकर मूल्य अँकैत के? ओकर शु□ता परखैत के? ओकर गुणसँ परिचित करबैत के? बिनु बुझनिहारक लेल तँ ओ पाथर आ ई पाथर एके।

काव्यशास्त्री जौहरीए थिकाह। तखन एतबा भेद अवश्य जे ओहि जौहरीक हाथमे ठोस पदार्थ रहैत छनि, एहि जौहरीक हाथमे ठोस किछु नहि रहैत छनि, पदार्थ (पद आ अर्थ) मात्र। तेँ, हुनक नजरि आ हाथ काज करैत छनि, हिनक हृदय आ माथ काज करैत छनि।

संस्कृत साहित्यमे काव्य आ काव्यशास्त्र दुनू समाने प्रसि□। जहिना समृ□ कवि-परम्परा, तहिना सि□-उत्कृष्ट आचार्य-परम्परा। आचार्य लोकनिमे दृष्टिभेद आ रुचिभिन्नताक कारणेँ कसौटियो अनेक बनैत गेल। काव्यक उत्कृष्टताक जाँच— उद्देश्य तँ सभक समान छलनि, मुदा अनेक गुणमे सर्वोत्कृष्ट कोन थिक, एहिपर मतभिन्नता देखबामे अबैत अछि। अपन-अपन दृष्टि, अपन-अपन रुचि। एही रुचिभिन्नताक कारणेँ सहस्राब्दाधिक अवधिमे काव्यशास्त्रक विस्तार होइत गेल। फलतः आइ एकर (रस-अलंकार-गुण-ध्वनि-रीतिक) पंचसुगन्धि दिग्दिगन्तमे पसरि रहल अछि।

किछु आचार्य तँ अलंकारेकेँ काव्यक सर्वप्रधान अंग मानलनि अछि। मुख्य अंग तँ एकरा प्रायः सभ स्वीकार कयने छथि। अलंकारक अर्थ होइछ गहना। गहना ओहुना आकर्षी, किन्तु ओकर सार्थकता तखनहिँ जखन ओ पहिरल जाय। ओकरा पहिरलासँ पहिरनिहारिक रूप निखरि जाइछ। ओ बेसी सुन्दर लगैछ। देखनिहारो मुग्ध भऽ जाइत अछि।

ई सामान्य प्रक्रिया भेल। मुदा, काव्यक जौहरी जे अछि से सहजेँ चैन नहि होयत। ओकर दिमाग चलऽ लगतैक— कोन गहना पहिरने अछि? कय गोट गहना छैक? तकर नाम की-की? असली छैक की नकली? जे-जे गहना ओ पहिरने अछि, से ओहि-ओहि अंगक उपयुक्त छैक की नहि? अंगक अनुपातमे छैक की नहि? छजैत छैक की नहि? आ कि नारी अनारी जकाँ पहिरने अछि? ई तँ ने जे गहने अंगपर भारी पड़ि गेल छैक? कानसँ भारी झुमके तँ ने छैक? ततबे नहि, असल वस्तु थिकैक सौन्दर्यवृ□— तकरा कोन गहना कतेक अंशमे बढ़ा रहल छैक, अथवा कि नहि बढ़ा रहल छैक, अथवा कि घटाइए रहलैक अछि। बात एतहु खतम नहि होइत छैक। जौहरी ओकर आर निकट होइत अछि। अनुभव करैत अछि ओकर

अर्थालंकार

8— उपमा

जतय उपमेय तथा उपमानमे भेद भेलोपर सादृश्यक कारण समानता बुझाइछ, उपमालङ्कार कहबैछ।

उपमाक शाब्दिक अर्थ होइछ समानता। उपमा शब्द 'मा' मे 'उप' उपसर्ग लगलासँ बनल अछि। 'उप'क अर्थ होइत अछि लग आ 'मा' क तौलब। अर्थात् एहि अलङ्कारमे दूटा वस्तुकेँ लगमे राखि कए तौलल जाइत अछि। ई सादृश्यमूलक अलङ्कार वा समस्त अर्थालङ्कारक मूल थिक। एकर काज थिक दू पदार्थमे समानता देखायब।

उपमाक लक्षणक प्रसङ्ग विभिन्न विद्वान लोकनि एकहि निष्कर्षपर पहुँचैत छथि, किन्तु किछु-ने-किछु अन्तर भेटबे करत। एकर स्वरूप निर्माणमे आचार्य लोकनि सादृश्य, साम्य एवं साधर्म्यमेसँ कोनो एक शब्दक प्रयोग अवश्य कयलनि अछि। भरत, दण्डी, जयदेव एवं जगन्नाथ 'सादृश्य'क प्रयोग कयलनि अछि; वामन, भामह, विश्वनाथ तथा वाग्भट 'साम्य'क एवं उद्भट, मम्मट, रुय्यक आदि 'साधर्म्य'क। एतदतिरिक्त अन्य आलङ्कारिको लोकनि एकरे समानार्थक शब्दक प्रयोग कयलनि अछि सयह बुझना जाइत अछि। क्यो-क्यो तऽ अन्य अलङ्कारसँ एकर विभेद उपस्थित करएबला शब्दक प्रयोग सेहो कयलनि अछि। क्यो-क्यो चमत्कार वा तत्सदृश शब्दक प्रयोग कयलनि अछि कारण जे चमत्कारे तऽ अलंकारक प्राण थिक।

उपमाक तत्त्व

उपमाक चारिटा तत्त्व अछि— उपमेय, उपमान, वाचक एवं साधर्म्य। जकर वर्णन कयल जाय से थिक— उपमेय। एकरा वर्ण्य विषय, प्रस्तुत एवं प्राकरणिक सेहो कहल जाइछ। जाहिसँ उपमा देल जाइछ से थिक— उपमान। एकरा अवर्ण्य, अप्रस्तुत एवं विषयी सेहो कहल जाइछ। जाहि गुणक कारण उपमेयक तुलना उपमानसँ कयल जाइछ से थिक— साधारण धर्म तथा जे उपमेय एवं उपमानक समता देखयबामे सहायक होइछ से थिक— वाचक। उदाहरणार्थ— 'सीता चन्द्रमा सन सुन्दरि छथि'। एहि वाक्यमे सीता— उपमेय, चन्द्रमा-उपमान, सुन्दरि— साधारण धर्म एवं सन—वाचक थिक।

लक्षण :

1. साम्यं वाच्यमवैधर्म्यं वाक्यैक्यमुपमा द्वयोः (सा० द०)

जतय एकहि वाक्यमे उपमानोपमेय वैधर्म्यरहित साम्य हो ओतय उपमालङ्कार कहबैछ।

2. उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयोः

हंसीव कृष्ण ते कीर्त्तिः स्वर्गङ्गामवगाहते॥ (कुव०)

जतय उपमान तथा उपमेयक समानतासँ विशिष्ट शोभा होइत अछि, उपमा अलङ्कार

पुनरुक्तिप्रकाश एवं वीप्सा

पुनरुक्तिप्रकाशमे शब्दक आवृत्ति चारुता अनबाले होइत अछि किन्तु वीप्सामे प्रभावोत्पादक बनयबाले । पुनरुक्तिप्रकाशमे एक शब्दक अनेक बेरि आवृत्ति होइत छैक, वीप्सामे मात्र दू बेरि ।

पुनरुक्तिप्रकाश एवं पुनरुक्तवदाभास

पुनरुक्तिप्रकाशमे वस्तुतः पुनरुक्ति रहैत छैक एवं पुनरुक्तवदाभासमे मात्र ओकर आभासेटा । अर्थ लगलापर पुनरुक्ति नहि बुझाइछ ।

ι

स्वभावक, ओकर व्यवहारक । नीक स्वभाव आ नीक व्यवहार सेहो गहने थिकैक मनुष्यक । ई गहना मनक आँखिसँ देखल जाइछ । एकर सौन्दर्य अपन फराके होइछ । ककरो ई गहना रहैत छैक, ककरो ओ गहना रहैत छैक, ककरो कोनो ने रहैत छैक, ककरो दुनू रहैत छैक । बात ई नहि छैक जे क्यो आओत, पूछत, तखन कहबैक । असल बात ई थिकैक जे अहाँ अपने बुझैत छिऐक की नहि ? जँ बुझैत छिऐक तखनहिँ अहाँ असली सौन्दर्यक मर्मकेँ जानि सकैत छी । नहि बुझैत छिऐक, आ सौन्दर्यक मर्म बुझबाक उत्कंठा अछि, तँ कोनो जानकारसँ, एहि विषयक पण्डितसँ, जाकऽ सीखऽ पड़त । काव्यक जौहरीसँ सम्पर्क साधऽ पड़त । ओकर पाहि लागऽ पड़त । पोथा उनटाबऽ पड़त ।

अलंकारशास्त्र एही विषयक पोथी थिक । काव्यसौन्दर्यक मर्मकेँ खोलिकऽ राखि दैत अछि ई । पदार्थ (पद आ अर्थ)मे सन्निहित तत्त्वक अन्वेषण करैत अछि आ लोककेँ शिक्षित करैत अछि ।

हमरा होइत अछि, मैथिलीक पण्डित अधिक आलंकारिके छथि । काव्यशास्त्रक एहि अंगपर जतेक हुनकासभक ध्यान गेलनि अछि ततेक आन अंगपर नहि । केवल अलंकारेपर, हमर जनतवमे, मैथिलीमे कमसँ कम सात गोट ग्रन्थ पूर्वप्रकाशित अछि, जाहिमे किछु प्रख्यात अछि । कविवर सीतारामझाक **अलंकारदर्पण,** पं० वेदानन्द झा (कोइलखनिवासी निविष्ट कवि, कविवर सीतारामझाक समकालीन, तत्कालीन पत्र-पत्रिकामे कविता प्रकाशित, संस्कृतक विद्वान्, मैथिलीक शिक्षक)क **अलंकृतिबोध** तथा आचार्य महाकवि सुरेन्द्रझा 'सुमन'क **अलंकारमालिका** काव्यमय ग्रन्थ थिक । पहिल दुनूमे गद्यो अछि तँ से गौण अछि। उक्त तीनू विद्वान् स्वयं श्रेष्ठ कवियो रहथि, काव्यमूर्तियो गढ़थि, ओकरा अलंकृतो करथि, पुनि तकर पर्यवेक्षण-मीमांसो करथि । अन्य चारि जन विद्वान् पं० रामचन्द्र मिश्र (**चन्द्राभरण**), पं० दामोदर झा (**अलंकार-कमलाकर**), महावैयाकरण पं० दीनबन्धु झा (**अलंकार-सागर**) तथा आचार्य रमानाथ झा (**अलंकार-प्रवेश**)केँ कविप्रसि□ नहि रहनि । ओलोकनि काव्यमर्मज्ञ रहथि, काव्यक पर्यवेक्षण-मीमांसा करथि तथा जिज्ञासुकेँ नीक जकाँ बुझा देथि। हुनका लोकनिक ग्रन्थ एहि बातक प्रमाण थिक ।

एही शृंखलाक अद्यतन कड़ी थिक (हमरा जनैत आठम) **अलंकार-भास्कर** । ई शु□ मैथिली विद्वानक लिखल ग्रन्थ थिक । उक्त सातो जन संस्कृतक विद्वान् रहथि, रमानाथ बाबू अंगरेजीक विद्वान् रहथि, तैयो संस्कृतोक विद्वान् कम नहि रहथि । मुदा, अलंकार-भास्करक रचयिता **डॉ० रमण झा** अध्येता तँ रहलाह अछि संस्कृतोक, अंगरेजियोक, मुदा विद्वान् छथि मैथिलीक । विधिवत् पढ़लनि मैथिली आ विश्वविद्यालयमे पढ़बितो छथि मैथिली ।

मैथिलीक अध्येताकेँ, उच्च वर्गक छात्रकेँ, अलंकार बड़ कठिन बुझि पड़ैत छैक । संस्कृतमे जे आकर ग्रन्थसभ छैक, ताहिमे अवगाहनक ओकरा सामर्थ्य नहि । मैथिलीमे जे सभ छैक, से की तँ आब उपलब्ध नहि छैक, अथवा जे छैको, ताहिमे तेहन संक्षेपमे, सूत्रब□, कहल गेल छैक जे सामान्य जनक हृदयमे खचित नहि होइत छैक । ओकरा भाष्य चाहिऐक । नवका गुरुओ लोकनि भरिसक रस-अलंकार-गुण-ध्वनि-रीतिसँ प्रीति नहिए रखैत छथि,

किछु तँ तेहन भयभीत भऽ जाइत छथि जे सात लग्गा दूरे रहऽ चाहैत छथि । एहना स्थितिमे ई शास्त्र आगाँ बढ़त कोना ? नवीन पीढ़ी अलंकारक झंकारकेँ अंगीकार नहि करत तँ काव्यशास्त्रक अगिला सीढ़ीपर चढ़त कोना ?

यैह चिन्ता मित्रवर रमणजीकेँ एहि ग्रन्थक प्रणयनक प्रेरणा रहल होयतनि । उच्चतर अध्ययन-अवधिमे काव्यशास्त्रक प्रति अनुरक्ति विशेष रहनि । ओ हिनका अपना दिस खिचलक आ ओहि दिस हिनक मन रमैत चल गेलनि, ई ओकर रसजालमे बझैत चल गेलाह । काव्यशास्त्रक रमणीय उपवनमे रमणजी भ्रमण करऽ लगलाह । मूल संस्कृत ग्रन्थ देखलनि, ओकर टीका देखलनि, मैथिलीमे लिखल अलंकारग्रन्थसभ पढ़लनि, धुनलनि आ गुनलनि । साहित्यक वर्तमान लहरिमे भासल जाइत समाजमे, जाहिमे परम्पराकेँ डुबा देबे इष्ट छैक, नवीन पीढ़ीमे, शु मैथिलीक अध्येता ओ प्राध्यापक, रमणजीकेँ छोड़ि, क्यो हठात् नजरिपर नहि अबैत छथि जनिका काव्यशास्त्र, विशेषतः अलंकारशास्त्र, एतेक भीजल होइनि । हर्ष अछि जे रमणजी अपन एहि विषयक ज्ञानकेँ लिपिब कऽ लेलनि आ आइ तकरा ग्रन्थरूपमे प्रस्तुत कऽ मैथिली साहित्यक उपकार कयलनि अछि, मैथिली भण्डारक काव्यशास्त्रवला खानाकेँ, जे कने खलिआयल अछि, यथासाध्य भरलनि अछि । एहि हेतु ई अवश्य धन्यवादक पात्र थिकाह ।

एहि ग्रन्थमे शब्द, अर्थ, शब्दार्थ तीनू कोटिक एक सय चारि गोट अलंकारक उल्लेख अछि, पुनि तकर शाखा-प्रशाखा सभ अछि । सभक परिभाषा, लक्षण आ भेदकेँ सोदाहरण बुझाओल गेल अछि । उदाहरण विद्यापति गोविन्ददास सीतारामझा प्रभृति विख्यात कविक पंक्तिसँ तथा एकावलीपरिणय राधाविरह अलंकारमालिका प्रभृति प्रसि पोथीक अंशसँ एवं किछु ग्रन्थकर्ताक स्वरचितो पद्योक्तिसँ सज्जित अछि । ध्यातव्य जे रमणजी कथाकार आ कवियो छथि आ दुनू विधामे हिनक पोथियो प्रकाशित छनि । परस्पर निकटवर्ती अलंकारमे सूक्ष्म भेदकेँ सेहो ई ठामहि फरिछबैत चलैत छथि । संक्षेपमे यैह कहब जे एहि 'भास्कर'क किरणचय चमकिते कमसँ कम मैथिलीक 'अलंकार' संसार एक बेर फेर अन्धकारसँ प्रकाशमे आबि गेल अछि आ मैथिलीक जिज्ञासु अध्येता जखन चाहथि, सहजेँ ओकरा देखि-परेखि सकैत छथि, बुझि-सुझि सकैत छथि ।

हम अपन विद्वान् सहकर्मा, समानधर्मा, काव्यकर्मी, अलंकारमर्मी डॉ० रमणझाजीकेँ एहन रमणीय आ संग्रहणीय ग्रन्थक प्रणयन-प्रकाशन लेल सस्नेह अभिनन्दन करैत छियनि आ आशा करैत छी जे आगुओ हिनक 'भास्कर' काव्यशास्त्रक आनो पक्षकेँ एहने दक्षतासँ प्रकाशित करत ।

दरभंगा
फगुआ (रंगक्रीड़ा)
19 मार्च 2003

उदाहरण :

1. **जय-जय भैरवि असुर भयाउनि**
   पशुपति भामिनि माया । (विद्यापति)

एतय 'जय'क आवृत्तिसँ वीप्सालङ्कार अछि ।

2. **पड़ा-पड़ा बड़ा-बड़ा**
   गृहाट्ट जारि देलकौ ।
   विदेह कन्यका विपत्ति
   जानि कानि लेलकौ ॥ (चन्दा झा)

एतय 'पड़ा' एवं 'बड़ा'क आवृत्तिसँ वीप्सालङ्कार भेल ।

वीप्सालङ्कार एवं यमक

वीप्सा एवं यमक दुनूमे शब्दक आवृत्ति होइत अछि किन्तु यमकमे शब्दावृत्ति भिन्नार्थक प्रतिपादन लए होइत अछि जखनकि वीप्सामे पूर्व कथनक पुष्टीकरणक हेतु। यमकमे अनेकार्थबोधक शब्दक प्रयोग कयल जाइत अछि किन्तु वीप्सामे एकार्थबोधक शब्दक । यैह कारण थिक जे यमकक अर्थ बुझवाले विद्वत्ताक प्रयोजन छैक जखनकि वीप्साक अर्थ सकल साधारणो जानि सकैछ । यमकमे एक शब्दक अनेक बेरि आवृत्ति भए सकैछ किन्तु वीप्सामे मात्र दू बेरि । तँ कहल जाइत अछि 'वीप्सायां द्विरुक्तिः' ।

7— पुनरुक्तिप्रकाश

जतय अभीष्ट अर्थकेँ सुन्दर बनयबाक हेतु शब्दक अनेक बेरि आवृत्ति होइछ ओतय पुनरुक्तिप्रकाश अलङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारकेँ संस्कृतक आचार्यगण प्रायः नहि मानैत छथि तँ ओ लोकनि एकर उल्लेखो नहि कयलनि अछि । पुनरुक्तिक अर्थ होइछ दोहरायब, अर्थात् उक्तिकेँ चमत्कारक बनयबाले शब्दावृत्ति कयल जाइछ । एहि अलङ्कारक सर्वप्रथम प्रयोक्ता आचार्य भोज थिकाह जे अपन 'सरस्वती कण्ठाभरण'मे एकरा अनुप्रासक अन्तर्गत रखने छथि ।

उदाहरण :

1. **फूसि सभटा थीक**
   थिक महा जंजाल
   फूसि ब्रह्मा-विष्णु दश दिक्पाल
   फूसि श्रुति-स्मृति
   फूसि शास्त्र-पुराण
   फूसि व्रत-उपवास
   फूसि थिक राजा सभक इतिहास । (चित्रा)

एतय 'फूसि' शब्दक अनेक बेरि आवृत्तिसँ पुनरुक्तिप्रकाश अलङ्कार भेल ।

एहि अलङ्कारकेँ शब्दालङ्कार कहल जाय वा अर्थालङ्कार, एहि विषयपर संस्कृत–आचार्य लोकनिमे मतैक्य नहि अछि । साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ एकरा उभयालङ्कार मानैत छथि— **वस्तुतोयमुभयालङ्कारः** । शोभाकर मित्र एकर शब्द–वैचित्र्यपर दृष्टिनिक्षेप करैत एकरा शब्दाङ्कार मानब सएह उपयुक्त बुझैत छथि । अर्थमे पुनरुक्तिक आभास होयब एहि अलङ्कारक प्राण थिक तेँ अर्थहिक कारण ई चमत्कारक होइछ । यैह कारण थिक जे आचार्य रुय्यक, जयरथ आदि एकरा अर्थालङ्कार कहैत छथि । काव्यप्रकाशकार मम्मटाचार्य अन्वयव्यतिरेकक आधारपर एकरा उभयालङ्कार सि□ कयलनि अछि ।

लक्षण :

पुनरुक्तवदाभासो विभिन्नाकार शब्दगा । (का०प्र०)

भिन्न आकारक शब्द सभमे पुनरुक्तिक प्रतीतिकेँ पुनरुक्तवदाभास अलङ्कार कहल जाइछ ।

उदाहरण :

हे देव ! दयासागर ! रमेश !
दर्शन दए कएलहुँ दूरि क्लेश ।
कत तुच्छ हमर तप अणु समान ।
ओ ई फल कत पर्वत महान !! (एकावली–परिणय)

एतय 'देव', 'दयासागर' एवं 'रमेश' तीनूसँ एके अर्थ 'भगवान विष्णु' बुझल जयबाक कारण पुनरुक्तिक प्रतीति होइत अछि; किन्तु अर्थबोधक पश्चात् पुनरुक्तिक निराकरण भए जाइत अछि कारण जे देव अर्थात् देवता, दयासागर— दयाक समुद्र एवं रमेश— लक्ष्मीक पति— एहन भगवान विष्णुक दर्शनसँ राजा तुर्वसुक क्लेश दूर भए गेल ।

यमक एवं पुनरुक्तवदाभास

दुनूमे भिन्नार्थक शब्दक प्रयोग होइत अछि किन्तु यमकमे भिन्नार्थक शब्दक आकार समान होइत अछि, जखनकि पुनरुक्तवदाभासमे भिन्न (असमान) ।

6— वीप्सा

जखन दुख, सुख, क्रोध, पीड़ा, घृणा इत्यादिक प्रकटीकरणक हेतु तथा ओकरा प्रभावकारी बनयबाक हेतु शब्दक आवृत्ति कयल जाइत अछि तऽ वीप्सा अलंकार होइछ ।

पूर्वाचार्य लोकनि अपन लक्षणग्रन्थमे एहि अलङ्कारक नामोल्लेखो तक नहि कयने छथि। एकर प्रतिष्ठाता भेलाह हिन्दी साहित्यक कवि भिखारीदास तथा बादमे कतोक विद्वान लोकनि एकर समर्थक भेलाह । आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा सेहो परिभाषा दैत एकरा स्वीकार कयलनि अछि।

ई अलङ्कार शब्दावृत्ति भेलाक कारण सुनबामे सुमधुर लगैत अछि, प्रतिपाद्य विषयकेँ अधिक प्रभावोत्पादक बना दैत अछि तथा कतहु–कतहु कविकेँ छन्द–पूर्त्ति करबामे सेहो सहायक होइत छनि ।

लेखकीय

सौन्दर्यमलङ्कारः - अर्थात् सौन्दर्य अलङ्कार थिक । सौन्दर्य ककरा नहि आकृष्ट करैछ ? अंग्रेजीमे Keats आ मैथिलीमे कविकोकिल तऽ सौन्दर्योपासकक रूपमे प्रख्याते छथि । ई सौन्दर्य सतत आनन्द प्रदान कयनिहार थिक— A thing of beauty is joy for ever. जहिना मनुष्य अलङ्कार धारण कए मानव मनकेँ विमोहित करए चाहैत अछि तहिना काव्य सेहो अलङ्कारत्वक विधानसँ सहृदयक हृदयकेँ आह्लादित आ मनकेँ विमुग्ध कए दैत अछि ।

वस्तुतः अलङ्कारक जन्म कहिया भेल से कहब कठिन । काव्यशास्त्रीय आधार पर तऽ आद्य उपलब्ध ग्रंथ थिक भरतमुनिक नाट्यशास्त्र, जाहिमे मात्र चारि गोट अलङ्कारक चर्चा कएल गेल अछि— **उपमा दीपकं चैव रूपकं यमकं तथा,** किन्तु अलङ्कार बीज रूपमे अति प्राचीन कालहिसँ विद्यमान छल, भलहिँ लोककेँ ओकरासँ परिचय–पात नहि रहल हो ।

अलङ्कार थिक उक्तिक वैचित्र्य । एकर प्रयोग विद्वानेटा करैत छथि से नहि, निरक्षरो व्यक्तिक गप्प–गप्पमे अलङ्कारक छटा छिटकैत भेटत । गाम घरमे बूढ़ पुरान स्त्रीगण सबकेँ देखबनि जे बच्चाकेँ तेलसँ मालिश कए हाथ पैर मोड़ैत कहैत छथि— 'ईल सन, कील सन, धोबियाक पाट सन, कुम्हराक चाक सन.....' इत्यादि । केहन विलक्षण वाक्य अछि ! केहन उपमा आ अनुप्रासक छटा छिटकैत अछि ! मुदा वक्ता अन्यमनस्क भावसँ बजैत छथि । प्रो० हरिमोहन झा चर्चरीमे संकलित अलङ्कार–शिक्षाक क्रममे किछु अनपढ़ स्त्रीगण लोकनिक झगड़ाक झलकी प्रस्तुत करैत छथि, जे कविकल्पित नहि, स्वतःस्फूर्त आ स्वाभाविक अछि । मिथिलाक ललना लोकनि अपनामे झगड़ो करैत काल अलङ्कारक झड़ी लगाए दैत छथि । हुनकहि शब्दमे झगड़ाक किछु अंश एतय उ□ृत अछि—

एक जनी— ऐ ! ओल सन कबकब बोल किएक बजैत छी ? - पूर्णोपमा ।
दोसर— अहुँक बात तऽ विषे सन होइये— लुप्तोपमा ।
तेसर— जेहने ओ छथि तेहने अहाँ छी आ जेहने अहाँ छी तेहने ओ छथि— उपमेयोपमा।
चारिम टिपलनि— अहाँ सन अहीं छी — अनन्वय ।
अन्य— बाप रे बाप ! दिन राति गदहकिच्चनि !! ई घर तऽ मछहट्टोसँ बढ़ि गेल— व्यतिरेक ।
दोसर— अहाँ लोकनिक मुहमे लगाम नहि अछि ? जीभ छी कि चरखी ? — संदेह ।
अन्य— एहि घरमे कम्मे के ? लंकामे बहुत छोट से उनचास हाथ — लोकोक्ति ।

हुनका लोकनिकेँ अलङ्कारक कोन कथा जे सामान्य वर्णमालोक ज्ञान नहि छनि । आ ई परम्परारूपसँ कतोक दिनसँ आबि रहल अछि । वेद, पुराण, उपनिषद्, रामायण, महाभारत आदि महान् ग्रंथहुमे एकर प्रचुर प्रयोग भेटैत अछि ।

अलङ्कारक स्वरूप स्थिर करैत आचार्य मम्मट कहैत छथि जे अनुप्रास उपमा आदि

अलङ्कार माला आदि आभूषणहि जकाँ शोभाव[?]क तत्त्व थिक— **हारादिवदलङ्कारास्तेऽनुप्रासोपमादयः** । दण्डी तऽ आओरो सरल परिभाषा दैत एकरा शोभाकारक धर्म मानैत छथि— **काव्यशोभाकरान्धर्मानलंकारान्प्रचक्षते** । कोनहुँ तरहेँ अलङ्कार काव्यक चमत्कारक तत्त्व थिक । अग्निपुराणकार तऽ अलङ्काररहित काव्यकेँ विधवा सदृश कहैत छथि — **अलङ्कार रहिता विधवेव सरस्वती** । आचार्य जयदेव तऽ जेना आओरो आक्रोशित बुझाइत छथि । हुनका विचारेँ तऽ जे अलङ्काररहित काव्यकेँ काव्य मानैत छथि, ओ आगियोकेँ अनुष्ण किएक ने मानि लैत छथि ? हुनकहि शब्दमे—

अङ्गी करोति यः काव्यं शब्दार्थावनलंकृती ।
असौ न मन्यते कस्मादनुष्णमनलंकृती ॥

अलङ्कारक संख्याक विषयमे हम यैह कहब जे भरत मुनिक चारि अलङ्कारक उद्‌भावनाक पश्चात् एकर विकास तीव्र गतिएँ भेल । परिणामतः संस्कृत साहित्यक नवीनतम उपलब्ध ग्रंथ **कुवलयानन्द**मे एकर संख्या 125 भए गेल । किन्तु हमरा हिसाबे ओ पुरौना मात्र थिक । मैथिलीमे सर्वाधिक अलंकारक संख्या अछि प्रो० सुरेन्द्र झा 'सुमन'क **अलंकारमालिका**मे। किन्तु ओहो प्रायः माला बनयबाक उद्देश्यसँ 108 अलंकारक गुम्फन कयने छथि । हँ, एतबा तऽ निर्विवाद जे आब मूल अलङ्कारक संख्या शताधिक भए चुकल अछि, आ पुनः भेदोपभेदक तऽ गप्पे की ?

आब अलङ्कारक संख्या ततबा बढ़ि गेलैक जे अध्ययनक सुविधाक हेतु एकर वर्गीकरणक आवश्यकता भेलैक । सर्वप्रथम अलङ्कारकेँ तीन भागमे बाँटल गेल अछि— 1. शब्दालङ्कार 2. अर्थालङ्कार 3. उभयालङ्कार वा शब्दार्थालङ्कार । पुनः अर्थालङ्कारकेँ निम्नलिखित विभेद कएल गेल—1. साधर्म्यमूलक 2. विरोधमूलक 3. श्रृंखलामूलक 4. गूढ़ार्थप्रतीतिमूलक 5. गोपनमूलक 6. लोकन्यायमूलक 7. अतिशयमूलक 8. रसवदादिमूलक ।

उपमाकेँ अर्थालङ्कारक बीज तत्त्व मानल गेल अछि । एकर विलक्षणता ई अछि जे यदि उक्तिकेँ कनियेँ टेढ़ कए दिऐक तऽ अलङ्कार बदलि जायत; यथा—

चन्द्र सन मुख- उपमा ।
मुख सन मुखे - अनन्वय ।
चन्द्र तपबैत छथि - विभावना ।
मुखचन्द्रक सम्मुखहु कुच-कुवलय प्रस्फुटित - विशेषोक्ति ।
मुख तुल्य चन्द्र - प्रतीप ।
चन्द्र सन मुख आ मुख सन चन्द्र - उपमेयोपमा ।
मुख तुल्य चन्द्र किन्तु ओ कलङ्की - व्यतिरेक ।
चन्द्र देखि अहाँक मुखक स्मरण - स्मरण ।
मुख-चन्द्र देखि मन प्रसन्न भेल - रूपक ।
मुख-चन्द्रसँ ताप शान्त भेल — परिणाम ।

अलङ्कारशास्त्रमे विशेष रुचि रहबाक कारण हम ई पोथी 1980 ई० मे लिखलहुँ । एहिमे हम प्रसि[?] संस्कृत ओ मैथिलीक आलङ्कारिक लोकनिक लक्षणक व्याख्या करैत

उदाहरण :

हे आली ! पी पाबि के लूटल अनुपम चैन ।
की दर से पीपा बिके हमहुँ चहै छी लेन ॥

उक्त पंक्तिमे एक सखी दोसर सखीसँ कहैत छथि जे 'पी' अर्थात् स्वामीकेँ पाबि कए अहाँ अनुपम आनन्दक अनुभव कयलहुँ; किन्तु दोसर सखी जवाब दैत छथि जे 'पीपा' अर्थात् वर्त्तन–विशेषक की दाम छैक, हमरो लेबाक अछि ।

एतय पूर्व पदमे 'पी' एवं 'पाबि' अलग–अलग शब्द भिन्नार्थक प्रतिपादन करैत अछि जकरा श्रोता अन्यार्थक ग्रहणक हेतु तोड़ि कए 'पीपा' एवं 'बिके' बना दैत अछि । अतः ई सभङ्गपद श्लेष वक्रोक्ति भेल ।

(2) काकु वक्रोक्ति

काकु वक्रोक्ति कण्ठ–ध्वनिक विकारसँ उत्पन्न होइत अछि । मात्र ध्वनिक परिवर्त्तनसँ ई सम्भव भऽ जाइत अछि । उदाहरणस्वरूप यदि ककरो कहल जाय जे अपनेक गप्प कतहु असत्य हो, अपने तऽ महान पण्डित छियै । ध्वनिसँ स्पष्ट भऽ जाइछ जे ओ पण्डित नहि महामूर्ख छथि ।

उदाहरण :

कदमक फूल मोहन नहि देल ।
देलेँ तँ मोर की कए लेल ॥
हरि नहि कहलहुँ हम ई बात ।
कहलहुँ तेँ की जाएब कात ॥ (अ० क०)

एतय कण्ठ–ध्वनि विकारसँ काकु वक्रोक्ति भेल ।

श्लेष एवं वक्रोक्ति

श्लेषात्मक वाक्यसँ सतत दू वा दू सँ अधिक अर्थ निष्पन्न होइत अछि जखनकि वक्रोक्तिमे श्रोता मात्र एकहिटा अर्थ ग्रहण करैछ जे वक्ताक अभिप्रायसँ भिन्न रहैत अछि । श्लेषमे द्वयार्थकबोधक शब्द रहब आवश्यक, जखनकि वक्रोक्तिमे ई आवश्यक नहि अछि । वक्रोक्ति मात्र ध्वनिक परिवर्त्तनोसँ सम्भव भए सकैत अछि ।

5— पुनरुक्तवदाभास

जतय वस्तुतः पुनरुक्ति नहि भए पुनरुक्तिक आभास मात्र होअए ओतय पुनरुक्तवदाभास अलंकार होइछ ।

जेना नामहिसँ स्पष्ट अछि जे एहि अलंकारमे पुनरुक्तिक आभासेटा भेटत । ऊपर–ऊपरसँ देखलापर तँ पुनरुक्ति बुझायत किन्तु गम्भीरतापूर्वक विचारला सन्ता स्पष्ट भए जायत जे एकार्थक बोधक शब्द भिन्नार्थक प्रतिपादन हेतु प्रयुक्त भेल अछि । तात्पर्य ई जे एहिमे पुनरुक्तिक निराकरण होयब आवश्यक ।

वक्रोक्ति दू शब्दक मेलसँ बनल अछि— वक्र एवं उक्ति । वक्रक अर्थ होइछ टेढ़ एवं उक्तिक— कथन । एहिमे वक्ता द्वारा भिन्न अभिप्रायसँ कहल गेल वाक्यक अर्थ श्रोता भिन्नरूपेँ लगा लैत छथि ।

लक्षण :

1. **अन्यस्यान्यार्थकं वाक्यमन्यथा योजयेद्यदि ।**
अन्य: श्लेषेण काक्वा वा सा वक्रोक्तिस्ततोद्विधा ॥ (सा० द०)

ककरो द्वारा कोनो अर्थक प्रति कहल वचनकेँ जखन श्लेष वा काकुक द्वारा अन्य अर्थमे लगा देल जाइत अछि तऽ वक्रोक्ति अलंकार कहबैत अछि ।

2. **आनक बातक आन जे आन अर्थ कए लैछ ।**
तकरे पुनि उत्तर जहाँ तहँ वक्रोक्ति कहैछ ॥ (अ० क०)

अन्यार्थक वाक्यक यदि श्रोता अन्य अर्थ बूझि जाथि तऽ वक्रोक्ति अलंकार होइछ ।

भेद :

वक्रोक्तिक दू भेद अछि—

(1) श्लेष वक्रोक्ति (2) काकु वक्रोक्ति ।

(1) श्लेष वक्रोक्ति

जतय शिलष्ट शब्दक द्वारा वक्ताक अन्यार्थक श्रोता अन्य अर्थ ग्रहण कए लैत अछि ओतय श्लेष वक्रोक्ति कहबैत अछि । वक्रोक्ति मुख्यत: श्लेषेक कारण चमत्कारक होइत अछि ।

एकर पुन: दू भेद कएल जा सकैत अछि— (अ) अभङ्गपद श्लेष वक्रोक्ति (आ) सभङ्गपद श्लेष वक्रोक्ति ।

(अ) अभङ्गपद श्लेष वक्रोक्ति

जखन शिलष्ट पदक बिनु खण्ड कयनहि अन्यार्थक कल्पना कयल जाइछ तऽ अभङ्गपद श्लेष वक्रोक्ति कहल जाइछ ।

उदाहरण :

हे सखि ! भानस सँ अधिक परसव मे श्रम होय ।
परसव दुख से जान सखि ! जकरा परसव होय ॥ (अ०द०)

उक्त पंक्तिमे (एक सखीक स्वसखीक प्रति उक्ति) परसबसँ वक्ताक अभिप्राय छैक भोजन परोसबसँ किन्तु श्रोता (दोसर सखी) ओकर अर्थ लगबैत अछि प्रसव-वेदना ।

एतय 'परसव' शब्दकेँ भंग नहि कयल गेल अछि तेँ अभंग-पद-श्लेष वक्रोक्ति अलंकार होइछ ।

(आ) सभङ्गपद श्लेष वक्रोक्ति

जखन शिलष्ट पदक खण्डन कऽ अन्यार्थक कल्पना कयल जाइछ तऽ सभंगपद श्लेष वक्रोक्ति अलंकार होइत अछि ।

ओकर सूक्ष्मातिसूक्ष्म भेदोपभेदक उदाहरण प्रस्तुत करबाक प्रयास कयल अछि । एहि हेतु मैथिलीक महाकाव्य, खण्डकाव्य तथा मुक्तक काव्यहुसँ सरस ओ सुन्दर पदक चयन कय उदाहरणस्वरूप उ□ृत कयल गेल अछि । सूक्ष्म भेद सभक उदाहरण दुष्प्राप्य रहबाक कारण ठाम-ठाम स्वरचित उदाहरण सेहो प्रस्तुत करय पड़ल अछि । कतोक अलङ्कार अंशत: एक दोसरासँ साम्य रखैत अछि । दू अलङ्कारमे जतय साम्यबोध भेल अछि ओतय (दोसर अलङ्कारक अंतमे) दुनूक अन्तर देखाओल गेल अछि जाहिसँ पाठककेँ कतहु भ्रान्ति नहि होनि । अलङ्कारक गहन अध्ययन करब अत्यन्त सूक्ष्म विषय अछि । तेँ ई आवश्यक नहि जे जाहि अलङ्कारक उदाहरणस्वरूप जे पद्य उ□ृत अछि ताहिमे अन्य अलङ्कार नहि दृष्टिगोचर होअए । हँ, एतबा अवश्य जे प्रधानता ओकरे होयत जे अभीष्ट अछि ।

एहि पोथीकेँ हम 1981 ई० मे मैथिली अकादमी, पटनामे प्रकाशनक हेतु देलिऐक । ओतयसँ दू चारि वर्षपर कोनो ने कोनो पत्र भेटैत रहल जे 'अलङ्कार-भास्कर' पर विचार नहि भेल अछि, यदि नहि छपि सकत तऽ पाण्डुलिपि घुराए देब । मुदा ने छपि सकल आ ने पाण्डुलिपिये घुराओल गेल । अत: हम 1992 ई०मे सुरक्षित पाण्डुलिपि ओतयसँ लए अनलहुँ। पुन: 1998 ई० मे एकटा प्राइवेट लेटर प्रिंटिंग प्रेससँ गप्प कयलहुँ । ओतहु आश्वासन भेटैत रहल जे किछु टाइपक कमी अछि, एहिमे बहुत तरहक टाइप लगतैक । यथाशीघ्रहि हम व्यवस्था कए छापि देब । मुदा व्यर्थ । तत्पश्चात् हम ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय प्रेसक व्यवस्थापक डॉ० इन्द्रनाथ सिंह ठाकुरजी (जे हमर पिसियौत भाइ सेहो थिकाह)सँ गप्प कयलहुँ आ 2000 ई०क पूर्वा□मे हम ओहि प्रेसमे पाण्डुलिपि जमा कए देलिऐक । एतय सँ हमर दू गोट पोथी पूर्वहुमे छपि चुकल छल, तेँ कने उत्साहित सेहो भेलहुँ। मुदा एहि पोथीक की दुर्योग जे 2000 ई० मे मात्र 8 पृष्ठ, 2001 ई०मे 48 पृष्ठ तथा 2002 ई०मे 8 पृष्ठ मात्र छपि सकल । वस्तुत: ओ तँ विश्वविद्यालयक प्रेस थिकैक । ओकरा अपन कार्यसँ पलखति हेतैक तखन ने ? एकर प्रकाशनक मन्थर गति देखि हमर धैर्यक सीमा नहि रहल । हम मैनेजर साहेब (भाइ)क व्यथा बुझैत छियनि । अत: हम हुनका दोषो नहि दऽ सकैत छियनि कारण जे ओ तऽ पहिनहि कहने छलाह जे— समय लागत । तथापि हम हुनक आभारी छियनि जे प्रेसमे कार्यकर्त्ताक नितान्त अभाव रहनहुँ किछु कार्य ससारि देलनि आ पाण्डुलिपि सुरक्षित घुराए सकलाह । हम 2002 ई० अन्तमे पाण्डुलिपि घुराए लेलहुँ संगहि छपल 64 पृष्ठकेँ पूर्व खण्डक रूपमे मानि नष्ट होयबासँ बचौलहुँ ।

हमर अलङ्कारशास्त्रक गुरु डॉ० लक्ष्मण चौधरी 'ललित' जाहि मनोयोगसँ एहि पोथीक भूमिका लिखबाक अनुग्रह कयलनि से हमर मोनकेँ प्रफुल्लित आ हृदयकेँ आह्लादित कए देलक । हुनक आशीर्वाद आ शुभकामना हमरा सतत कर्मपथपर अग्रसर होयबाले प्रेरित करैत रहैत अछि । विषमसँ विषम परिस्थितिमे डॉ० ललितजीक जे सहयोग आ सहानुभूति हमरा भेटैत रहल अछि से अवर्णनीय अछि । अत: हुनका प्रति हम नतमस्तक छियनि ।

डॉ० श्रीमती नीता झासँ सेहो हमरा वर्गमे बैसि कए पढ़बाक अवसर भेल अछि, तेँ हुनको हम अपन सहकर्मी नहि बुझि गुरुए बुझैत छियनि । वस्तुत: ओ हमर मनोबलकेँ बढ़बैत

रहैत छथि तथा हमर सर्वाङ्गीण विकासक हेतु शुभकामना आ आशीर्वाद दैत रहैत छथि। अतः हुनका प्रति मात्र आभारेटा व्यक्त कए हम ऋणमुक्त नहि होमए चाहैत छी।

आब हम जाहि विद्यावृद्ध—मनीषीक नामोल्लेख करए चाहैत छी से अपना सन अपनहिँ छथि। एकरा क्यो अत्युक्ति बुझथु वा अतिशयोक्ति, किन्तु हम तऽ अनन्वये कहब। हमरा दृष्टिएँ तऽ डॉ० भीमनाथ झा बेजोड़ छथि— की गद्य आ की पद्य ? की शोध आ की समीक्षा ? की सभा आ की सम्मान ? सभठाँ विद्यमान। एहि पोथीकेँ एहि रूपमे अनबामे हुनक की योगदान छनि से कहि हम अपन मोनकेँ हल्लुक नहि करए चाहैत छी, अपितु हम हुनकासँ यैह कामना करैत छी जे ओ अपन मार्गपर हमरो घसिटने चलथि।

किछु विशिष्ट व्यक्तिक प्रत्यक्ष वा परोक्ष सहयोग हमरा भेटैत रहल जाहिमे प्रधान छथि डॉ० बाबूनन्द झा एवं डॉ० रामचन्द्र चौधरी। हँ, बिम्ब आ अलङ्कारक नाम पर डॉ० दयानन्द झा सेहो हमरा उकसबैत रहलाह। हिनका लोकनिक प्रति सेहो हम कृतज्ञता ज्ञापन करैत छी।

एहि क्रममे हम श्री नरेन्द्रनाथ झा, जे०आर०एफ० (यू०जी०सी०)क नामोल्लेख करब नहि बिसरि सकैत छी जे जीर्ण अवस्थाकेँ प्राप्त भेल पाण्डुलिपिक प्रेस कॉपी तैयार करबामे मदति कयलनि। श्री प्रवीण कुमार 'प्रभंजन', जे०आर०एफ० (यू०जी०सी०)क सहयोग सेहो उल्लेखनीय अछि। हम दुनू गोटयकेँ ईप्सित प्राप्तिक आशीर्वाद दैत छियनि। श्री नवीन कुमार झाजी अत्यन्त व्यस्त रहितहुँ समय-समयपर प्रेससँ सम्पर्क स्थापित कय समयानुकूल कार्यक सम्पादन करैत रहलाह, तेँ हम हुनको सफलताक सोपानपर अग्रसर होयबाक हेतु शुभकामना दैत छियनि।

हमर पिता श्री प्रमोदनाथ झा पोथी प्रकाशित करयबाले उत्साहित करैत रहलाह तथा पत्नी श्रीमती माला झा व्यग्रतासँ एकरा पोथीक रूपमे देखबाले प्रतीक्षारत छथि। पुत्रद्वय अमित एवं सुमित तऽ एहिमे संकलित कइएक गोट चोटगर उदाहरण सभकेँ देखितहि अभ्यास कय लेलनि। हम साधुवाद दैत छियनि श्री रामप्रकाश अग्रवालजीकेँ जे एहि ग्रंथकेँ द्रुतगतिसँ प्रकाशित करयबामे सहयोग कयलनि। एकर साफ, सुव्यवस्थित आ सुन्दर छपाइक हेतु श्री संजीव अग्रवाल, प्रिंटवेल, दरभंगाकेँ सेहो साधुवाद !

अलंकारशास्त्रमे रुचि रखनिहार सरस, सहृदय पाठकसँ हमर निवेदन जे यदि कतहु त्रुटि बुझाइनि तऽ हमरा सूचित करथि संगहि क्षमा सेहो करथि कारण जे—

नरस्य आभरणं रूपं रूपस्य आभरणं गुणम्।
गुणस्य आभरणं ज्ञानं ज्ञानस्य आभरणं क्षमा॥

दरभङ्गा
रामनवमी
11 अप्रैल 2003

[signature]

2. शब्द अनेकार्थक यदि च उक्त 'शब्दगत श्लेष'। (अ० मा०)

यदि एक शब्द अनेक अर्थक प्रतिपादन करय तऽ शब्दश्लेष होइछ।

भेद :

शब्दश्लेषक दू भेद होइछ—

(1) अभङ्ग-पद श्लेष (2) सभङ्ग-पद श्लेष।

1— अभङ्गपद श्लेष

अभङ्गपद श्लेष ओ थिक जाहिमे अर्थक निष्पादनक हेतु पदकेँ तोड़ए नहि पड़ैत छैक।

उदाहरण :

किंवा भए ब्रह्मर्षि सुत, साक्षी कर्मक जानु।
प्रतिदिन सेवल 'वारुणी' पतित भेल तेँ भानु॥ (एकावली-परिणय)

एतय 'वारुणी' श्लिष्ट शब्द थिक जकर अर्थ होइछ— पश्चिम दिशा एवं मदिरा। सूर्यक पतनक कारण कहल गेल अछि पश्चिम दिशारूपी नायिकाक सम्पर्क एवं ब्रह्मर्षि-सुत भए शरावक सेवन करब। दूनू अर्थ संगत अछि।

जेँकि वारुणी शब्दकेँ भंग कए अर्थ नहि निकालल गेल अछि तेँ अभंग पद श्लेषालङ्कार भेल।

2— सभङ्गपद श्लेष

सभङ्गपद श्लेष ओ थीक जाहिमे अर्थक निष्पत्तिक हेतु शब्दकेँ तोड़ए पड़ैत छैक।

उदाहरण :

मन मोहन सखि आयल अछि ऋतुराज।
निशि वासर कलपाओत भनत न काज॥ (मै० का०)

एतय 'मोहन' श्लेषयुक्त शब्द थिक जकरा भङ्ग कय 'मोहन' एवं 'मोह न' बनाओल गेल अछि। दुनू तरहेँ अर्थक संगति बैसैत छैक।

यमक एवं श्लेष

यमक एवं श्लेष दुनू शब्दालंकार थिक किन्तु यमकमे एकहि शब्दक बेरि-बेरि भिन्नार्थक प्रतिपादनक हेतु आवृत्ति होइत अछि जखनकि श्लेषमे एकहि शब्दसँ अनेक अर्थक निष्पत्ति होइत अछि। यमकमे निरर्थक एवं सार्थक दुनू वर्णक प्रयोग होइत अछि किन्तु श्लेषमे मात्र सार्थके वर्णटाक।

4— वक्रोक्ति

जतय वक्ताक अन्यार्थक वाक्यक काकु वा श्लेषक कारण अन्य अर्थक कल्पना कयल जाए ओतय वक्रोक्ति अलंकार होइछ।

(आ) सभङ्ग पद यमक

जतय पदकेँ तोड़ि-जोड़ि कए भिन्नार्थक प्रतीति होअए ओतय सभङ्ग पद यमक होइछ।

उदाहरण :

1. **कानब सुन क्यो कान न**
   कानन-सन जग रे ।
   जन बिच दुःखक असर न
   अ-सरण सभ लग रे ॥ (बाजि उठल मुरली)

एतय 'कान न' क अर्थ थिक बिनु कानेँ, 'कानन'क अर्थ जंगल तथा 'असर न' प्रभावरहित एवं 'अ-सरण' ठोकर खाएब। अतः सभङ्गपद यमक भेल।

2. **रहितहु दोष, दोष हमरा नहि—**
   दऽ सकता सज्जन ई मानि ।
   दोषाकर बुझितहुँ दोषाकर—
   केँ चढ़ौल शङ्कर चट चानि ॥ (राधा-विरह)

एतय प्रथम दोषाकर दोषक आकर (समूह) थिक किन्तु दोसर दोषाकरक रूढ़ि अर्थ चन्द्रमा थिक।

प्रथमकेँ भङ्ग करए पड़ैत छैक आ दोसरकेँ नहि। अतः सभङ्ग पद यमक भेल।

यमक एवं लाटानुप्रास

यमक एवं लाटानुप्रास दुनूमे वर्ण समुदायक आवृत्ति रहैत अछि, किन्तु यमकमे अर्थ भिन्न रहब आवश्यक, जखन कि लाटानुप्रासमे एकार्थक वर्णक आवृत्ति रहैत अछि। यमकमे निरर्थक एवं सार्थक दुनू वर्णक आवृत्ति होइत अछि किन्तु लाटानुप्रासमे मात्र सार्थक वर्णक आवृत्ति होइछ।

3— श्लेष

(शब्द श्लेष)

एकहि शब्दमे यदि दू वा दूसँ अधिक अर्थ ओझरायल रहय तऽ श्लेष अलङ्कार होइछ।

श्लेषक अर्थक होइछ आलिङ्गन— लेपटायब। एहि अलंकारमे एकहि शब्दमे अनेक अर्थ ओझराएल रहैत अछि। ई शब्द एवं अर्थ दुनूमे होइछ। यदि शब्दमे श्लेष रहैत अछि तऽ शब्दश्लेष भेल आ यदि अर्थमे रहय तऽ अर्थ-श्लेष। एतय शब्दश्लेषक चर्चा कयल जाइत अछि। अर्थश्लेषक चर्चा अर्थालङ्कारक क्रममे होयत।

लक्षणः

1. **श्लिष्टैः पदैरनेकार्थाभिधाने श्लेष इष्यते।** (सा० द०)
   श्लिष्ट पदक द्वारा अनेक अर्थक बोध होयब श्लेष अलंकार थिक।

अलङ्कार-क्रम

अर्थालङ्कार	पृष्ठ संख्या

अर्थालङ्कार	पृष्ठ संख्या

शब्दार्थालङ्कार

(आ) अन्त्यानुप्रास

ई अनुप्रास पदान्तमे दृष्टिगोचर होइत अछि तेँ एकर नाम थिक अन्त्यानुप्रास । एकरा तुकान्त सेहो कहल जाइत अछि ।

उदाहरण :

केश छत्ता जकाँ माथ हत्ता जकाँ
आँखि खत्ता जकाँ दाँत फारे बुझू ।
बोल रोड़ा जकाँ चालि घोड़ा जकाँ
पेट मोरा जकाँ वा बखारे बुझू ॥ (सीताराम झा)

एतय 'जकाँ' एवं 'बुझू' केर आवृत्तिसँ अन्त्यानुप्रास भेल ।

2— यमक

भिन्नार्थक प्रतिपादनक हेतु एक शब्दक बेरि–बेरि आवृत्तिसँ यमक अलङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारमे एकहि शब्द बेरि–बेरि भिन्न–भिन्न अर्थक प्रतिपादनक हेतु प्रस्तुत कयल जाइत अछि । एहिमे सार्थक एवं निरर्थक दुनू वर्णक आवृत्ति होइत अछि ।

लक्षण :

1. **सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्य□जनसंहतेः**
क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते ॥ (सा.द.)

यमक ओ अलङ्कार थिक जाहिमे सार्थक भेलोपर, भिन्न–भिन्न अर्थवला स्वर–व्य□जनक समूहक पूर्वक्रमानुसार आवृत्ति होइछ ।

भेद :

एकर दू भेद कयल जा सकैछ— (अ) अभङ्ग पद यमक (आ) सभङ्ग पद यमक ।

(अ) अभङ्ग पद यमक

जतय पदकेँ बिनु तोड़ने–जोड़ने यमक होअए ओतय अभङ्ग पद यमक होइछ ।

उदाहरण :

सारङ्ग नयन वयन पुनि सारङ्ग
सारङ्ग तसु समधाने ।
सारङ्ग उपर उगल दस सारङ्ग
केलि करथि मधुपाने ॥ (विद्यापति)

एतय प्रत्येक सारङ्गक भिन्न–भिन्न अर्थ अछि, जे थिक क्रमशः — हरिण, कोकिल, धनुष (कामदेवक), कमल (पयोधर) एवं भ्रमर (आङुर) । अतः यमक अलङ्कार भेल । एतय शब्द तोड़ल नहि गेल अछि तेँ अभङ्ग पद यमक भेल ।

एतय स□च-म□चमे '□च', तथा भक्ति-आसक्तिमे 'क्ति' केर स्वरूपत: आ क्रमत: आवृत्ति भेल अछि, तेँ छेकानुप्रास भेल ।

(आ) वृत्यनुप्रास

एक वर्ण अथवा अनेक वर्णक अनेक बेरि आवृत्ति भेलासँ वृत्यनुप्रास होइत अछि ।

उदाहरण :

कामिनीक कोमल-कपोल कुच-कौशल
कान्ति-कलित कच-कल्पनाक कलुषित न
कु□जमे काँटहि - काँट घुमाउ । (झाङ्कार)

एतय 'क' केर आवृत्तिसँ वृत्यनुप्रास भेल अछि ।

2. शब्दानुप्रास

सार्थक वर्णक आवृत्ति शब्दानुप्रास कहबैत अछि । एकर मात्र एकहिटा भेद अछि लाटानुप्रास ।

लाटानुप्रास

शब्द एवं अर्थ दुनूक पुनरुक्तिमे तात्पर्य मात्रक भेद रहलासँ लाटानुप्रास होइछ ।

उदाहरण :

विद्या की यदि बु□ि नहि ?
विद्या की यदि बु□ि । (अ० मा०)

यदि बु□ि नहि रहय तऽ विद्यासँ लाभ ? तथा जँ बु□ि रहय तऽ विद्याक की प्रयोजन ?

एहिमे विद्या शब्दक अपन अर्थक संग आवृत्ति भेल अछि, किन्तु तात्पर्यसँ भेद रहलाक कारणेँ लाटानुप्रास होइछ ।

3. अन्य

एकर अन्तर्गत आओर दू गोट अनुप्रास अबैत अछि; जे थिक—
(अ) श्रुत्यनुप्रास (आ) अन्त्यानुप्रास ।

(अ) श्रुत्यनुप्रास

जखन कण्ठ, तालु, मूर्धा आदि एकहि स्थानसँ प्रयुक्त होमएबला वर्णक आवृत्ति होइत अछि तऽ श्रुत्यनुप्रास कहबैछ । ई सुनबामे अत्यन्त सुमधुर लगैत अछि ।

उदाहरण :

कंकन किंकिंन कन कन कन कन
घन घन नूपुर बाजे ।
रति रने मदन पराभव पाओल
जय-जय डिम-डिम बाजे ।। (विद्यापति)

एतय कण्ठ एवं दन्त्य ध्वनिक आवृत्तिसँ श्रुत्यनुप्रास भेल अछि ।

अलङ्कार-भास्कर

शब्दालंकार

1—अनुप्रास

स्वरमे विषमतो रहलासँ यदि वर्णसाम्य रहय तऽ अनुप्रास अलंकार भए जाइछ ।

अनुप्रास शब्द 'अनु + प्र + आस'क योगसँ बनल अछि । 'अनु'क अर्थ होइछ बारम्बार, 'प्र'क अर्थ लग तथा 'आस'क अर्थ राखब । अतः अनुकूल व्यंजनक अनेक बेरि आवृत्ति होयब अनुप्रास अलंकार थिक ।

लक्षण :

1. **अनुप्रासः शब्द साम्यं बैषम्येऽपि स्वरस्य यत् ।** (सा० द०)

'अनुप्रास' ओ अलंकार थिक जाहिमे स्वरमे विषमतो रहलासँ वर्णसाम्य रहय ।

2. **अनुप्रास विषमहु स्वरहु, सम ब्यंजन संधान ।**
   गंग तरंगक संग लहि पावन पवन प्रमाण ॥ (अ० मा०)

'अनुप्रास'मे स्वरक विषमतो रहय किन्तु वर्णक समता आवश्यक; यथा–गंग, तरंग एवं संगमे 'ग' क आवृत्ति एवं पावन, पवनमे 'प'क आवृत्तिसँ अनुप्रास भेल ।

भेद :

अनुप्रासक तीन भेद होइत अछि —

1— वर्णानुप्रास 2— शब्दानुप्रास 3— अन्य ।

1. वर्णानुप्रास

निरर्थक वर्णक आवृत्ति वर्णानुप्रास कहबैत अछि । एकर पुनः दू भेद होइत अछि— (अ) छेकानुप्रास (आ) वृत्यनुप्रास ।

(अ) छेकानुप्रास

छेकानुप्रासमे अनेक व्यंजनक एकहि बेरि स्वरूपतः आ क्रमतः आवृत्ति होइत अछि । उदाहरणार्थ वर एवं रव मे दुनुक स्वरूपगत साम्य अछि किन्तु क्रमविभेद अछि। 'व' क स्थान पर 'र' एवं 'र' क स्थान पर 'व' अछि, तेँ छेकानुप्रास नहि होयत । शूर एवं शरमे छेकानुप्रास अछि ।

उदाहरण :

स□च-म□च बक-मण्डल शावक—
सहित ककरदनि करइछ ध्यान,
अधिक भक्ति आसक्ति थीक,
चोरक लक्षण, कहइछ सज्ञान । (रा० वि०)

उदाहरण :

1. उच्चासन पाबियो कए खल नर
भए सकैछ नहि गुणिवर ।
जहिना तारक तरुपर रहिकए
काक न कहबए हंस बराबर ॥ (लेखक)

एतय दृष्टान्तहि जेकाँ पूर्वा□क समर्थनमे उत्तरा□ आयल अछि किन्तु एहिमे 'जहिना' वाचक शब्द प्रयुक्त भेलासँ उदाहरण भेल ।

2. जहिना संध्या देखि विहग नीड़ाकुल धाबए ।
तहिना अहँ बिनु हमर प्राण व्याकुल भए कानए ॥ (लेखक)

दृष्टान्त एवं उदाहरण

दुनूमे बड़ सूक्ष्म अंतर अछि । उदाहरण एवं दृष्टान्त दुनूमे उपमेय वाक्यक पुष्टिक हेतु तत्सदृशे कोनो बात कहल जाइछ । एहिमे वाचक शब्द अवश्य रहैत अछि किन्तु दृष्टान्तमे से नहि ।

30—निदर्शना

दूटा सम्ब□ वा असम्ब□ वाक्यमे जखन उपमान द्वारा सम्बन्ध स्थापित कयल जाय तऽ निदर्शना अलङ्कार होइछ ।

निदर्शनाक अर्थ थिक दृष्टान्त । एहिमे सतत दू भिन्न वाक्यमे उदाहरण दैत सादृश्य देखाओल जाइछ । दू असम्ब□ वाक्यमे सादृश्यक स्थापना करब एकर वैलक्षण्य थिक । एहिमे दूटा एहन वाक्य रहैछ जकर सम्बन्ध सम्भव वा असम्भव किछु भऽ सकैछ किन्तु एकहि बेर दुनू कहलासँ अर्थक संगति नहि होइछ । कवि उपमाक द्वारा दुनूमे संगति कए दैत छथि । एकर मूलमे तऽ उपमा अवश्य होइछ किन्तु से शब्दतः नहि कहल जाइछ, व्यंग्य रूपमे रहैछ । ई गम्यौपम्यमूलक अलङ्कार थिक ।

लक्षण :

1. अभवन् वस्तु सम्बन्धः उपमापरिकल्पकः । (का० प्र०)

वस्तुक एहन सम्बन्ध जे अनुपमन्नो भेलापर उपमानोपमेय भावमे परिणत भए जाय, निदर्शना कहबैछ ।

2. सम्भवन्वस्तु सम्बन्धोऽसम्भवन्वाऽपि कुत्रचित्
यत्र बिम्बानुबिम्बत्वम् बोधयेत् सा निदर्शना ॥ (सा०द०)

वस्तुक सम्बन्ध सम्भव हो वा असम्भव, जखन बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव द्वारा ओहिमे सम्बन्ध देखाओल जाइछ तऽ निदर्शना अलङ्कार होइछ ।

एकहि टा उपमेय केर यदि अनेक उपमान रहए तऽ मालोपमा होइछ ।

भेद :

मालोपमाक निम्नलिखित तीन भेद अछि— 1. समानधर्मा 2. भिन्नधर्मा 3. लुप्तधर्मा ।

1. समानधर्मा

जतय अनेक उपमानक साधारण धर्म एके रहैत अछि । एकरा एकधर्मा सेहो कहल जाइत अछि ।

उदाहरण :

1. **साँझक चिराग, जीवन प्रभात**
नयनक प्रकाश सम प्रिये !
कतए जाइत छी हमरा छोड़ि ? (लेखक)

एतय प्रियेक तीनटा उपमान अछि जकर सभक साधारण धर्म एके थिकैक— प्रकाश देब । तेँ समानधर्मा मालोपमा भेल ।

2. **होए पुनि जे क्षमासारा रत्नगर्भा हरितवसना**
इन्द्र केर अमरावती सन राघवक जन्मस्थली सन
जनक केर मिथिलापुरी सन दिव्य ई धरणी । (मे०प्र०)

एतय धरणीक तीनटा उपमान अछि— इन्द्रकेर अमरावती, राघवक जन्मस्थली एवं जनकक मिथिलापुरी । सभक समान धर्म एके थिक— दिव्यता ।

2. भिन्नधर्मा

जतय अनेक उपमानक भिन्न-भिन्न साधारण धर्म रहैत अछि ।

उदाहरण :

बेलक सदृश कठोर सरस पुनि सन्तोला सन ।
अहँक पयोधर युगल पुष्ट अछि पूर्ण कलश सन ॥ (लेखक)

एतय पयोधर युगलक तीनटा उपमान अछि— बेल, संतोला एवं पूर्ण कलश आ तीनूक प्रयोग तीन साधारण धर्मक हेतु भेल अछि; यथा— बेलक सदृश कठोर, संतोला सन रसगर एवं पूर्ण घट समान पुष्ट वा उभड़ल ।

अतः भिन्नधर्मा मालोपमा भेल ।

3. लुप्तधर्मा

जतय अनेक उपमानक साधारण धर्मक स्पष्ट कथन नहि रहैत अछि ।

उदाहरण :

प□चम-स्वरसँ कोकिल-कदम्ब,
पावस-प्रवेशसँ तरु-कदम्ब ।
चन्दन-वनसँ गिरि-मलय राज,
तहिना सुतसँ ओ महाराज ॥ (एकावली-परिणय)

एतय एकवीरक जन्मसँ महाराजक प्रसन्नता विभिन्न उपमानसँ प्रस्तुत अछि जकर साधारण धर्मक स्पष्ट कथन नहि अछि ।

12— समुच्चयोपमा

जतय अनेक साधारण धर्मक समुच्चय (ढेर) होअए ओतय समुच्चयोपमा अलङ्कार होइछ ।

समुच्चय (Set)क अर्थ होइत अछि समूह । एहि अलङ्कारमे अनेक साधारण धर्मक कारण उपमेय एवं उपमानमे समता देखाओल जाइत अछि । कविकेँ स्थिरतापूर्वक उपमेयोपमानक विभिन्न गुणपर विचार करबाक अवसर भेटैत छनि ।

उदाहरण :

मृदुल, मनोहर, सुखद, सरस
कलिऐल अहँक कुच-कुवलय । (लेखक)

एतय अनेक साधारण धर्म— मृदुल, मनोहर, सुखद, सरस आ कलिऐलक आधारपर कमल रूप स्तनक तुलना कयल गेल अछि ।

13—अनन्वय

जतय एकहि वस्तु उपमेय एवं उपमानक रूपमे वर्णित रहैत अछि ओतय अनन्वय अलङ्कार होइत अछि ।

अनन्वय शब्दक व्युत्पत्ति अछि— **न अन्वयेति इति अनन्वयः** । अर्थात् जकर सम्बन्ध ककरो संग नहि रहय, अनन्वय कहबैत अछि । एहिमे उपमेय कोनो अन्य वस्तुक सदृश नहि भए अपनहि सदृश भए जाइत अछि । एकर प्रयोग अद्वितीय सि करबाले सेहो होइत अछि । कवि उपमेयक प्रति ततेक निष्ठावान रहैत छथि जे अन्य उपमानक तिरस्कार कए दैत छथि । प्रायः देखल जाइत अछि जे एहि अलङ्कारक प्रयोग करबासँ पूर्व कवि व्यतिरेक अलङ्कारक प्रयोग कयने रहैत छथि जाहिसँ एकर उपयोगिता सि भए जाइत अछि ।

लक्षण :

1. **उपमानोपमेयत्वं यदेकस्यैव वस्तुनः ।**
इन्दुरिन्दुरिव श्रीमानित्यादौ तदनन्वयः ॥ (कुव०)

जतय एकहि वस्तु उपमान एवं उपमेयक रूपमे वर्णित रहैत अछि ओतय अनन्वय अलङ्कार होइत अछि; यथा— चन्द्रमा चन्द्रमाक समान कान्तिमान छथि ।

2. **उपमानोपमेयत्वमेकस्यैव त्वनन्वयः ।** (सा० द०)

जतय एकहि वस्तु उपमेय तथा उपमान रूपमे वर्णित हो, अनन्वय अलङ्कार कहबैत अछि ।

3. **एके विषय 'अनन्वय'क उपमेये उपमान ।**
अहाँ अहीं सन, चान छथि चाने सन श्रीमान् । (अ० मा०)

यदि उपमेय एवं उपमान वाक्यमे बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव होअए तऽ दृष्टान्त अलङ्कार होइछ; यथा— हे राजन् ! अहीँ कीर्त्तिमान छी आ चन्द्रमे कान्तिमान छथि ।

4. **प्रस्तुत अप्रस्तुत दुहुक तुल्य धर्म एकान्त ।**
बिम्बन-प्रतिबिम्बन तुलित अलङ्कार दृष्टान्त ॥ (अ०मा०)

प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत दुनूक यदि पृथक्-पृथक् समान धर्म हो जाहिसँ दुनू वाक्यमे बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव प्रदर्शित होअए तऽ दृष्टान्त अलङ्कार होइछ ।

भेद :

साधर्म्य एवं वैधर्म्यक आधारपर एकर दू भेद होइछ—

1. साधर्म्यसँ दृष्टान्त

तत सम्भव शिशु बचबाक कोन ?
की बाट पड़ल रह कतहु सोन ? (एकावली-परिणय)

जहिना हिंसक जन्तुसँ पूर्ण जंगलमे शिशुक बचबाक आशा नहि, तहिना बाटपर सोन पड़ल रहबाक आशा नहि । दुनू वाक्यमे बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव अछि आ से साधर्म्यक कारण ।

वैधर्म्यसँ दृष्टान्त

समरभूमिमे देखि अहाँकेँ
अरिदल भागि चलैछ ।
नभ-मण्डल मे रविक अस्तसँ
उड्गण देखि पड़ैछ ॥ (लेखक)

हे राजन् ! जखन समर भूमिमे अहाँ अबैत छी तऽ शत्रुदल भागि जाइछ । आकाशमे सूर्यकेँ नहि रहलापर तारागण दृष्टिगोचर होइछ ।

एतय पूर्वा विधि रूप आ उत्तरा निषेध रूप थिक ।

प्रतिवस्तूपमा एवं दृष्टान्त

दुनूमे दू वाक्य रहैत अछि जाहिमे एक प्रकृत तथा दोसर अप्रकृत रहैछ । प्रतिवस्तूपमामे समान धर्म एके रहैछ, किन्तु शब्दान्तरे कहल जाइत अछि, जखन कि दृष्टान्तमे साधारण धर्म भिन्न होइत अछि । दृष्टान्तमे बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव रहैत अछि एवं प्रतिवस्तूपमामे वस्तुप्रतिवस्तुभाव ।

29— उदाहरण

जखन कोनो बातक पुष्टिक लेल ओहने दोसर बात कहल जाइछ तऽ उदाहरण अलङ्कार होइछ ।

ई दृष्टान्तसँ पर्याप्त समानता रखैत अछि तेँ कतोक विद्वान् एकर पृथक् अस्तित्व नहि मानैत छथि अपितु दृष्टान्तमे एकर समाहार कए दैत छथि । एहिमे वाचक शब्द अवश्यमेव रहैत अछि जे एकरा दृष्टान्तसँ भिन्न कए दैछ ।

3. मालारूप प्रतिवस्तूपमा

जतय एकहि गप्प शब्दान्तरक मालासँ कहल जाइत अछि—

उदाहरण :

बाँझक कष्ट निपुत्र थिक, शूरक पीड़ पराजय ।
मूर्ख वेदना थिक विद्वानक, शूल अग्निकेर पानिय ॥ (लेखक)

एतय साधारण धर्म दु:ख चारि शब्दान्तरेँ — कष्ट, पीड़, वेदना एवं शूलसँ कथित अछि तेँ मालारूप प्रतिवस्तूपमा भेल ।

उपमा एवं प्रतिवस्तूपमा

दुनूमे साधारण धर्म एके रहैत अछि किन्तु उपमामे साधारण धर्मक एकहि शब्दसँ एकहि बेर कथन भेल रहैछ जखनकि प्रतिवस्तूपमामे ओकर दू वा अधिक बेर, जकर साधारण धर्म एकहि रहैछ । उपमामे एकहिटा वाक्य होइछ किन्तु प्रतिवस्तूपमामे दू वा बेसी । उपमामे एकहि शब्दसँ कथन होइछ किन्तु प्रतिवस्तूपमामे शब्दान्तर होयब नितान्त आवश्यक । उपमामे वाचक द्वारा सादृश्य देखाओल जाइछ, प्रतिवस्तूपमामे वाचक नहि होइछ, उपमा व्यंग्यरूपमे रहैत अछि ।

प्रतिवस्तूपमा एवं दीपक

प्रतिवस्तूपमामे शब्दान्तरेँ दू वा अधिक वाक्यमे साधर्म्यक स्थापना कयल जाइछ जखनकि दीपकमे एकहि शब्द द्वारा एकधर्माभिसम्बन्ध देखाओल जाइछ ।

28—दृष्टान्त

जतय उपमेय वाक्य, उपमान वाक्य एवं दुनूक साधारण धर्ममे बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव रहय ओतय दृष्टान्त अलङ्कार होइछ ।

दृष्टान्त अलङ्कारमे दूटा एहन बात अबैत अछि जकर साधारण धर्म भिन्न रहितहु एक दोसराक समर्थन करैछ । एहिमे वाचक शब्दक प्रयोग नहि होइछ । दुनू वाक्य अपन-अपन भिन्न-भिन्न अस्तित्व रखैत अछि । सादृश्य शब्दत: कहल नहि जाइछ, व्यंग्य रूपमे रहैत अछि ।

लक्षण :

1. **दृष्टान्त: पुनरेतेषां सर्वेषां प्रतिबिम्बनम् ।** (का०प्र०)

दृष्टान्तमे उपमेय तथा उपमान वाक्यमे एहि सभक (उपमेय, उपमान तथा साधारण धर्म) बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव होइछ ।

2. **दृष्टान्तस्तु सधर्मस्य वस्तुन: प्रतिबिम्बनम् ।** (सा०द०)

दृष्टान्त अलङ्कारमे सधर्म उपमेय वाक्य एवं उपमान वाक्यमे बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव होइत अछि ।

3. **चेद्बिम्बप्रतिबिम्बत्वं दृष्टान्तस्तदलंकृति: ।**
त्वमेव कीर्त्तिमान् राजन् विधुरेव हि कान्तिमान् ॥ (कुव०)

अनन्वय अलङ्कारमे एकेटा विषय रहैत अछि, उपमेये उपमान रहैत अछि; यथा— अहाँ अहीँ सन छी, चान चाने सन कान्तिमान छथि ।

उदाहरण :

1. **तोहर सरिस एक तोहेँ जग माधव मन होइछ अनुमाने ।** (विद्यापति)

एतय माधवक सदृश माधवे छथि, तेँ अनन्वय भेल ।

2. **आकाश आकाशहिक सदृश तारा तारे सन ।**
सीता-रामक युगल मूर्त्ति सीते-रामहि सन ॥ (लेखक)

एतय आकाश, तारा एवं सीता-रामक जोड़ा; उपमेय एवं उपमान स्वयं बनि जाइत अछि ।

उपमा एवं अनन्वय

अनन्वयमे उपमाने उपमेय बनि जाइछ किन्तु उपमामे उपमान एवं उपमेय भिन्न-भिन्न होइछ । दुनूमे साम्य प्रदर्शित कयल जाइछ ।

14—रूपक

बिना कोनो निषेधक उपमेयमे उपमानक आरोपकेँ रूपक कहल जाइत अछि ।

ई सादृश्यगर्भ अभेद प्रधान अलंकार थिक तेँ एहिमे सादृश्य सम्बन्ध रहिते अछि। उपमेय एवं उपमानक गुणमे कोनो अन्तर नहि बुझाइत अछि— दुनू अभेद जकाँ प्रतीत होइछ ।

लक्षण :

1. **तद्रूपकमभेदोय उपमानोपमेययो: ।** (का० प्र०)

उपमेय एवं उपमानक अभेद आरोपकेँ रूपक कहल जाइछ ।

2. **रूपकं रूपितारोपाद्विषये निरपह्नवे ।** (सा० द०)

बिनु निषेध रहने उपमेयमे उपमानक आरोपकेँ रूपकालङ्कार कहल जाइछ ।

3. **उपमानक उपमेयमे जे आरोप रहैछ ।**
काव्यरसिकमे ताहिकेँ रूपक विबुध कहैछ ॥ (अ०क०)

जखन उपमान उपमेयपर अपन रूपक आरोप कए दैत अछि तऽ रूपक कहबैत अछि ।

भेद :

यद्यपि एहि अलङ्कारक वर्गीकरण कतोक आचर्यगण कयलनि अछि किन्तु आचार्य मम्मटक वर्गीकरण विशेष नीक बुझना जाइत अछि । मम्मटाचार्यक अनुसारेँ प्रथमत: रूपकक तीन भेद अछि— 1. साङ्गरूपक 2. निरङ्गरूपक 3. परम्परितरूपक ।

1. साङ्गरूपक

जतय अङ्ग सहित उपमेयमे उपमानक आरोप होइछ, साङ्गरूपक कहबैछ । एकर पुन: दू प्रकार अछि—

(अ) समस्त वस्तु विषय वा सावयव रूपक (आ) एकदेशविवर्त्ती ।

(अ) समस्त वस्तु विषय वा सावयव रूपक

एहिमे अङ्ग सहित उपमानक उपमेयमे वर्णन होइत अछि; यथा—

विधि-रजक अरुण-अम्बर काँ,
छवि-छार लगाए पखारल ।
भए गेल स्वच्छ ओ लगले
तेँ तेजि समस्त तिमिर मल ॥ (एकावली-परिणय)

एतय विधिकेँ— रजक, छविकेँ— छार तथा तिमिरकेँ— मलक आरोप करबामे समस्त वस्तु विषय वा साङ्ग रूपक भेल ।

(आ) एकदेशविवर्ती

जाहिमे किछु आरोप शब्दतः कथित रहए एवं किछु अर्थ-शक्तिसँ जानए पड़ए ओतए एकदेशविवर्त्ती साङ्गरूपक होइछ; यथा—

आनन-पूर्ण-सुधांशु-सन्निधानहुँ प्रमुदित रहि,
पलको भरि कुच-चक्रवाक-जोड़ी विछुरए नहि ।
अथवा सरसिज-युगल कनेको हो न संकुचित,
ई कन्दर्प-नरेन्द्र-नीति-अनुभावक समुचित ॥ (एकावली-परिणय)

एतय आननमे— पूर्ण चन्द्रक, कुचमे— चक्रवाकक स्पष्टतः आरोप अछि किन्तु सरसिज युगलसँ स्तनद्वयक आरोप स्पष्टतः कथित नहि अछि ।

2. निरङ्ग वा निरवयव रूपक

जतय अङ्गक बिनु उल्लेख कयनहि उपमेयमे उपमानक आरोप हो, निरवयव रूपक कहबैछ । एकर पुनः दू भेद अछि— (अ) शु□ निरङ्गरूप (आ) मालारूप निरङ्ग ।

(अ) शु□ निरङ्गरूप

जतय एक उपमेयमे एक उपमानक आरोप होअए ओतय शु□ निरङ्ग होइछ; यथा—

ता पुनु अपरूप देखल रे कुच-युग-अरविन्द ।
विकसित नहि किछु कारण रे सोझाँ मुख-चन्द ॥ (विद्यापति)

एतय कुच-युगमे अरविंदक एवं मुखमे चन्द्रक आरोपसँ शु□ निरङ्ग भेल ।

(आ) मालारूप निरङ्ग

जतय एक उपमेयमे अंग रहित अनेक उपमानक आरोप हो ओतय मालारूप निरंग रूपक होइछ; यथा—

चिन्तामणि चतुर-चकोरक,
विरही तरुणक बड़वानल ।
भए गेल लीन वारिधिमे,
अति प्रभाहीन शशि मण्डल ॥ (ए० प०)

एतय एक उपमेय शशिपर अनेक अङ्गरहित उपमानक आरोप कयल गेल अछि ।

प्रतिवस्तूपमा ओ अलङ्कार थिक जाहिमे गम्य साम्य वला दू वाक्यमे एकहि धर्म पृथक्-पृथक् निर्दिष्ट रहैछ ।

2. वाक्ययोरेक सामान्ये प्रतिवस्तूपमा मता ।
तापेन भ्राजते सूरः शूरश्चापेन राजते ॥ (कुव०)

जतय दू सामान्य वाक्य (उपमेय एवं उपमान)मे एकहि साधारण धर्म पृथक्-पृथक् निर्दिष्ट रहैत अछि ओतय प्रतिवस्तूपमालंकार होइछ; यथा— सूर्य तापसँ शोभित होइत छथि आ वीर चापसँ ।

एहि वाक्य मे 'भ्राजते' एवं 'राजते' दुनूक अर्थ एके थिक— शोभित होयब, किन्तु शब्दान्तरसँ दुनू वाक्यमे कथित अछि ।

3. पृथक्-पृथक् दुइ वाक्यमे एके धर्म समान ।
भिन्न शब्द मे उक्त यदि 'प्रतिवस्तूपमा' प्रमाण ॥ (अ० मा०)

यदि पृथक्-पृथक् दू वाक्य (उपमेय एवं उपमान) मे एकहि धर्म भिन्न-भिन्न शब्देँ कहल जाय तऽ प्रतिवस्तूपमा अलङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारमे कविक दृष्टि साधारण धर्मपर केन्द्रित रहैत अछि । एकर तीन टा भेद मानल जाइत अछि —

1. साधर्म्यसँ 2. वैधर्म्यसँ 3. मालारूप ।

1. साधर्म्यसँ प्रतिवस्तूपमा

जतय उपमेय एवं उपमान वाक्यमे एकहि साधारण धर्म रहैत अछि—

उदाहरण :

विद्वानक बहुमूल्य परिश्रम
दुष्टबु□सँ नहि बाधित हो ।
रत्नदीप केर शिखा प्रज्वलित
हवाझोकसँ नहि विचलित हो ॥ (लेखक)

एतय प्रथम उपमेय वाक्य थिक आ दोसर उपमान वाक्य, जाहिमे 'बाधित' हो एवं 'विचलित' हो एकहि सामान्य धर्मक शब्दान्तरेँ निर्देश कयल गेल अछि ।

2. वैधर्म्यसँ प्रतिवस्तूपमा

जतय उपमेय एवं उपमान वाक्यमे साधारण धर्मक भिन्नता रहय—

उदाहरण :

भए जाएत हमरा सँ दुष्कर त्राण ।
अपटु कुलाल करए की घट निर्माण ॥ (एकावली-परिणय)

एहिमे प्रथम उपमेय एवं दोसर उपमान वाक्य थिक । उपमान वाक्यमे अपटु कुलाल घट निर्माण नहि कए सकैत अछि कहि कए अपन पटुता देखबैत छथि । अर्थात् निषेधसँ एतय उत्कर्ष बढ़ि जाइछ ।

3. माला दीपक

एहि अलङ्कारमे पूर्वकथित वस्तु सभक परकथित वस्तु सभक संग समान धर्मसँ सम्बन्ध स्थापित कयल गेल रहैछ ।

उदाहरण :

धन्वा लए रणभूमिमे अयला लक्ष्मण लाल ।
पाओल के की तत्क्षणहि सुनू कहब तत्काल ॥
धनुष वाण, वाण घननाद, घननाद भूमितल ।
भूमि लषण, ओ कीर्त्ति, कीर्त्ति त्रैलोकहु जीतल ॥ (लेखक)

लक्ष्मण जखन धनुष लए रणभूमिमे अयलाह तऽ के की पओलक से सुनू— धनुष वाणकेँ, वाण घननादकेँ, घननाद भूमिकेँ, भूमि लक्ष्मणकेँ, लक्ष्मण कीर्त्तिकेँ आ कीर्त्ति त्रैलोक्यकेँ जीतल ।

एतय पूर्व पूर्व वस्तु उतरोत्तर वस्तुमे चमत्कार अनैछ आ लक्ष्मणक महानताकेँ चरमोत्कर्षपर पहुँचा दैछ ।

दीपक एवं तुल्ययोगिता

दुनूमे पर्याप्त समानता अछि अर्थात् दुनूमे एकहि धर्म कथित रहैत अछि, किन्तु अन्तर ई अछि जे दीपकमे उपमेय एवं उपमानमे समान धर्म देखाओल जाइत अछि जखनकि तुल्ययोगितामे केवल उपमेय वा केवल उपमानेटामे समान धर्म देखाओल जाइछ । दीपकमे धर्मैक्य राखए वला पदार्थमे किछु प्रस्तुत एवं किछु अप्रस्तुत रहैत अछि, किन्तु तुल्ययोगितामे केवल प्रकृति वा केवल अप्रकृति रहैत अछि ।

27—प्रतिवस्तूपमा

जखन उपमेय एवं उपमान दुनू वाक्यक साधारण धर्म भिन्न-भिन्न शब्दक द्वारा कहल जाइत अछि तऽ प्रतिवस्तूपमा अलंकार होइछ ।

एहि अलङ्कारमे औपम्य गम्य होइत अछि । उपमा व्यंग्यरूपमे रहैत अछि, शब्दतः कथित नहि । प्रतिवस्तूपमाक अर्थ होइछ जे उपमा प्रत्येक वस्तुमे रहय—

प्रतिवस्तु प्रतिवाक्यार्थमुपमा साधारणधर्मोऽस्याम् । (कुव०, पृ०सं० 310)

ई अलंकार साधर्म्येटासँ नहि अपितु वैधर्म्योसँ होइत अछि । वैधर्म्यो द्वारा साम्य उपस्थित कयल जा सकैछ— **न केवलमियं साधर्म्येण, यावद्वैधर्म्येणापि दृश्यते** (अ०स०, पृ०सं० 72)

लक्षण :

1. **प्रतिवस्तूपमा सा स्याद्वाक्ययोर्गम्यसाम्ययोः ।**
एकोपि धर्मः सामान्यो यत्र निर्दिश्यते पृथक् ॥ (सा०द०)

3. परम्परित रूपक

जतय एक आरोप दोसर आरोपक कारण होइछ, परम्परित रूपक कहबैछ; यथा—

स्तन-गिरि ओटहि बैसि वीण वाणी मिष बजबथि ।
तरल-तरुण-मन-हरिण अनायासहिँ जनु बझबथि ॥ (एकावली-परिणय)

एतय स्तनगिरिक कारणेँ तरुणक मोन आकृष्ट होइछ तेँ परम्परित रूपक भेल ।

एकर पुनः दू भेद होइत अछि— (अ) एकरूप परम्परित (आ) मालारूप परम्परित । मम्मट, विश्वनाथ आदि आचार्यगण एकरूप एवं मालारूप परम्परितक सेहो श्लिष्टत्व एवं अश्लिष्टत्वक आधारपर चारि भेदक कल्पना करैत छथि, किन्तु एतेक भेदोपभेद कयलासँ स्वभाविकता नहि रहि जाइछ ।

उपमा एवं रूपक

उपमा भेदाभेद प्रधान अलङ्कार थिक एवं रूपक अभेद प्रधान । उपमामे सादृश्य वाच्य होइछ तथा रूपकमे व्यंग्य । उपमाक सौन्दर्य साधर्म्यक कारण रहैछ आ रूपकक आरोपक कारण । उपमामे साम्य रहैत अछि, रूपकमे अत्यन्त साम्य—**साम्य मात्रे च उपमा अतिसाम्ये तु रूपकम् ।**

15— प्रतीप

कविप्रसि□ ओ परम्परित उपमानकेँ उपमेय बनायब प्रतीप अलङ्कार थिक ।

प्रतीपक अर्थ होइछ उलटा । उपमेय एवं उपमानक सम्बन्धकेँ उलटि देब प्रतीत कहबैछ । एहि अलंकारमे उपमानक तिरस्कार कय उपमेयक उत्कृष्टता सि□ कयल जाइछ । प्रतीपमे उपमेयकेँ गौरवशाली सि□ करबाक हेतु एकर पाँच भेदक उल्लेख कयल गेल अछि।

लक्षण :

1. **प्रतीपमुपमानस्योपमेयत्व प्रकल्पनम् ।**
त्वल्लोचनसमं पद्मं त्वद्वक्त्रसदृशोविधुः ॥ (कुव०)

उपमानक उपमेयरूपमे कल्पना करब सएह प्रतीप थिक; यथा— (कोनो प्रेमी अपन प्रेयसीसँ कहि रहल अछि) अहाँक आँखिक समान कमल एवं मुहक समान चन्द्रमा छथि ।

2. **प्रसि□स्योपमानस्योपमेयत्वप्रकल्पनम् ।**
निष्फलत्वाभिधानं वा प्रतीपमिति कथ्यते ॥ (सा० द०)

जतय प्रसि□ उपमानकेँ उपमेयक रूपमे कल्पना कयल जाय वा ओकरा प्रयोजनहीन कहल जाय तऽ प्रतीप अलङ्कार होइछ ।

3. **आक्षेप उपमानस्य प्रतीपमुममेयता ।**
तस्यैव यदि वा कल्प्या तिरस्कार निबन्धनम् ॥ (का० प्र०)

जतय उपमानक आक्षेप हो वा तिरस्कारक कारण उपमेयरूपमे वर्णित हो ओतय प्रतीप अलङ्कार होइछ ।

4. **थिक 'प्रतीप' विपरीत यदि उपमेये उपमान ।**
अहँक नयन सम नलिन पुनि चानो वदन समान ॥ (अ० मा०)

प्रतीप ओ अलङ्कार थिक जाहिमे उपमेय उपमान एवं उपमान उपमेय बनि जाइछ । (क्यो नायक कोनो नायिकासँ कहैत छथि)— अहाँक आँखिक सदृश कमल एवं मुँह सन चन्द्र छथि ।

भेद :

प्रतीप अलङ्कारक पाँच भेद अछि— 1. प्रथम प्रतीप 2. द्वितीय प्रतीप 3. तृतीय प्रतीप 4. चतुर्थ प्रतीप 5. प□चम प्रतीप ।

1. प्रथम प्रतीप

प्रसि□ उपमान जखन उपमेय रूपमे वर्णित होइछ तऽ प्रथम प्रतीप कहबैछ; यथा—

कवरी भय चामरि गिरि - कन्दर
मुख भय चान अकाशे ।
हरिण नयन भय सर भय कोकिल
गति भय गज वनवासे ॥ (विद्यापति)

एतय प्रसि□ उपमान सभक अनादर करबामे प्रथम प्रतीप भेल ।

2. द्वितीय प्रतीप

उपमानकेँ उपमेय बना कऽ वास्तविक उपमेयक निरादर करबामे द्वितीय प्रतीप भेल; यथा—

मृगमद पङ्क अलका । मुख जनु करह तिलका ।
सपुन पुनिम केर चन्दा । तिलके होयत गए मन्दा ॥ (विद्यापति)

एतय पूर्णचन्द्र नायिकाक मुँहक स्थानपर वर्णित अछि । तिलक कयलासँ मुँहकेँ मलिन करबामे चन्द्रमाक निरादर अछि ।

3. तृतीय प्रतीप

उपमेयकेँ उपमान कल्पित कए प्रसि□ उपमानक तिरस्कार करब तृतीय प्रतीप भेल; यथा—

गरव करै छथि चन्द्रमा दूधक फेन समान ।
पसरल छथि सर्वत्र ओ बाढ़िक पानि समान ॥ (लेखक)

एतय प्रसि□ उपमान चन्द्रमाक तुलना दूधक फेन आ बाढ़िक पानिसँ कएकेँ हुनक निरादरमे तृतीय प्रतीप होइछ ।

4. चतुर्थ प्रतीप

जखन उपमान उपमेयक अयोग्य सि□ भए जाइछ तऽ चतुर्थ प्रतीप कहबैछ; यथा—

तर्क - वितर्क बहुत कय लेल ।
तुअ मुख सम हिमकर नहि भेल ॥ (लेखक)

1. आवृत्ति दीपक

जतय पद अर्थ एवं पदार्थक आवृत्ति हो, आवृत्ति दीपक कहबैछ । आवृत्तिक आधार पर एकर तीन भेद अछि—

(क) पदावृत्ति, (ख) अर्थावृत्ति (ग) पदार्थावृत्ति ।

(क) पदावृत्ति दीपक

जतय भिन्न-भिन्न अर्थवला पदक आवृत्ति हो तऽ पदावृत्ति दीपक कहबैछ । एहिमे एकहिटा क्रियापदक बेर-बेर आवृत्ति होइछ; यथा—

घन बरिसय विरहिनि नयन बरिसय समय अपूर्व । (अ०मा०)

एतय एकहि क्रियापद बरिसयक आवृत्तिसँ पदावृत्ति दीपक भेल ।

(ख) अर्थावृत्ति दीपक

जतय एकहि अर्थवला भिन्न-भिन्न पदक आवृत्ति हो ओतय अर्थावृत्ति दीपक होइछ; यथा—

निष्प्रताप अवनीश, तापहानि शीतल अनल ।
तेज रहित नलिनीश, तीनि अनादृत रह बनल ॥ (एकावली-परिणय)

एतय निष्प्रताप, तापहानि एवं तेजरहित समानार्थक थिक तेँ एकर आवृत्ति सँ अर्थावृत्ति दीपक अलङ्कार भेल ।

(ग) पदार्थावृत्ति

जतय पद एवं अर्थ दुहूक आवृत्ति हो, पदार्थावृत्ति दीपक कहबैछ; यथा—

तृपित धरनि घरनी तृपित जलद समय अनवद्य । (अ०मा०)

एतय तृपित शब्दक अपन अर्थक संग आवृत्ति भेलासँ पदार्थावृत्ति भेल ।

2. कारक दीपक

अनेक क्रियामे एकहि कारकक प्रयोग भेलासँ कारक दीपक होइछ । एहिमे अनेक कार्यक कर्त्ता एकहि व्यक्ति रहैत अछि ।

मम्मट एवं विश्वनाथ एकरा दीपकेक भेद मानैत छथि, किन्तु अप्पय दीक्षित एकर पृथक् अस्तित्व सि□ कयने छथि ।

उदाहरण :

केलि कु□ज मे नव परिणीता
डरथि, संकुचित होथि ।
नेत्र बन्द, पुनि तिर्यक हेरथि
चह आलिङ्गन चुम्बन देथि ॥ (लेखक)

एतय एकहिटा कर्त्ता छथि 'नव परिणीता' आ एकहिटा अधिकरण कारक 'केलि कु□जमे' जाहिसँ अनेक क्रियाक सम्बन्ध छैक, तेँ कारक दीपक भेल ।

3. तृतीय तुल्ययोगिता

उपमेयक उत्कृष्ट गुणवला उपमानसँ जखन तुलना कयल जाइछ तऽ तृतीय तुल्ययोगिता होइछ; यथा–

कल्पवृक्ष अरु कामधेनु तेसर अहँ दानी ।
करब त्वरित सब काज हमर नहियो हम कानी ॥ (लेखक)

एतय कल्पवृक्ष एवं कामधेनुक सदृश दानी एकटा सामान्य मानवकेँ बना देलासँ तृतीय तुल्ययोगिता भेल ।

26—दीपक

जतय उपमेय एवं उपमानक एकहि धर्म हो, दीपक अलंकार कहबैत अछि ।

दीपक अत्यन्त प्रमुख अलङ्कार थिक जकर अर्थ होइछ प्रकाश देब । एकटा डिबिया जेना द्वारिपर रखलासँ बाहर-भीतर आलोकित करैत अछि, तहिना ई अलङ्कारो प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत दुनूकेँ एकधर्माभिसम्बन्ध द्वारा प्रकाशित करैछ– **दीपयति प्रकाशयति इति दीपकम्** ।

लक्षण :

1. अप्रस्तुतप्रस्तुतयोर्दीपकं तु निगद्यते ।
अथ कारकमेकंस्यादनेकासु क्रियासुचेत् ॥ (सा०द०)

दीपकमे प्रस्तुत एवं अप्रस्तुतमे एक धर्माभिसम्बन्ध होइछ तथा अनेक क्रियामे एक कारक भेलासँ सेहो दीपक होइछ ।

2. वदन्ति वर्ण्यावर्ण्यानां धर्मैक्यं दीपकं बुधाः ।
मदेन भाति कलभः प्रतापेन महीपतिः ॥ (कुव०)

वर्ण्य तथा अवर्ण्यमे धर्मैक्य रहलापर विद्वान् दीपक कहैत छथि; यथा कलभ (हाथी) मदसँ शोभित होइछ एवं राजा तेजसँ ।

एतय कलभ एवं राजा दुनूक धर्म एक अछि— शोभित होयब ।

3. प्रस्तुत अप्रस्तुत दुहुक 'दीपक' धर्म समान ।
गज मदसँ, धनि रूपसँ, बलसँ शोभ जवान ॥ (अ०मा०)

प्रस्तुत एवं अप्रस्तुतक यदि धर्म समान हो तऽ दीपक अलङ्कार होइछ; यथा— हाथी मदसँ, धनि रूपसँ आ जवान बलसँ शोभित होइत छथि ।

एतय हाथी, धनि एवं जवान तीनूक धर्म एकहि अछि- शोभित होयब ।

भेद :

प्रथमतः दीपकक तीन भेद होइछ— 1. आवृत्ति दीपक 2. कारक दीपक 3. माला दीपक ।

एतय नायिकाक मुहक समक्ष हिमकर अयोग्य सि□ भए जाइत छथि ।

5. प□चम प्रतीप

जखन उपमेयक समक्ष उपमान व्यर्थ सि□ भए जाय तऽ प□चम प्रतीप होइछ; यथा—

अथवा उपमानक कथा कथि लय करिअ सङोर ।
चान कमल केर कथा की ? देखल धनि मुख गोर ॥ (अ० मा०)

एतय नायिकाक मुखक समक्ष चान एवं कमल व्यर्थ भए गेल तेँ प□चम प्रतीप होइछ।

उपमा एवं प्रतीप

प्रतीप उपमाक ठीक विलोम वा विपरीत अलङ्कार थिक । प्रतीपमे उपमाक उपमानोपमेय भाव उलटि जाइत अछि । अर्थात् उपमामे प्रस्तुत उपमेय एवं अप्रस्तुत उपमान होइछ, किन्तु प्रतीपमे ई सम्बन्ध उलटि जाइछ ।

16— परिणाम

जतय उपमान उपमेयक रूप धारण कए कोनो क्रिया करैत अछि, परिणाम अलङ्कार कहबैछ ।

परिणाम सादृश्यगर्भ अभेद-प्रधान आरोपमूलक अलङ्कार थिक । एकरा रूपकसँ बड़ लगक सम्बन्ध छैक । एहिमे उपमान उपमेयक संग मिलिकए कोनो कार्यक सम्पादन करैत अछि । एहिठाम उपमेय तथा उपमान एक तऽ अवश्य भए जाइत अछि किन्तु उपमानमे कार्य करबाक क्षमता नहि होइत छैक तेँ उपमेयक संग सम्बन्ध स्थापित करैत अछि ।

लक्षण :

1. परिणामः क्रियार्थश्चेद् विषयी विषयात्मना ।
प्रसन्नेव दृगब्जेन वीक्षते मदिरेक्षणा ॥ (कुव०)

जतय (विषयी) उपमान (विषयक) उपमेयक रूप धारण कए कोनो कार्यक सम्पादन करय ओतय परिणाम अलङ्कार होइत अछि; यथा— मदिर नेत्रवाली नायिका प्रसन्न नेत्र-कमलसँ देखैत अछि ।

2. विषयात्मतयारोप्ये प्रकृतार्थोपयोगिनी ।
परिणामो भवेत्तुल्याधिकरणोभवेत् द्विधा ॥ (सा० द०)

जतय उपमानक उपमेयमे अभेद आरोप होअए आ ओहिसँ कोनो कार्य होअए तऽ परिणाम अलङ्कार होइछ । एकर दू भेद अछि— तुल्याधिकरण एवं अतुल्याधिकरण ।

3. विषय रूप विषयी फलित अलङ्कार 'परिणाम' ।
विकसित दृग-कमलेँ निरखु सुरभित पियमुख वाम ॥ (अ०मा०)

जतय विषय (उपमेय) रूपमे विषयी (उपमान) आबि जाय ओतय परिणाम अलङ्कार होइछ; यथा— विकसित नेत्र-कमलसँ प्रियतमक सुन्दर मुखक अवलोकन करू ।

उदाहरण :

विकसित छल दृग-कमल तेँ
देखल राम विवाह ।
चन्द्रवदन विकसित सदा
हरय नयन केर छाह ॥ (लेखक)

एतय पूर्वा□मे उपमान कमलमे देखबाक सामर्थ्य नहि छैक तेँ नेत्रसँ मिलिकए वीक्षण क्रिया करैत अछि ।

रूपक एवं परिणाम

रूपक एवं परिणाम दुनूमे उपमानक उपमेयमे आरोप रहैत अछि । अन्तर एतबे अछि जे रूपकमे आरोपक पश्चात् उपमान अपन स्थानसँ च्युत भऽ जाइत अछि । ओकरा उपमेयक अनुसार चलए पड़ैत छैक । किन्तु परिणाममे उपमान उपमेयक साहचर्यसँ कार्य करबामे समर्थ होइत अछि ।

17—उल्लेख

ज्ञाता अथवा विषय-वस्तुक भेदसँ एक वस्तुक अनेक प्रकारसँ वर्णन उल्लेख अलङ्कार थिक ।

एहि अलङ्कारमे एक वस्तुक अनेक प्रकारसँ उल्लेख कयल जाइछ । उल्लेखमे एकहिटा वर्ण्य विषय होइत अछि जकर वर्णन विभिन्न प्रकारक व्यक्ति ज्ञातृ-भेद एवं विषय-भेदसँ करैत छथि । ई सादृश्य गर्भ, अभेद प्रधान, आरोपमूलक अलङ्कार थिक । एहिमे सादृश्य, अभेद एवं आरोप तीनू तत्त्व वर्त्तमान रहैत अछि ।

लक्षण :

1. **बहुभिबहुधोल्लेखादेकस्योल्लेख इष्यते ।**
   स्त्रीभिः कामोर्थिभिः स्वर्द्रुः कालः शत्रुभिरैक्षि सः ॥ (कुव०)

जतय एकहि व्यक्तिक नाना प्रकारसँ वर्णन हो, उल्लेख अलङ्कार कहबैत अछि; यथा— (ओ राजा) स्त्रीक द्वारा कामदेवक रूपमे, याचकक द्वारा कल्पवृक्षक रूपमे तथा शत्रुक द्वारा कालक रूपमे देखल गेलाह ।

2. **क्वचिद्भेदाद् ग्रहीतृणां विषयाणां तथा क्वचित् ।**
   एकस्यानेकधोल्लेखो यः स उल्लेख उच्यते ॥ (सा० द०)

जतय कतहु ज्ञातृ-भेद वा विषय-भेदसँ एक वस्तुक अनेक प्रकारसँ वर्णन होअए ओतय उल्लेखालङ्कार होइछ ।

3. **हेतु ग्रहीता भेद वा विषयक भेद लखाय ।**
   एकक बहु उल्लेखमे तँ उल्लेख कहाय ॥ (अ० क०)

ज्ञातृ-भेद एवं विषय-वस्तुक भेदसँ एक वस्तुक अनेकमे उल्लेख उल्लेखालङ्कार थिक ।

2. **पदार्थानां प्रस्तुतानामन्येषां वा यदा भवेत् ।**
   एकधर्माभिसम्बन्धः स्यात्तदा तुल्ययोगिता ॥ (सा० द०)

जयत प्रस्तुत वा अप्रस्तुत पदार्थक एक धर्माभिसम्बन्ध हो ओतय तुल्ययोगिता अलङ्कार होइछ ।

3. **प्रस्तुत वा अप्रस्तुतक क्रिया रूप गुण धर्म ।**
   ऐक्य बोध हो युगपदे तुल्ययोगिता मर्म ॥ (अ०मा०)

जतय प्रस्तुत वा अप्रस्तुतक क्रिया, रूप, गुण एवं धर्म एक भए जाइछ तऽ तुल्ययोगिता होइछ ।

भेद :

अप्पय दीक्षितक अनुसारेँ एकर तीन भेद होइछ—

1. प्रथम तुल्ययोगिता 2. द्वितीय तुल्ययोगिता 3. तृतीय तुल्ययोगिता ।

1. प्रथम तुल्ययोगिता

अनेक उपमेय वा अनेक उपमानक यदि एक धर्मक कथन हो तऽ प्रथम तुल्ययोगिता होइछ; यथा—

(क) अनेक उपमेयक तुल्ययोगिता

रानिक आङन कुलललना ओ मन उछाह भरि गेल ।
अपनहि आदरपूर्वक सभकाँ समुचित बैसक देल ॥ (एकावली-परिणय)

एतय रानिक आङन एवं मन दुनू उपमेय थिक जे कुलललना एवं उछाहसँ भरि गेल । दुनूक धर्म एके थिक— भरि जायब, तेँ प्रथम तुल्ययोगिता भेल ।

(ख) अनेक उपमानक तुल्ययोगिता

चन्द्रमुखि ! लखि वदन अहँक
शशि सरसिज सब भेल दीन ।
द्रुतभावी कुचक विकास जानि
युग-चक्रवाक कुवलय मलीन ॥ (लेखक)

एतय शशि, सरसिज दुनू उपमान थिक, जकर एके गुण अछि दीन होयब आ पुनः चक्रवाक आ कुवलय मलीन होइत अछि ।

2. द्वितीय तुल्ययोगिता

जतय शत्रु एवं मित्र दुनूक संग समाने भाव प्रदर्शित कयल जाइछ, द्वितीय तुल्ययोगिता कहबैछ; यथा—

क्यो मारथि पाथर उठा क्यो सींचथि बरु नीर ।
थिक स्वभाव ई आमकेर ककरहु कर न अधीर ॥ (लेखक)

एतय आम अपन मित्र एवं शत्रुक संग समान भाव प्रदर्शित करैत अछि, तेँ द्वितीय तुल्ययोगिता भेल ।

एतदितिरिक्त कुवलयानन्दकार अप्पयदीक्षित, अलंकार मालिकाकार प्रो० सुरेन्द्र झा 'सुमन' आदि एकर आठमो भेदक कल्पना कयलनि अछि जे थिक सापह्नवातिशयोक्ति।

8. सापह्नवातिशयोक्ति

लक्षण :

यदि च अपह्नव गर्भमे सापह्नवातिशयोक्ति । (अ० मा०)

यदि मूलमे अपह्नव (निषेध) हो तऽ सापह्नवातिशयोक्ति होइछ ।

उदाहरण :

वृथा तकैछ शशांकमे
अमृत लसित कवि सूक्ति । (अ०मा०)

चन्द्रमामे अमृत ताकब व्यर्थ ई तऽ कवि-प्रसिद्ध थिक ।

रूपक एवं रूपकातिशयोक्ति

दुनू अभेद प्रधान अलङ्कार थिक किन्तु रूपकमे तद्रूपता पाओल जाइछ आ अतिशयोक्तिमे अध्यवसान । रूपकमे उपमेय एवं उपमानमे अभेद रहैत अछि किन्तु एहिमे उपमान उपमेयकेँ गिड़ने रहैत अछि । रूपकमे उपमेयोपमान शब्दतः कहल गेल रहैत अछि किन्तु एहिमे उपमानेटा शब्दतः कथित रहैछ ।

उत्प्रेक्षा एवं अतिशयोक्ति

दुनू अभेद प्रधान अलङ्कार थिक । अतिशयोक्ति विषयसाध्य होइछ एवं उत्प्रेक्षामे सिद्ध । एहिमे उपमेय उपमान द्वारा निगीर्ण कए लेल जाइत अछि किन्तु उत्प्रेक्षामे उपमानक उपमेयमे सम्भावना प्रकट कयल जाइछ । एहिमे अध्यवसाय सिद्ध होइछ अर्थात् मात्र उपमानेटा वाच्य होइछ जखनकि उत्प्रेक्षामे उपमेय एवं उपमान दुनू वाच्य होइछ ।

भ्रान्तिमान एवं अतिशयोक्ति

दुनू सादृश्यमूलक अलङ्कार थिक जाहिमे मात्र उपमानेटाक ज्ञान होइछ । भ्रान्तिमानमे अभेद ज्ञान अपन दोषक कारण होइछ किन्तु एहिमे से नहि ।

25— तुल्ययोगिता

जतय अनेक उपमेय वा अनेक उपमानक एकहि धर्म रहैत अछि, तुल्ययोगिता अलङ्कार कहबैछ ।

एहिमे एक उपमेयकेँ अनेक उपमेयक गुण, धर्म, क्रिया, रूप आदि सब तरहेँ साम्य देखाओल जाइछ तहिना एक उपमानकेँ अनेक उपमानक धर्मक संग समता देखाओल जाइछ।

लक्षण :

1. नियतानां सकृद्धर्मः सापुनस्तुल्योगिता । (का०प्र०)

जतय नियत अर्थात् उपमेय वा उपमानमे एक धर्माभिसम्बन्ध होअए ओतए तुल्ययोगिता अलङ्कार होइछ ।

भेद :

ज्ञातृ एवं विषय-भेद दृष्टिएँ उल्लेखक दू भेद अछि—
1. प्रथम उल्लेख 2. द्वितीय उल्लेख ।

1. प्रथम उल्लेख

लक्षण :

दृष्टि-भेद वश एकहुक बहुल कथन 'उल्लेख' ।
याचक सुरतरु, कालरिपु, धनि हुनि मदन परेख ॥ (अ० मा०)

दृष्टि भेदेँ एक विषयक अनेक प्रकारसँ चित्रण प्रथम उल्लेख थिक; यथा— (ओहि राजाकेँ) याचक कल्पवृक्षक रूपमे, शत्रु कालक रूपमे एवं पत्नी कामदेवक रूपमे देखलनि।

एतय एकहिटा राजा भिन्न-भिन्न व्यक्तिक द्वारा भिन्न-भिन्न रूपमे चित्रित छथि ।

उदाहरण :

भक्त चतुर्भुज, शत्रु काल, राजा नरपुङ्गव
रानी वत्स, प्रजासब राजा मुनि सब ज्ञानी ।
छद्मवेषधारी कराल विकराल असुरगण
देखल जनक नगरकेर वासी सारङ्गपानी ॥ (लेखक)

एतय एकहिटा राम, जनकपुर निवासी एवं अन्य व्यक्तिक द्वारा, जे सब ओतय उपस्थित छल, विभिन्न रूपमे चित्रित छथि ।

2. द्वितीय उल्लेख

लक्षण :

विषय भेदसँ पुनि बहुल उक्तिहु पुनि उल्लेख ।
शशि यश मे, रवि तेज मे, मति मे सुरगुरु एक ॥ (अ० मा०)

विषय-भेदक कारण एक व्यक्ति एकहि पदार्थक अनेक प्रकारसँ उल्लेख वा वर्णन करैत छथि; यथा— एकहि व्यक्ति यशमे चन्द्रमा, तेजमे सूर्य एवं बुद्धिमे वृहस्पति छथि ।

एतय एकहि व्यक्ति द्वारा अनेक रूपमे देखल गेल अछि जाहिसँ विषय भेद स्पष्ट अछि ।

उदाहरण :

अहँ छी अर्द्धांगिनी हमर व्यवहारिक पथ मे
सुरतकालमे नव युवती मंत्री विचार मे ।
विपत्कालमे संग न छोड़ी बहि प्रवाह मे
घरमे घरनी सहयोगी पुनि बाहर धरि मे ॥ (लेखक)

एतय एकहिटा गृहणी एकहि व्यक्ति द्वारा विषय-वस्तुक भेदेँ अनेक रूपमे चित्रित छथि, तेँ द्वितीय उल्लेख भेल ।

उल्लेख एवं रूपक

रूपक एवं उल्लेख दुनूमे आरोपक प्रधानता अछि । खासकए मालारूपमे एकहि वस्तुमे अनेक वस्तुक आरोप मात्र रहैत अछि जखनकि उल्लेखालङ्कारमे एक वस्तुक अनेकविध वर्णनमे आरोपेटा नहि रहैछ अपितु परिस्थिति भेदसँ ओकर अनेक भेद भए जाइछ।

18—स्मरण

जखन पूर्व देखल वा अनुभव कयल वस्तुक सदृश वस्तु समक्षमे आबि जाइछ तऽ ओकर स्मरणकेँ 'स्मरण अलङ्कार' कहल जाइछ ।

ई शादृश्यगर्भ भेदाभेद प्रधान अलङ्कार थिक । एहिमे उपमानकेँ देखि तत्सदृश उपमेयक स्मरण होइछ । कखनहुँ उपमेयकेँ देखि उपमानक स्मरण सेहो होइछ । ई अलङ्कार कविक ओहि मानसिक स्थितिक प्रदर्शन करैत अछि जाहिमे पूर्वानुभूति संस्कार रूपसँ मोनमे स्थिर रहैछ । ओ परिस्थितिक अनुसारेँ पूर्वानुभवकेँ जागृति कए तत्सदृश वातावरण एवं परिस्थितिक निर्माण कए दैत छथि । एही तरहेँ स्मरण कए 'स्मृति-अलङ्कार'क उद्भव होइछ ।

लक्षण :

1. सदृशानुभवाद्वस्तुस्मृतिः स्मरणमुच्यते । (सा० द०)

स्मरण ओ अलङ्कार थिक जाहिमे समान रूप वा गुणक वस्तुकेँ देखि कए तत्सदृश अन्य वस्तुक स्मरण भए जाइछ ।

2. यथानुभवमर्थस्य दृष्टे तत्सदृशे स्मृतिः ।
स्मरणम् ॥ (का० प्र०)

'स्मरण' ओ अलङ्कार थिक जाहिमे कोनो पूर्वानुभूत वस्तुक सदृश वस्तुक दर्शनसँ स्मरण भए जाय ।

3. **सदृश अनुभवे वस्तुकेर स्मरण रुचिर 'स्मृति' जान ।**
कमल निरखितहि मन पड़ल प्रिया वदन अम्लान । (अ० मा०)

सदृशक अनुभवक स्मरणसँ स्मृति अलङ्कार होइछ; यथा— कमलकेँ देखितहि प्रियाक तेज मुखमण्डलक स्मरण भेल ।

उदाहरण :

1. **हरिण देखि धनि नयन,**
चानसँ मुखक मनन भेल ।
विकच सरोरुह युगल देखि,
हुनि उरजहिँ मन गेल ॥ (लेखक)

एतय हरिण देखि प्रियाक नयन, चानसँ मुह आ फुलाएल कमलसँ स्तनक स्मरण होएबामे स्मरणालङ्कार भेल ।

जतय कारण एवं कार्यमे क्रम नहि हो अर्थात् अक्रम हो ओतय अक्रमातिशयोक्ति होइछ; यथा— वाणक संगहि शत्रुक मस्तक दिगंतमे उड़ि गेल ।

उदाहरण :

कोलाहल सुनि बानरक देल निशाचर कान ।
द्वारिक संगहि शत्रुदल भेल धराशय भान ॥ (लेखक)

एतय द्वारिक टूटब आ शत्रुक धराशय होयब संगहि वर्णित अछि, तेँ अक्रमातिशयोक्ति भेल ।

6. चपलातिशयोक्ति

लक्षण :

काजहिसँ कारण बुझी से पुनि चपला भेल ।
जायब-नहि जायब कहल खसल वलय टुटि गेल ॥ (अ०मा०)

जतय काजहिसँ कारणक ज्ञान होइछ ओतय चपलातिशयोक्ति होइछ; यथा— कोनो नायिका अपन प्रियतमक लग जयबाकाल अपन सखी लोकनिसँ हत्थापाही करैत छथि । आन्तरिक इच्छा जयबाक, किन्तु लज्जाक कारण नहि जायब कहि खसि पड़ैत छथि आ हुनक हाथक बाला टुटि जाइत छनि । एतय कारणसँ कार्यक ज्ञान भए जाइत अछि ।

उदाहरण :

कामिनि करए सनाने
हेरितहि हृदय हनए पचवाने । (विद्यापति)

एतय कारण देखितहि-देखितहि कार्यक बोध होइछ अर्थात् पचवान द्वारा लोक मारल जाइछ ।

7. अत्यन्तातिशयोक्ति

लक्षण :

1. **अत्यन्तातिशयोक्तिस्तु पौर्वापर्य व्यक्तिक्रमे ।**
अग्रे मानो गतः पश्चादनुनीता प्रियेण सा ॥ (कुव०)

जतय पहिने कार्य आ बादमे कारण हो ओतय अत्यन्तातिशयोक्ति होइछ; यथा— पहिने तऽ नायिकाक मान नष्टे भए गेलनि आ बादमे नायक हुनका बौसलनि ।

2. **पूर्वापरक विषर्ययेँ अत्यन्तातिशयोक्ति ।**
मान छुटल पहिनहि तखन पियक मुहेँ नमनोक्ति ॥ (अ० मा०)

पूर्वापरक विषर्ययसँ अर्थात् कार्यक बाद कारण भेने अत्यन्तातिशयोक्ति होइछ; यथा— नायिकाक मान तऽ पहिनहि छुटि गेल आ बादमे नायक हुनका मनौलनि ।

उदाहरण :

पहिनहि प्रभु गजराज उबारल ।
पाछाँ ओ हुनि नाम उचारल ॥ (लेखक)

2. **योगहुमे नहि योग पुनि योग अयोगहु कथ्य ।**
सम्बन्धातिशयोक्ति से क्रमहि लक्ष्य बिच तथ्य ॥ (अ० मा०)

जतय असम्बन्धमे सम्बन्ध देखाओल जाइछ जे थिक सम्बन्धातिशयोक्ति एवं जतय सम्बन्धमे असम्बन्ध देखाअेल जाइछ से थिक असम्बन्धातिशयोक्ति ।

उदाहरण :

कि आरे नवयौवन अभिरामा ।
जत देखल तत कहिअ न पारिअ
छओ अनुपम एक ठामा ॥ (विद्यापति)

एतय छओटा असम्बन्धमे सम्बन्ध देखाओल गेल अछि ।

4. असम्बन्धातिशयोक्ति

लक्षण :

योगेप्ययोगोऽसम्बन्धातिशयोक्तिरितीर्यते ।
त्वयि दातरि राजेन्द्र ! स्वर्द्रुमान्नाद्रियामहे ॥ (कुव०)

जतय सम्बन्धमे असम्बन्ध देखाओल जाइछ से असम्बन्धातिशयोक्ति थिक; यथा— हे राजन् ! अहाँ सन दानीक रहितो हमरा सन कल्पवृक्षक आदर नहि होइत अछि ।

एतय दानी एवं कल्पवृक्षमे सम्बन्ध रहितो असम्बन्ध देखाओल गेल अछि ।

उदाहरण :

कयल न किन्हहुँ जरठ विधि
रचना धनिक अनूप । (अ० मा०)

जड़ विधाता नायिकाक रचना सुन्दर नहि कयलनि ।

एतय धनिक रचना एवं विधातामे सम्बन्ध अछि किन्तु असम्बन्ध देखाओल गेल अछि ।

5. अक्रमातिशयोक्ति

लक्षण :

अक्रमातिशयोक्तिः स्यात्सहत्वे हेतुकार्ययोः ।
आलिङ्गन्ति समं देव ! ज्यां शराश्च पराश्चते ॥ (कुव०)

जतय कारण एवं कार्य एकहि संग वर्णित हो, अक्रमातिशयोक्ति होइछ; यथा— हे राजन् ! अहाँक वाण तथा शत्रु संगहि संग ज्याक (प्रत्य□चा एवं पृथ्वीक) आलिङ्गन करैत छथि ।

एतय प्रत्य□चापर वाणक आरोप कारण एवं शत्रुक भूमिपर खसब कार्य भेल ।

2. **अतिशयोक्ति अक्रम, क्रम न कारण काज विधान ।**
वाणक संगहि अरिक शिर कयल दिगंत उड़ान ॥ (अ०मा०)

19—संदेह

जखन उपमेयमे उपमानक संशय भए जाइछ तऽ संदेह अलङ्कार होइछ ।

ई सादृश्यमूलक अभेद प्रधान आरोपमूलक अलङ्कार थिक । एहिमे संशयकेँ सादृश्यमूलक होयब आवश्यक । एहि अलङ्कारमे कविक मानसिक स्थिति असन्तुलित रहैत अछि, भावना दोलायमान भए जाइत अछि । एहि अलङ्कारक निरूपणमे कविक भावना लौकिक संदेह-ज्ञानसँ पूर्णतः भिन्न होइछ । संदेह अलङ्कार तखनहि भए सकैत अछि यदि ओ कविप्रतिभाप्रसूत हो । अन्यथा अङ्कार सम्भव नहि ।

लक्षण :

1. **संदेहः प्रकृतेन्यस्य संशयः प्रतिभोत्थितः ।**
शु□ो निश्चयगर्भोसौ निश्चयान्त इति त्रिधा ॥ (सा० द०)

जतय उपमेयमे उपमानक संशय होअए एवं ई संशय कविप्रतिभोत्थापित रहए तऽ 'संदेह' अलङ्कार होइछ ।

2. **ससन्देहस्तु भेदोक्तौ च संशयः ।** (का०प्र०)

'संदेह' ओ अलङ्कार थिक जाहिमे उपमेयमे उपमानक संशय होअए । ई उपमेय तथा उपमानक भेदक कथन वा अकथन दुनूमे होइछ ।

3. **समतुल वस्तु अवस्तु दुहु संशय 'संदेहे'क ।**
धनि-मुख थिक वा चान ई संशय छुटय न एक ॥ (अ०मा०)

उपमेय एवं उपमान जखन समान भए कए संदेह उत्पन्न कए दिअए तऽ संदेह अलङ्कार होइछ; यथा— ई प्रियामुख थिक वा चन्द्रमा, से संदेह नहि छुटैत अछि ।

भेद :

एकर तीन प्रकार होइछ— 1. शु□ 2. निश्चयमध्य 3. निश्चयान्त ।

1. शु□ संदेह

जतय संदेह अन्त धरि रहि जाइछ ।

उदाहरण :

1. **सुरपति धनु कि शिखलचूड़े ।**
मालति झरए बलाकिनि ऊड़े ॥
भाल कि झाँपल विधु अधखण्ड ।
कविवर कर किय ओ भुजदण्ड ॥ (गोविन्द दास)

एतय कृष्ण भगवानक माथमे लागल मयूरक पाँखि थिक वा इन्द्रधनुष, केशमे मालतीक फूल देखि— जे ओ मालतीक पराग झरैत अछि वा बगुला उड़ैछ, कपार देखि संशय होइछ जे— कपार थिक वा मेघसँ आच्छादित चन्द्रमा, भुजदण्ड देखि संदेह होइछ जे भुजदण्ड थिक वा हाथीक सूँढ़ । ई संदेह अन्तो धरि रहि जाइछ तेँ शु□ संदेह अलङ्कार भेल ।

2. **बिनु जलहु रम्य रुचि भरल ओज ।**
ओ छल सरोज वा छल उरोज ॥ (ईशनाथ झा)

2. निश्चयमध्य

जकर मध्यमे निश्चय रहय किन्तु आदि एवं अन्तमे अनिश्चय ।

उदाहरण :

झाँपल कुवलय वा युग उरोज
मारक रति थल वा आलि कुलक ।
विकसित अति लखि सम्मुख दिनेश
छल चक्र मिथुन वा पूर्ण कलश ॥ (लेखक)

एतय प्रथम, द्वितीय एवं चतुर्थ चरणमे अनिश्चय अछि किन्तु तेसर चरणमे निश्चय । अत: निश्चयमध्य संदेह भेल ।

3. निश्चयान्त

उदाहरण :

कनक लता अरविंदा । दमना माजरि उगि गेल चन्दा
केओ बोल भमए भमरा । केओ बोल नहि-नहि चलए चकोरा
केओ बोल शैबाले बेढ़ला । केओ बोल नहि मेघे झँपला
संशय पड़ जनि माही । बोल तोर मुख सम नाही ॥ (विद्यापति)

एतय दोसर एवं तेसर पाँतीमे संदेह अछि जकर निश्चय अन्तिम पाँतीमे भए जाइछ, तेँ निश्चयान्त संदेह अलङ्कार भेल ।

संदेह एवं रूपक

रूपकमे उपमानक उपमेयमे निश्चितता रहैत अछि किन्तु संदेहमे अनिश्चितता । रूपकमे आरोप रहैत अछि किन्तु संदेहमे सम्भावना ।

20—भ्रान्तिमान

जखन उपमेयमे उपमानक निश्चयात्मक भ्रम भए जाइछ तऽ भ्रान्तिमान अलङ्कार कहबैछ ।

भ्रान्तिमान सादृश्यमूलक अलङ्कार थिक जाहिमे उपमेयमे उपमानक भ्रम होइत अछि । ई भ्रम मिथ्या एवं कविप्रतिभोत्थापित होइछ । कुवलयानन्दक रचयिता अप्पय दीक्षित एकर परिभाषा दैत कहलनि जे जतय भ्रान्ति होअए ओतए भ्रान्तिमान अलङ्कार होइछ । एहि अलङ्कारमे कविकेँ नहि भ्रान्ति होइत छनि अपितु कवि-निब□-पात्रकेँ भ्रम होइत छनि । यदि कवि स्वयं भ्रममे पड़ि जाथि तऽ ने अलङ्कारत्व रहि जायत आ ने कोनो प्रकारक चमत्कारे । कारण जे भ्रान्त व्यक्ति सभटा भसिआएले गप्प कहत ।

(ख) **अतिशयोक्ति केर मूलमे रूपक अध्यवसाय ।**
युगल नलिन सँ देखु ई छुटइछ शर समुदाय ॥ (अ० मा०)

अतिशयोक्तिक मूलमे जखन रूपक अध्यवसान रहैत अछि अर्थात् उपमान द्वारा उपमेयक ज्ञान होइत अछि तऽ रूपकातिशयोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— नीलकमलक जोड़ासँ देखू जे वाणक समूह निकलि रहल अछि ।

उदाहरण :

युगल शैल सिम हिमकर देखल
एक कमल दुइ जोति रे ।
फुललि मधुरि फुल सिंदुर लुटाएल
पाँति बैसलि गजमोति रे ॥ (विद्यापति)

एतय युगल शैलसँ स्तनद्वय, हिमकरसँ मुह, कमलसँ मुह, दुइ जोतिसँ युगल नेत्र, फुललि... लोटायलसँ ओष्ठ आ गजमोतिक पँक्तिसँ दाँतक ज्ञान होइछ तेँ रूपकातिशयोक्ति भेल ।

2. भेदकातिशयोक्ति

लक्षण :

1. **भेदकातिशयोक्तिस्तु तस्यैवान्यत्ववर्णनम् ।**
अन्यदेवास्य गाम्भीर्यमन्य□र्यं महीपते: ॥ (कुव०)

जतय उपमेयक अन्यरूपमे वर्णन हो ओतय भेदकातिशयोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— एहि राजाक गाम्भीर्य एवं धैर्य दोसर छनि ।

एतय गाम्भीर्य एवं धैर्य दोसर नहियो रहलासँ दोसर कहल गेल अछि ।

2. **विषय वस्तु केँ आन कहि वर्णन भेदक मूल ।** (अ०मा०)

जखन विषय-वस्तुक आन रूपमे वर्णन होइछ तऽ भेदकातिशयोक्ति अलङ्कार कहबैछ ।

उदाहरण :

आन रूप रुचि आन छवि
सब किछु धनिक अनूप । (अ०मा०)

नायिकाक स्वरूप आ सौन्दर्य दोसरे छनि । एतय स्वरूप आ सौन्दर्य दोसर नहियो रहने दोसर कहल गेल अछि । अत: भेदकातिशयोक्ति भेल ।

3. सम्बंधातिशयोक्ति

लक्षण :

1. **सम्बन्धातिशयोक्ति: स्यादयोगे योगकल्पनम् ।**
सौधाग्राणि पुरस्यास्य स्पृशन्ति विधुमण्डलम् ॥ (कुव०)

जतय असम्बन्धमे सम्बन्ध देखाओल जाइछ सम्बन्धातिशयोक्ति कहबैछ; यथा— एहि महलक शीर्ष चन्द्रमण्डलक स्पर्श करैत अछि ।

प्रिया कटाक्षक कपट सँ
कामक वाण प्रयुक्त । (अ० मा०)

प्रियाक कटाक्षक ब्याजेँ कामदेवक वाण प्रयुक्त भेल अछि ।

एतय प्रियाक कटाक्षक 'कपट' सँ कैतवापह्नुति स्पष्ट अछि ।

रूपक एवं अपह्नुति

रूपक एवं अपह्नुति दुनूमे आरोपक प्रधानता होइछ किन्तु अन्तर एतबे अछि जे रूपकमे निषेध नहि रहैछ तथा अपह्नुतिमे निषेध रहैछ ।

24—अतिशयोक्ति

उपमान जखन उपमेयकेँ गीड़ि कए ओकरा संग अभेद स्थापना करैत अछि तऽ अतिशयोक्ति अलङ्कार होइछ ।

अतिशयोक्तिक अर्थ होइछ बेसी बढ़ा-चढ़ा कए कहब । एहिमे उपमेयक संग उपमानक अभिन्नता देखाओल जाइत अछि, सयह थिक अतिशय कथन । एहिमे सादृश्य चरम सीमापर पहुँचि जाइत अछि । कवि स्वच्छन्दतापूर्वक लौकिक सीमाक अतिक्रमण कए अपन उच्च कल्पनाशक्तिक परिचय देबामे समर्थ होइत छथि ।

लक्षण :

1. **सि□त्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते ।** (सा० द०)

जतय अध्यवसाय सि□ हो अर्थात् उपमानक द्वारा उपमेयक स्थान ग्रहण कयल गेल हो तऽ अतिशयोक्ति अलङ्कार होइछ ।

2. **विषय विदित उपमेय थिक, विषयी पुनि उपमान ।**
पचबथि यदि विषयी विषय, कहबय अध्यवसान ॥ (अ० मा०)

यदि विषयी (उपमान) विषय (उपमेय) केँ पचा लेथि तऽ अध्यवसान कहबैत अछि ।

भेद :

अतिशयोक्तिक निम्नलिखित सात गोट भेद अछि—

1. रूपकातिशयोक्ति 2. भेदकातिशयोक्ति 3. संबंधातिशयोक्ति 4. असम्बंधातिशयोक्ति 5. अक्रमातिशयोक्ति 6. चपलातिशयोक्ति 7. अत्यन्तातिशयोक्ति ।

1. रूपकातिशयोक्ति

लक्षण :

(क) **रूपकातिशयोक्तिः स्यान्निगीर्याध्यवसानतः ।**
पश्यनीलोत्पलद्वन्द्वान्निसरन्ति शिताः शराः ॥ (कुव०)

जतय उपमान उपमेयकेँ गीड़ि कए ओकरा संग अध्यवसान स्थापित करए ओतय रूपकातिशयोक्ति होइछ; यथा— देखू ! नीलकमलक जोड़ासँ श्वेत वाणक वर्षा भए रहल अछि ।

1. **भ्रान्तिमानन्यसंवित्तुल्य दर्शने ।** (का०प्र०)

भ्रान्तिमान ओ अलङ्कार थिक जाहिमे सादृश्यक कारण उपमानक उपमेयमे भ्रम होइछ ।

2. **साम्यादतस्मिंस्तद्बु□र्भ्रान्तिमान् प्रतिभोत्थितः ।** (सा०द०)

भ्रान्तिमान अलङ्कारमे एक वस्तुमे साम्यक कारण दोसर वस्तुक अनुभव होइछ ।

3. **भ्रम अवस्तुमे वस्तुकेर 'भ्रान्तिमान' कहबैछ ।**
मधुपमत्त धनि-वदनकेँ अमल-कमल बुझि लैछ ॥ (अ० मा०)

अवस्तुमे वस्तुक भ्रम भ्रान्तिमान कहबैछ; यथा— मस्त भ्रमर नायिकाक मुँहकेँ अम्लान कमल बुझि लैछ ।

उदाहरण :

1. **लखि केओ हुनक सुन्दर कपोल**
अनुमानल दुइ थिक मुकुल गोल ।
पुनि केओ लेल नवरंग जानि
तऽ केओ सेव फल लेल मानि ॥ (ईशनाथ झा)

नायिकाक सुन्दर कपोल (गाल) देखि ककरो दूटा गोल फूलक भ्रम होइत छैक, ककरो नारंगीक तऽ ककरो सेव फलक ।

2. **पैसय लागल जानि बिल,**
व्याल सूँढ़मे व्याल ।
गजो श्याम कुसियार बुझि
पकड़ि दबाओल गाल ॥ (चन्द्राभरण)

व्याल (हाथी)क सूँढ़मे व्याल (कृष्ण सर्प) बिल बुझि कए प्रवेश करए लागल आ हाथी सेहो कृष्ण-सर्पकेँ कारी कुसियार बुझि पकड़ि कए चिबा गेल ।

एतय हाथी एवं सर्प दुनूकेँ भ्रान्ति भए जाइत छैक तेँ परस्पर भ्रान्ति अलङ्कार भेल ।

भ्रान्तिमान एवं रूपक

भ्रान्तिमान एवं रूपक दुनू अभेद प्रधान अलङ्कार थिक जाहिमे अतिसाम्यक कारण उपमेयमे उपमानक निश्चयात्मक ज्ञान होइछ । रूपकक ज्ञान निश्चयात्मक रहैछ एवं भ्रान्तिमानक अनिश्चयात्मक । भ्रान्तिमानमे केवल उपमाने टाक बोध होइछ किन्तु रूपकमे उपमान एवं उपमेय दुनूक ।

भ्रान्तिमान एवं उल्लेख

भ्रान्तिमानमे भ्रम होयब अनिवार्य अछि किन्तु उल्लेखमे से नहि । भ्रान्तिमानमे कवि-निब□-पात्रक ज्ञान असत्य होइछ किन्तु उल्लेखमे नहि ।

भ्रान्तिमान एवं संदेह

संदेहमे वास्तविक एवं अवास्तविकक संदेह रहैत अछि किन्तु भ्रान्तिमानमे उपमेयमे

उपमानक निश्चयात्मक बोध भए जाइछ । संदेहमे मात्र संदेह रहैत अछि— ई थिक वा ओ — किन्तु भ्रान्तिमे असत्यकेँ सत्य मानि लेल जाइछ । संदेहमे कवि अपन बु□केँ दू दिशामे विभाजित करैत छथि किन्तु भ्रान्तिमानमे एकहि दिशामे आ सेहो निश्चयपूर्वक ।

21—अर्थश्लेष

जतय एकहि वाक्यार्थसँ दू वा दूसँ अधिक अर्थ निष्पन्न होअए ओतय अर्थश्लेष अलङ्कार होइछ ।

लक्षण :

श्लेषः स वाक्ये एकस्मिन् यत्रानेकार्थता भवेत् । (का० प्र०)

जतय एकहि वाक्यसँ दू वा दूसँ अधिक अर्थ निष्पन्न होइछ ओतय अर्थश्लेष अलङ्कार कहबैछ ।

उदाहरण :

मेघ-व्यूहसँ दिस-दिस घेरल
प्रियतम जकर रिक्तकर बेधल ।
दिवा-उत्तरा अनुखन दर्शन
उत्सुक अश्रुमुखी पथ हेरल ॥ (सा० भा०)

एतय एक दिस जँ उत्तरा (दिनक उत्तरार्ध) दिवारूपी नायिका अश्रुमुखी भए रिक्तकर (किरण रहित) मेघव्यूहसँ घेरल अपन प्रियतमक आगमनक प्रतीक्षा करैत छथि तऽ दोसर दिस अभिमन्यु-पत्नी उत्तरा अश्रुमुखी भए रिक्तकर (शस्त्र रहित)व्यूहसँ घेरल अपन पतिक आगमनक प्रतीक्षा करैत छथि । अतः अर्थश्लेष अलङ्कार भेल ।

शब्दश्लेष एवं अर्थश्लेष

शब्दश्लेषमे अनेकार्थवाची शब्दक प्रयोग होइत अछि किन्तु अर्थश्लेषमे एकार्थवाची शब्दक । शब्दश्लेषमे श्लेष शब्दाश्रित रहैत अछि जखनकि अर्थश्लेषमे अर्थाश्रित ।

22—उत्प्रेक्षा

प्रस्तुतमे अप्रस्तुतक सम्भावनाकेँ उत्प्रेक्षा अलङ्कार कहल जाइछ ।

उत्प्रेक्षा शब्द उत्+प्र+इक्षाक मेलसँ बनल अछि जकर अर्थ होइछ बलपूर्वक देखब । ई अभेद प्रधान सादृश्यमूलक अलङ्कार थिक । उत्प्रेक्षालङ्कारमे उपमानक उपमेयमे सम्भावना देखाओल जाइत अछि । एहिमे उपमेय गौण एवं उपमान प्रधान रहैत अछि ।

लक्षण :

1. **भवेत्सम्भावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना ।** (सा०द०)

जतय प्रकृतक (उपमानक) अन्य (उपमेय)मे सम्भावना हो ओतय उत्प्रेक्षा अलङ्कार होइछ ।

(आ) **आकाश नहि जलपु□ज थिक ।**
तारो न सुरधुनि फेन थिक ॥
चन्द्रो न ई कुण्डलित हरि ।
नहि पुनि कलंक सूतल मुरारि ॥ (लेखक)

2. हेत्वपह्नुति

जतय प्रस्तुतक खण्डन कए अप्रस्तुतक आरोप कयल जाय ओतए हेत्वपह्नुति अलङ्कार होइछ; यथा—

चान न तपबय न तपन निशि
सागर वारब पिंड । (अ० मा०)

चान ताप नहि दए सकैत छथि आ ने रातिमे सूर्य उगि सकैत छथि, तेँ ई सागरमे जरैत पिंड थिक ।

एतय प्रस्तुत चान आ सूर्यक खण्डन कए अप्रस्तुत पिंडक आरोप कयल गेल अछि ।

3. पर्यस्तापह्नुति

जतय उपमानक धर्मक निषेध कए उपमेयमे स्थापना कयल जाइछ ओतय पर्यस्तापह्नुति कहबैछ; यथा—

चान न ई नभ तखन की ?
सुन्दरीक मुख ओप । (अ०मा०)

आकाशमे ई चान नहि छथि तऽ आओर की ? सुन्दरीक मुहक आभा ।

4. भ्रान्तापह्नुति

भ्रान्तिक निवारणक कारणेँ भ्रान्तापह्नुति नाम थिक; यथा—

कपबय तपबय सखि !
विषम ज्वर ? न विषमशर कान । (अ० मा०)

हे सखि ! कपबैत तपबैत अछि; के ? विषम ज्वर ! नहि, कान (कृष्ण) विषमशर (प□चशर□कामदेव) ।

5. छेकापह्नुति

आनक शंकाक कारण जखन तथ्य झाँपि लेल जाइछ तऽ छेकापह्नुति कहबैछ; यथा—

गुनगुनाय पद लाग,
की प्रिय ? नहि, नूपुर देख । (अ० मा०)

पयरमे लगलासँ गुनगुनाय लगैत छैक— के स्वामी ? नहि नूपुर । एतय शंकाक कारण नूपुरक उल्लेख कयल गेल अछि ।

6. कैतवापह्नुति

जतय छल, कपट, अपह्नव आदि शब्दक द्वारा निषेध हो ओतय कैतवापह्नुति कहबैछ; यथा—

उपमा एवं उत्प्रेक्षा

उपमामे उपमेयक उपमानसँ तुलना कयल जाइछ तथा उत्प्रेक्षामे उपमानक उपमेयमे सम्भावना प्रकट कयल जाइछ । उपमा भेदाभेद प्रधान थिक तथा उत्प्रेक्षा अभेदप्रधान ।

रूपक एवं उत्प्रेक्षा

रूपकमे उपमानक उपमेयमे आरोप रहैत अछि, किन्तु उत्प्रेक्षामे सम्भावना । रूपकमे उपमेयपर उपमानक निश्चितता रहैछ, किन्तु उत्प्रेक्षामे अनिश्चितता ।

23—अपह्नुति

यदि उपमेयक निषेध कए उपमानक स्थापना कयल जाय तऽ अपह्नुति अलङ्कार होइछ ।

अपह्नुतिक अर्थ होइछ नुकायब । एहिमे उपमेयकेँ नुकाकए उपमानक स्थापना कयल जाइछ । ई सादृश्यगर्भ भेदाभेद प्रधान आरोपमूलक अलङ्कार थिक । एहिमे वास्तविक निषेध नहि भए कविकल्पित निषेध होइत अछि ।

लक्षण :

1. प्रकृतं प्रतिषिध्यान्यस्थापनं स्यादपह्नुतिः । (सा० द०)

जतय प्रकृति अर्थात् उपमेयक प्रतिषेध कए अन्य (उपमान)क स्थापना कयल जाय ओतय अपह्नुति अलङ्कार होइछ ।

2. अतश्यमारोपयितुं तथ्यापस्तिरपह्नुतिः ।
नायं सुधांशुः किं तर्हि ? व्योम गङ्गा सरोरुहम् ॥ (चन्द्रलोक)

जतय अतथ्य (उपमान)क आरोपक कारण तथ्य (उपमेय)क निषेध हो ओतय अपह्नुति अलङ्कार होइछ; यथा ई चन्द्र नहि तऽ के ? आकाशगङ्गाक कमल थिक !

भेद :

कुवलयानन्दकार अप्पय दीक्षित अपह्नुतिक 6 प्रकार माननलि अछि; जे थिक— (1) शु□ापह्नुति (2) हेत्वपह्नुति (3) पर्यस्तापह्नुति (4) भ्रान्तापह्नुति (5) छेकापह्नुति (6) कैतवापह्नुति ।

1. शु□ापह्नुति

जतय वस्तुक निषेध कए अवस्तुक आरोप होइछ, शु□ापह्नुति कहबैछ; यथा—

(अ) चान न थिक ई नभसरक श्वेत सरोज विशु□ । (अ० मा०)

ई चान नहि थिक, आकाश गङ्गाक विशु□ श्वेत कमल थिक ।

एतय वस्तु चन्द्रमाक निषेध कए अवस्तु कमलक आरोप करबामे अपह्नुति अलङ्कार होइछ ।

3. सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत् । (का० प्र०)

जतय (प्रकृत) उपमानक उपमेयमे सम्भावना हो ओतय उत्प्रेक्षा अलङ्कार होइछ ।

भेद :

उत्प्रेक्षाक प्रथमतः पाँच भाग मानल जाइत अछि, जे थिक क्रमशः — वस्तूत्प्रेक्षा, होतूत्प्रेक्षा, फलोत्प्रेक्षा, गम्योत्प्रेक्षा एवं सापह्नवोत्प्रेक्षा ।

1. वस्तूत्प्रेक्षा

जतय उपमेय उपमान दुनू शब्दतः कथित रहैत अछि, वस्तूत्प्रेक्षा कहल जाइत अछि । एकर पुनः दू भेद होइछ—
(क) उक्त विषया (ख) अनुक्त विषया ।

(क) उक्त विषया वस्तूत्प्रेक्षा

जतय प्रथमतः उत्प्रेक्षाक विषय-वस्तु कहल जाय एवं बादमे ओहिमे सम्भावना देखाओल जाय, यथा—

कनक किरिट पुर केउर नेउर,
कङ्कण किङ्किणि पाँती ।
इन्द्रनीलमणि विसकरमे जनि
कसल कनक कत भाँती ॥ (उमापति)

श्री कृष्णक शरीरमे नाना प्रकारक स्वर्णक आभूषण बूझि पड़ैछ, जेना ब्रह्मा इन्द्रनीलमणिमे सोनाकेँ कुशलतापूर्वक कसने होथि ।

एतय प्रथमतः उत्प्रेक्षाक विषय कहल गेल अछि आ बादमे ओकर सम्भावना ।

(ख) अनुक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा

जतय वस्तुक कथन बिनु कयनहि उत्प्रेक्षा हो ओतय अनुक्तविषया वस्तुत्प्रेक्षा होइछ; यथा—

देखू दू रक्तिम पिंड निकलि आयल अछि ।
जनि उदय शैल पर बाल रविक जोड़ा अछि ॥ (लेखक)

धनुष-भंगक समयमे जनकजीक आक्षेपयुक्त पश्चात्तापपर लक्ष्मणक लाल-लाल आँखि बुझि पड़ैछ जेना उदय-पर्वतपर प्रातःकालीन युगल सूर्य उगल होथि ।

एतय विषय (लक्ष्मणक आँखि) अनुक्त अछि तेँ अनुक्तविषयावस्तूत्प्रेक्षा भेल ।

2. हेतूत्प्रेक्षा

जतय अहेतुमे हेतुक कल्पना कयल जाय ओतय हेतूत्प्रेक्षा होइछ । एहिमे अकारणहुकेँ कारण मानि लेल जाइछ । एकरहु दू भेद अछि—
(अ) सि□ास्पदा (आ) असि□ास्पदा ।

(अ) सि□ास्पदा हेतूत्प्रेक्षा

जतय उत्प्रेक्षाक विषय सि□ वा सत्य हो, सि□ास्पदा हेतूत्प्रेक्षा कहबैछ; यथा—

बैरि तिमिर-मण्डल मिहिर, बढ़इत लखि तत्काल ।
प्रतीकार असमर्थ जनि, भेल क्रोध सँ लाल ॥ (एकावली-परिणय)

अन्धकाररूपी शत्रुक साम्राज्यकेँ बढ़ैत देखि आ अपनाकेँ प्रतीकारमे असमर्थ बूझि, सूर्य क्रोधसँ लाल भए गेलाह । एतय सूर्यकेँ लाल होयबाक कारण कथित अछि जकर आधार सत्य छैक ।

यद्यपि एतय बिनु कारणकेँ कारण मानि लेल गेल अछि तेँ सि□ास्पदा हेतूत्प्रेक्षा भेल।

(आ) असि□ास्पदा हेतूत्प्रेक्षा

जतय उत्प्रेक्षाक आधार असि□ हो ओतय असि□ास्पदा हेतूत्प्रेक्षा होइछ; यथा—

रवि रथ हय त्यागि गेलाह भागि कोन ठामे ।
उड्गण मण्डल जानि ताकि रहल सब ठामे ॥ (लेखक)

एतय तारागणक उदय सूर्यकेँ तकबाले नहि छैक तथापि कारण कहल गेल अछि । एकर आधार प्रसि□ अछि तेँ असि□ास्पदा हेतूत्प्रेक्षा भेल ।

3. फलोत्प्रेक्षा

जतय वस्तुत: फल नहियो रहलापर फल मानि लेल जाय ओतय फलोत्प्रेक्षा कहबैछ। एकरो दू प्रकार अछि—

(अ) सि□ास्पदा (आ) असि□ास्पदा ।

(अ) सि□ास्पदा फलोत्प्रेक्षा

जतय फलक आधार सत्य हो; यथा—

नेत्र-चपल कज्जल रंजित उन्नत पुनि वक्षोज ।
जनि नरव्याघ्र-शिकारकेँ मारथि विषशर ओज ॥ (लेखक)

चंचल नेत्र, काजरयुक्त आँखि एवं उन्नत उरोज नायिकाक सामान्य गुण थिकैक किन्तु एतय उत्प्रेक्षा कयल गेल अछि जे ओ नरव्याघ्ररूपी शिकारकेँ मारबाक हेतु विषयुक्त वाण तैयार कयलक अछि ।

(आ) असि□ास्पदा फलोत्प्रेक्षा

जतय फलक आधार असत्य वा असम्भव रहैछ; यथा—

अधिकारच्युत मैथिलीक लखि,
नभ मण्डल मे बैसि अधीर ।
कानि रहल छथि सुरगण नित
से अश्रुबुन्द जनि वर्षानीर ॥ (लेखक)

एतय वर्षाक जलमे सुरगणक क्रन्दन जन्य अश्रुबुन्दक उत्प्रेक्षा कयल गेल अछि जकर आधार असत्य अछि, तेँ असि□ास्पदा फलोत्प्रेक्षा भेल ।

4. गम्योत्प्रेक्षा

जतय वाचक शब्द (जनि, जनु इत्यादि) लुप्त रहय से गम्योत्प्रेक्षा थिक; यथा—

मधुर हास मुख मण्डित लागु ।
अमि□ाक लोभे कुशेशय जागु ॥ (विद्यापति)

मधुर हाससँ मुह सुन्दर लगैछ जेना अमृतक लोभेँ कमल जागि गेल हो ।

एतय जनि, जनु इत्यादि वाचक शब्द नहि अछि, तेँ गम्योत्प्रेक्षा भेल ।

5. सापह्नवोत्प्रेक्षा

जतय निषेधपूर्वक उत्प्रेक्षा कयल जाइछ ओतय सापह्नवोत्प्रेक्षा होइछ; यथा—

1. **सीमर - लाल - फूल - कपटेँ जनु ऊपरसँ पाटक पट ।**
कान्त वसन्त देल परिणयमे वनलक्ष्मी काँ घोघट ॥ (एकावली-परिणय)

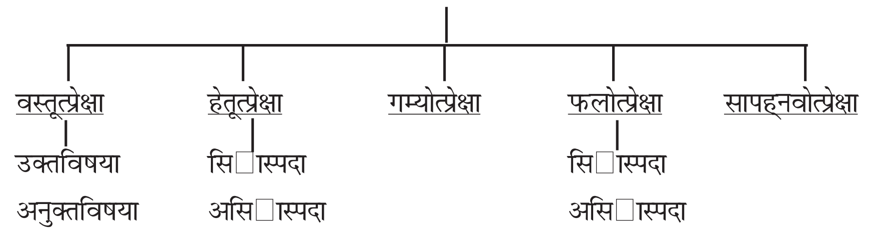
सीमर लाल फूल नहि, पाटक वस्त्र थिक जे कान्त-वसन्त कान्ता-वनलक्ष्मीकेँ परिणयमे घोघटक रूपमे देलनि अछि ।

2. **नहि सरोज थिक युग उरोज**
जनि शृंग गिरिक निकलल हो । (लेखक)

ई कमल नहि पयोधर थिक जेना कोनो पहाड़क शृंखलाक जोड़ा हो ।

एतय कमलक निषेध कए पयोधरक स्थापना कएल गेल अछि ।

उत्प्रेक्षा



हेतूत्प्रेक्षा एवं फलोत्प्रेक्षा

हेतूत्प्रेक्षामे क्रियाक सम्बन्ध मात्र कारणसँ रहैत अछि जखनकि फलोत्प्रेक्षामे क्रिया कोनो फलक आशा करैत अछि ।

भ्रान्तिमान एवं उत्प्रेक्षा

दुनू सादृश्यमूलक अलङ्कार थिक जाहिमे उपमेयमे उपमानक ज्ञान होइछ । अन्तर एतबे अछि जे उत्प्रेक्षामे वस्तुक वास्तविक ज्ञान होइछ एवं भ्रान्तिमानमे अवास्तविक । उत्प्रेक्षामे संदेह बनल रहैत अछि किन्तु भ्रान्तिमानमे निश्चयात्मक भ्रम ।

संदेह एवं उत्प्रेक्षा

संदेहमे उपमेयमे उपमानक एवं उपमानमे उपमेयक संशय होइछ अर्थात् दुनू दिस समान झुकाव रहैछ, किन्तु उत्प्रेक्षामे एकहि दिस झुकाव रहैत अछि । संदेहमे कविक विचार दोलायमान रहैत अछि, किन्तु उत्प्रेक्षामे स्थिर ।

2. द्वितीय विशेष

जखन एकहि वस्तुक अनेक प्रकारेँ वर्णन होइछ तऽ द्वितीय विशेष कहबैछ; यथा—

अन्दर बाहर दिश विदिश सबतरि हरि कह वेद । (अ०मा०)

अन्दर-बाहर, दिशामे आ बिनु दिशामे, सबठाम हरि वेद कहैत छथि ।

एतय एकहि वस्तुक अनेक प्रकारसँ वर्णन भेलासँ द्वितीय विशेष भेल ।

3. तृतीय विशेष

कोनो कार्य करैत यदि कोनो आन अशक्य कार्य सि□ भए जाय तऽ तृतीय विशेष होइछ; यथा—

गुरु आज्ञा लए वाटिका, पुष्प चयनहित अयलहुँ ।
एतए सरस सखि मध्य विराजित वैदेहीकेँ पओलहुँ ॥ (लेखक)

एतय रामचन्द्रजी पुष्प चयन हित वाटिका आयल छलाह किन्तु सीताकेँ देखब एकटा अशक्य कार्य सि□ भए गेल ।

विशेष एवं विरोध

विशेषमे आधाराधेयभाव सम्बन्ध होइछ आ विरोधमे दू विरोधी वस्तु एकहि स्थलमे वर्णित रहैछ । विरोध नियम भेल आ विशेष अपवाद । दुनू अलंकारमे वास्तविक विरोध नहि भए ओकर परिहार भए जाइत अछि । विरोधमे दू टा विरोधी वस्तुकेँ एक स्थानमे वर्णनसँ चमत्कार होइछ आ एहिमे आधारक अभावेमे आधेयक वर्णनसँ चमत्कार अबैछ ।

53—व्याघात

जतय एक व्यक्तिक द्वारा सि□ कएल गेल वस्तुकेँ दोसर व्यक्ति ओही साधनसँ ओकर विपरीत फल सि□ करए तऽ व्याघात अलङ्कार होइछ ।

व्याघात विरोधमूलक अलङ्कार थिक जाहिमे कवि दू विरोधी साधनक वर्णन करैत छथि । एहि अलङ्कारमे कोनो कार्यक सम्पादनक हेतु दू व्यक्ति होइत छथि जे परस्पर विरोधी विचार रखैत छथि । एक जँ कार्यक सम्पादन करैत छथि तऽ दोसर ओकर विपरीत क्रिया द्वारा ओकरा निष्फल बनबैत छथि ।

लक्षण :

1. **यद्यथा साधितं केनाप्यपरेण यदन्यथा ।**
तथैव यद्विधीयेत स व्याघात इति स्मृतः ॥ (का०प्र०)

जतय कोनो एकक द्वारा एक उपायसँ सि□ कार्य कोनो दोसरक द्वारा अभीष्ट सि□क प्रदर्शनमे ओहि उपायसँ विपरीत कयल गेल प्रतिपादित होअए तऽ व्याघात अलङ्कार होइछ ।

2. **स्याद्व्याघातोऽन्यथाकारि तथाऽकारि क्रियेत चेत् ।**
यैर्जगत्प्रीयते हन्ति तैरेव कुसुमायुधः ॥ (कुव०)

व्याघात ओ अलङ्कार थिक जाहिमे कोनो कार्यविशेषक साधनक रूपमे प्रसि□ कोनो

भेद :

अप्पय दीक्षितक अनुसारेँ एकर तीन भेद अछि; जे थिक—
1. असम्भवद्वस्तुसम्बन्धावली 2. पदार्थगा 3. सदसदर्थबोधिका ।

1. असम्भवद्वस्तुसम्बन्धावली

लक्षण :

1 **वाक्यार्थयोः सदृशयोरैक्यारोपो निदर्शना ।**
यद्दातुः सौम्यता सेयं पूर्णेन्दोरकलङ्कता ॥ (कुव०)

जतय दू समान वाक्यार्थमे ऐक्यारोप्य हो ओतय ई निदर्शना होइछ; यथा— जे दानी व्यक्तिक सौम्यता सैह पूर्ण चन्द्रक निष्कलङ्कता थिक ।

2. **समतुल दुइ वाक्यार्थमे ऐक्य 'निदर्शन' जैह ।**
पुनिम चान अकलङ्कता दानिक मृदुता सैह ॥ (अ० मा०)

निदर्शना ओ अलङ्कार थिक जतय दू समान वाक्यमे ऐक्यारोप्य हो; यथा— जे पूर्णिमाक चानक निष्कलङ्कता थिक सैह दानीक मृदुता ।

उदाहरण :

पछिमहुँ रवि उग, हो शिशिर आगि ।
कर्कशता गिरि वरु सकथि त्यागि ॥
भए जाए उष्ण हिम, अचल बात ।
हो किन्तु हरिक नहि मृषा बात ॥ (एकावली-परिणय)

एतय प्रत्येक वाक्य एक दोसरासँ सर्वथा भिन्न अछि किन्तु कवि उपमेयक संग सभक सम्बन्ध जोड़ि देने छथि । हरिक बात मृषा नहि हो, ई उपमेय वाक्य थिक । एकरहि पुष्टिक हेतु अनेक उपमान वाक्यक योजना भेल अछि ।

2. पदार्थगा निदर्शना

ई द्वितीय निदर्शना थिक । जतय उपमेयक गुण उपमानमे एवं उपमानक गुण उपमेयमे स्थापित कयल जाय ओतय पदार्थगा निदर्शना होइछ ।

लक्षण :

पदार्थवृत्तिमप्येके वदन्त्यन्यां निदर्शनाम् ।
त्वन्नेत्रयुगलं धत्ते लीलां नीलाम्बुजन्मनोः ॥ (कुव०)

पदार्थ सम्बन्धी एक दोसर निदर्शना मानल जाइछ; यथा— हे सुन्दरि ! अहाँक नेत्रयुगल दूटा नीलकमलक शोभाकेँ धारण कए रहल अछि ।

ई दू तरहेँ होइछ— (1) उपमेयक गुणक उपमानमे स्थापनसँ (2) उपमानक गुणक उपमेयमे स्थापनसँ ।

उपमेयक गुण उपमानमे

उदाहरण :

1. **अहँक वदन केर चारुता भेल चानमे लीन ।**
   च□चलता पुनि नयन केर ख□जन लेलनि छीन ॥ (लेखक)

एतय वदनक चारुताक चानमे आ नेत्रक चपलताक ख□जनमे स्थापना भेल अछि ।

उपमानक गुण उपमेयमे

उदाहरण :

जे अति तपबथि जीवकेँ, क्षणिक पाबि अधिकार ।
तनिक अन्तगति बुझबइत, भानु डुबल जलधार ॥ (एकावली–परिणय)

एतय उपमान थिक 'अन्त गति' जकर गुण उपमेय वाक्य 'भानु..... मझधार' मे स्थापित भए गेल ।

3. सदसदर्थबोधिका निदर्शना

जतय नीक वा खराब गुणक द्वारा ककरो नीक वा खराब ज्ञान देल जाय तऽ सदसदर्थबोधिका निदर्शना होइछ ।

लक्षण :

अपरां बोधनं प्राहुः क्रियायाऽसत्सदर्थयोः ।
नश्येद्राजविरोधीति क्षीणं चन्द्रोदये तमः ॥
उदयन्नेव सविता पद्मेष्वर्पयति श्रियम् ।
विभावयन् समृ□ीनां फलं सुहृदनुग्रहः ॥ (कुव०)

जतय कोनो विशिष्ट क्रियासँ युक्त असत् वा सत् अर्थक प्रतीति होइछ ओतय निदर्शना होइछ; यथा— राजाक विरोधी नष्ट होइत छथि तेँ चन्द्रोदय भेलापर अन्हार नष्ट भेल (एतय असत् अर्थ भेल) । पुनः समृ□िक फल मित्रपर कृपा करब थिक ई देखयबा ले' सूर्योदय होइतहि कमलमे शोभाक स□चार होइछ ।

सद्गुणसँ दोसराकेँ सद्गुण देब

उदाहरण :

फलवाला तरुवर सिखबइए झुकल रहक थिक ।
दम्भ-कपट तजि विद्वज्जनकेँ नम्र बनक थिक ? (लेखक)

वृक्षमे झुकाव ओकर सद्गुण थिक आ तेँ ओ हमरालोकनिकेँ सद्गुणक शिक्षा दैत अछि ।

2. असद्गुणसँ दोसराकेँ असद्गुणक शिक्षा देब

उदाहरण :

1. **तुला सिखाबय सतत ई अथिर रूप, धन, जीव ।**
   सारहीन संसार मे दुख-सुख अपन नसीब ॥ (लेखक)

जखन दू वस्तु परस्पर एक दोसराक सहायतार्थ प्रतिपादित होअए तऽ अन्योन्य अलङ्कार होइछ; यथा— रातिसँ चन्द्रमाक शोभा बढ़ैत अछि एवं चन्द्रमा रातिक शृंगार थिकाह ।

2. अन्योन्यमुभयोरेकक्रियायाः कारणं मिथः । (सा०द०)

अन्योन्य ओ अलङ्कार थिक जे परस्पर दू पदार्थक द्वारा कयल गेल एक क्रियाक वर्णनमे देखल जाइछ ।

उदाहरण :

कपिपति राम राम कपिपतिकेर दुःख निवारल ।
दिन दिनकर दिनकर पुनि दिनक शृंगार बढ़ाओल ॥ (लेखक)

एतय राम द्वारा सुग्रीव एवं सुग्रीव द्वारा रामक कष्टक निवारणमे परस्पर उपकार अछि। पुनः दिनक शोभा सूर्य आ सूर्यक शोभा दिनमे परस्पर उपकारक भाव अछि । अतः अन्योन्य अलंकार भेल ।

52—विशेष

जतय बिनु प्रसि□ आधारहुक आधेय वर्णित होअए ओतय विशेष अलङ्कार होइछ ।

एहि अलंकारक ई वैशिष्ट्य थिक जे बिनु प्रसि□ आधार रहनहु आधेयक वर्णन होइछ । एहिमे कवि कल्पनाप्रसूत आधाराधेयभाव सम्बन्ध रहैछ ।

लक्षण :

1. **यदाधेयमनाधारमेकं यानेक गोचरम् ।**
   किंचित्प्रकुर्वतः कार्यमशक्यस्येतरस्य वा ॥
   कार्यस्य कारणं दैवाद्विशेषस्त्रिविधस्ततः (सा०द०)

विशेष अलङ्कारमे—

1. बिनु आधारक आधेयक वर्णन होइछ,
2. एकहि वस्तु अनेक स्थानपर एक समयमे विराजमान वर्णित होअए ।

भेद :

एकर निम्नलिखित तीन विभेद कयल गेल अछि— 1. प्रथम विशेष 2. द्वितीय विशेष 3. तृतीय विशेष ।

1. प्रथम विशेष

जतय बिनु आधारहुक आधेयक विशेष वर्णन होअए ओतय प्रथम विशेष होइछ; यथा—

कथाशेष कवि मृत अमृत कवित जगत चिर शेष । (अ०मा०)

कवि तऽ मरि गेलाह किन्तु हुनक काव्य एहि संसारमे चिरस्थायी भए गेलनि ।

एतय कवि— आधार समाप्त छथि, किन्तु आधेय-यश प्रतिष्ठित; तेँ प्रथम विशेष भेल ।

सिंहिका सिंधु बिच मुह बओने
बजरंगीकेँ न समाए सकलि ॥ (लेखक)

एतय आधार सुरसा एवं सिंहिका थिक जे आधेय हनुमानक समक्ष न्यून भए जाइछ अर्थात् आधारसँ आधेयक अधिक्य वर्णित अछि तेँ द्वितीय अधिक भेल ।

अधिक एवं विरोध

दुनू विरोधमूलक अलङ्कार थिक जाहिमे वास्तविक नहि, अवास्तविक विरोध रहैछ । एहिमे आधाराधेय सम्बन्ध रहैछ आ तकरे आधिक्य वर्णन होइछ, किन्तु विरोधमे दूटा विरोधी वस्तुकेँ एकठाम राखिकए ओहिमे सम्बन्ध जोड़ल जाइछ । एहिमे विरोधक परिसर संकुचित होइछ, किन्तु विरोधमे विस्तृत ।

50—अल्प

जतय अत्यन्त छोटहु आधेयसँ छोट आधारक वर्णन होअए ओतय अल्प अलङ्कार होइछ ।

ई अधिक अलंकारक विपरीत अलङ्कार थिक जाहिमे आधेयसँ आधारकेँ छोट कहल जाइछ ।

लक्षण—उदाहरण :

आधेयहुसँ सूक्ष्मतर आधारे हो अल्प ।
अङुठी करवलया लटकि अछि जपमाला कल्प ॥ (अ०मा०)

जतय अत्यन्त छोट आधेयहुसँ छोट आधारक वर्णन होअए ओतय अल्प अलङ्कार होइछ; यथा— अंगूठी हाथक बाला बनि जपमालाक काज कए रहल अछि ।

एतय हाथ आधार एवं अंगूठी आधेय थिक । अतः छोट आधेयहुसँ छोट आधारक वर्णन अछि ।

51—अन्योन्य

जतय दू टा वस्तु मिलिकए एकहि कार्यक सम्पादन करए ओतय अन्योन्य अलङ्कार होइछ ।

अन्योन्यक अर्थ अछि—अन्य+अन्य । एहिमे दू टा वस्तु एक दोसराक सहायके रहैत अछि । ई व्यावहारिके घटनापर आधारित अछि, तेँ एक दोसराक मदति करैछ । हमरो अहाँकेँ यदि क्यो मदति करैत अछि तऽ ओकर प्रतिबदल चुकयबाक इच्छा रहैत अछि । ई विरोधगर्भ प्रधान अलङ्कार थिक ।

लक्षण :

1. **अलङ्कार अन्योन्य थिक परस्परक उपकार ।**
रजनीसँ शोभा शशिक, शशि रजनीक श्रृंगार ॥ (अ०मा०)

2. **पद कन्दुक सिखबैत अछि**
सहि-सहि लातक मारि ।
लातहि मारन जोग थिक
पशु गवाँर अमरारि ॥ (लेखक)

दृष्टान्त एवं निदर्शना

दृष्टान्तमे दूटा वाक्य अपन भिन्न-भिन्न अस्तित्व रखैत अछि किन्तु निदर्शनामे दू भिन्न वाक्य एक दोसराक संग सम्बंध जोड़ि लैत अछि । दुनूमे वाक्यगत साम्य एवं बिम्बप्रतिबिम्बभाव रहैत अछि । दृष्टान्तमे उपमेयोपमानक धर्म भिन्न-भिन्न होइछ किन्तु ओकर उल्लेख नहि रहैत अछि । निदर्शनामे दुनूक धर्म एकहि रहैत अछि जकर संकेतो रहैत अछि । दृष्टान्तमे दुनू वाक्यक पृथक्-पृथक् अर्थ बुझलाक बाद ओहिमे बिम्ब-प्रतिबिम्बभावक बोध होइछ किन्तु निदर्शनामे बिम्ब-प्रतिबिम्बभावक बोध बिनु भेनहि अर्थ निष्पन्न होइछ ।

प्रतिवस्तूपमा एवं निदर्शना

दुनूमे दू वाक्यक योजना होइत अछि, जाहिमे साधारण धर्मक कारण साम्य देखाओल जाइछ । प्रतिवस्तूपमामे उपमेय एवं उपमान वाक्य परस्पर पूर्ण अर्थक बोध करबैछ जखनकि निदर्शनामे दुनू मिलिकए अर्थक निष्पादन करैछ । प्रतिवस्तूपमामे वस्तु-प्रतिवस्तुभाव रहैछ आ निदर्शनामे बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव । प्रतिवस्तूपमामे एकहि साधारण धर्म शब्दान्तरसँ कहल जाइछ किन्तु निदर्शनामे बिम्ब-प्रतिबिम्बभावसँ सादृश्य देखाओल जाइछ ।

31—व्यतिरेक

जखन उपमानक अपेक्षा उपमेयक उत्कर्ष वर्णित हो तऽ व्यतिरेक अलङ्कार होइछ ।

व्यतिरेकक अर्थ होइछ आधिक्य । एहि अलङ्कारमे कविक ध्यान सतत उपमेयक उत्कृष्टता सि□ करबामे लागल रहैछ । व्यतिरेकमे उपमेयक उत्कर्ष एवं उपमानक अपकर्ष वर्णनमे कारण सेहो कहल जा सकैछ । उपमेय जेकाँ एकरो दूटा तत्त्व अछि साधर्म्य वा वैधर्म्य ।

लक्षण :

1. **उपमानाद्यदन्यस्य व्यतिरेकः स एव सः ।** (का०प्र०)

व्यतिरेक ओ अलङ्कार थिक जाहिमे उपमानसँ उपमेयक व्यक्तिरेक (आधिक्य) कहल जाय ।

2. **व्यतिरेको विशेषश्चेदुपमानोपमेययोः ।**
शैला इवोन्नताः सन्तः किन्तु प्रकृतिकोमलाः ॥ (कुव०)

यदि उपमान एवं उपमेयमे विशेषता (आधिक्य वा न्यूनता) पाओल जाय तऽ व्यतिरेक अलङ्कार होइछ; यथा— सन्तसभ पहाड़ जेकाँ उन्नत किन्तु स्वभावसँ कोमल होइत छथि ।

एतय उपमान (पहाड़)सँ उपमेय (सन्त)क आधिक्य वर्णित अछि कारण जे पहाड़मे

कठोरता अछि किन्तु सन्तमे कोमलता ।

3. उपमेयक उपमानसँ हो व्यतिरेक विशेष ।
गिरि सम उन्नत सुजन छथि किन्तु मृदुल सविशेष ॥ (अ०मा०)

उपमेयक यदि उपमानसँ व्यतिरेक हो अर्थात् आधिक्य हो तऽ व्यतिरेकालङ्कार होइछ; यथा— सुजन पहाड़ सन उन्नत छथि किन्तु स्वभावसँ कोमल ।

भेद :

एकर मुख्य भेद निम्नलिखित अछि—

1. प्रथम व्यतिरेक 2. द्वितीय व्यतिरेक 3. तृतीय व्यतिरेक 4. चतुर्थ व्यतिरेक ।

1. प्रथम व्यतिरेक

जतय उपमेयक उत्कर्ष एवं उपमानक अपकर्ष वर्णनमे कारण कहल जाय ओतय प्रथम व्यतिरेक होइछ; यथा—

माए-बाप-गुरु-सेवामे आसक्त ।
मूर्खो नीक, न पुनि बुध ततए विरक्त ॥ (एकावली-परिणय)

एतय मूर्खक नीक एवं बुधक खराबक कारण कहल गेल अछि तेँ प्रथम व्यतिरेक भेल ।

2. द्वितीय व्यतिरेक

जतय उपमेयक उत्कर्ष वर्णनमे कारणक उल्लेख कयल गेल हो, द्वितीय व्यतिरेक कहबैछ; यथा—

पीन पयोधर विकच सरोरुह सब प्रकार अछि तुल्य ।
आकर्षण अछि प्रबल प्रथममे ई गुण अमित अतुल्य ॥ (लेखक)

एतय पीन पयोधर (पुष्ट स्तन) एवं विकच सरोरुह (प्रस्फुटित कमल) सब तरहेँ समान अछि किन्तु पहिलमे (पयोधरमे) प्रबल आकर्षण छैक जे अत्यन्त अतुल्य बना दैछ ।

अत: एहि विशिष्ट गुणक कारण द्वितीय व्यतिरेक भेल ।

3. तृतीय व्यतिरेक

जतय उपमानक अपकर्षक सकारण वर्णन हो, तृतीय व्यतिरेक कहबैछ; यथा—

जौँ श्रीखण्ड सौरभ अति दुर्लभ
तौँ पुनि काठ कठोरे ।
जौँ जगदीश निशाकर तौँ पुनि
एकहि पक्ष इजोरे ॥
मनि समान अओरो नहि दोसर
तनिकहु पाथर नामे । (विद्यापति)

एहि सबमे उपमानक अपकर्षक कारण सहित वर्णन भेल अछि । उपमेय माधव एहि सबसँ उत्कृष्ट छथि ।

उदाहरण :

1. शिक्षा प□ति बदलए पग-पग
क्षण-क्षण बदलए इच्छा ।
छात्र-कदम्ब उन्नति करबाले'
'चिट' सँ देत परीक्षा । (लेखक)

एतय परीक्षामे पास करबाले' चिटसँ परीक्षा देब एक विचित्र क्रिया थिक ।

2. हाथीकेँ अपना बस करबा लए अंकुश गाडू ।
बड़दहुकेँ सीधा चलबै लए डंडा मारू ॥
बुधजनसँ ईप्सित पएबा लए जीवन बाँधू ।
गृहिणीसँ पाछू चलबै लए निज केँ साधू ॥ (लेखक)

एतय अननुरूप एवं विचित्र कार्यक वर्णन भेल अछि ।

49—अधिक

आधार एवं आधेयमेसँ कोनो एकक आधिक्य वर्णन अधिक अलङ्कार कहबैछ ।

एहि अलङ्कारमे आधार वा अधेयमेसँ कोनो एकटाक आधिक्य वर्णन रहैछ । जे कोनो वस्तुकेँ अपनापर आश्रित राखि सकैछ से थिक आधार एवं आश्रित रहनिहार आधेय । एकरा क्रमश: आश्रय एवं आश्रित सेहो कहल जाइछ । एहिमे आधिक्यक वास्तविक वर्णन नहि भए काल्पनिक रहैछ । ई विरोधमूलक अलङ्कार थिक ।

लक्षण :

1. आश्रयाश्रयिणोरेकस्याधिक्येऽधिकमुच्यते । (सा०द०)

जखन आधेय वा आधारमेसँ ककरहु एकक आधिक्य वर्णन होइछ तऽ अधिक अलङ्कार कहबैछ ।

भेद :

एकर दू भेद अछि— 1. प्रथम अधिक 2. द्वितीय अधिक ।

1. प्रथम अधिक

जतय आधारकेँ आधेयसँ पैघ कहल जाय; यथा—

नाना तनुधारी त्रिभुवनचारी पद दुइमे पृथ्वी नापि लेलनि ।
हनुमत सन हृदय विशाल ककर ? तनि प्रभुकेँ उरमे धारि लेलनि ॥ (लेखक)

एतय हनुमतक हृदय आधार थिक जे विशाल अछि तेँ प्रथम अधिक भेल ।

2. द्वितीय अधिक

जतय आधारसँ आधेयकेँ अधिक कहल जाय; यथा—

कतबो मुह बओलनि नाग मातु
पर हनुमतकेँ न अँटाए सकलि ।

1. प्रथम सम

जतय अनुरूप वस्तुमे यथायोग्य सम्बन्धक वर्णन हो ओतय प्रथम सम अलङ्कार होइछ; यथा—

उचित अंग उपयुक्त थिक वस्तु विशेषक सङ्ग ।
मेहदी हाथहि पीक मुख काजर नयनहि रङ्ग ॥ (लेखक)

एतय मेहदीक हाथमे, पीकक मुहमे एवं काजरक नयनमे यथायोग्य सम्बन्ध अछि ।

2. द्वितीय सम

एहिमे कारण एवं कार्यक अनुरूप वर्णन होइछ; यथा—

रचल विधाता सुन्दरिक अङ्ग-अङ्ग उरु ठोर ।
जेँ उरुमे काठिन्य अति तेँ अति उरज कठोर ॥ (लेखक)

एतय हृदयक कठिन भेलाक कारणहि स्तनकेँ कठोर कहल गेल अछि ।

3. तृतीय सम

एहिमे बिनु अनिष्टक अभीष्ट प्राप्ति भए जाइछ; यथा—

कवि-कोकिल चलला गंगा तट बाट पड़ल थकिआइ ।
मा गंगा, हा पुत्र ! पुत्र ! कहि अपनहि अयली धाइ ॥ (लेखक)

कविकोकिल गंगालाभ करबाले' जखन चलला आ मार्गमे थाकि गेलाह तऽ माँ गंगा स्वयं आबि कए हुनका दर्शन देलनि ।

48—विचित्र

वा□छत फलप्राप्ति करबाले' ओकर विरु□ कार्य करबाकेँ विचित्र अलङ्कार कहल जाइछ ।

ई विरोधगर्भ अलङ्कार थिक जाहि माध्यमसँ कवि विचित्रता देखबैत, चमत्कार देखबैत छथि । एहिमे अभीष्ट प्राप्तिक हेतु विचित्र वा विरोधी क्रियाक उल्लेख कयल जाइछ ।

लक्षण :

फल इच्छा विपरीत यदि क्रिया विचित्र प्रयुक्त ।
उन्नति हित नति गुरुक पद करथि सन्त विनियुक्त ॥ (अ०मा०)

अभीष्ट फलप्राप्तिक हेतु यदि ओकर विपरीत क्रियाक प्रयोग कयल जाय तऽ विचित्र अलङ्कार होइछ; यथा— सन्तलोकनि उन्नतिक हेतु विनम्र भए गुरुक पयरपर झुकैत छथि ।

एतय अभीष्ट अछि उन्नति प्राप्त करब, किन्तु विचित्र क्रिया प्रयुक्त भेल अछि— गुरुक पयर पर झुकब ।

1. **विचित्रं तद्विरु□स्य कृतिरिष्टफलाय चेत् ।** (सा०द०)

विचित्र ओ अलङ्कार थिक जकरा अभीष्ट अर्थक प्राप्तिक हेतु अननुरूप वा विरु□ कार्यक वर्णनमे देखल जाय ।

4. चतुर्थ व्यतिरेक

जखन उपमेयक उत्कर्ष एवं उपमानक अपकर्षक कारण नहि कहल जाय तऽ चतुर्थ व्यतिरेक होइछ; यथा—

ससधर-सहस-सार बटुराब ।
तइयो न वदन पटन्तर पाब ॥ (कवि भीषम)

एतय उपमेय वदनक उत्कर्षता एवं उपमान ससधरक अपकर्षताक कारण नहि कहल गेल अछि ।

प्रतीप एवं व्यतिरेक

प्रतीप साधर्म्य मूलक अलङ्कार थिक एवं व्यतिरेक वैधर्म्य मूलक । व्यतिरेकमे साधर्म्यक संग वैधर्म्यसँ सेहो उपमेयक उत्कृष्टता देखाओल जाइछ किन्तु प्रतीपमे केवल साधर्म्यसँ । दुनूमे उपमानक अनादरक भाव अछि । व्यतिरेकमे उपमेयक प्रधानता देखयबाले प्रतीप जेकाँ उपमेय एवं उपमानक क्रम नहि बदलल जाइत अछि ।

32—सहोक्ति

जखन 'सह' अर्थबोधक शब्दक द्वारा एकहि शब्द दू अर्थक वाचक भए जाइछ तऽ सहोक्ति अलङ्कार होइछ ।

ई अलङ्कार व्याकरणक आधारपर बनल अछि । सह, साकम्, सार्ध्वम्, समम् इत्यादिक योगमे तृतीया विभक्ति होइछ आ सभक अर्थ थिक— संग । पाणिनिक सूत्र अछि— **सहयुक्तेऽप्रधाने** । एहिमे एक अर्थ प्रधान आ दोसर गौण होइछ, किन्तु दुनूक हेतु एकहि क्रियापदक प्रयोग होइत अछि । उपमान गौण एवं उपमेय प्रधान रहैत अछि । ठीक ओही तरहेँ जेना 'सह'क योगमे एकटा प्रधान आ दोसर अप्रधान रहैत अछि, किन्तु जकरा संग प्रथमा विभक्ति रहैछ, तकर प्रधानता होइछ आ तृतीया विभक्तिवलाक अप्रधानता ।

लक्षण :

1. **सहार्थस्य बलादेकं यत्रस्याद्वाचकंद्वयोः ।**
   सा सहोक्तिर्मूलभूतातिशयोक्तिर्यदाभवेत् ॥ (सा०द०)

सहोक्ति अलङ्कारमे सहक अर्थवलासँ एक वाचक दू अर्थक प्रतीति करबैत अछि । एकर जड़िमे अतिशयोक्ति रहैत अछि ।

2. **सहोक्तिः सहभावश्चेद्भासते जनर□जनः ।**
   दिगन्तमगमतस्य कीर्त्तिः प्रत्यर्थिभिः सह ॥ (कुव०)

जतय दू वस्तुक एक संग अस्तित्व चमत्कारक होअए ओतय सहोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— ओहि राजाक कीर्त्ति सायकक संग सब दिशामे पसरि गेल ।

3. **सहभावक यदि वर्णना हो 'सहोक्ति' रुचिवन्त ।**
   विखरल दस दिस रिपु सङहि वीरक कीर्त्ति अनन्त ॥ (अ० मा०)

यदि सहभावक वर्णन हो तऽ सहोक्ति अलङ्कार कहबैछ; यथा— दशो दिशामे शत्रुक संगहि वीरक अनन्त कीर्त्ति पसरि गेल । एतय 'सङ' वाचक 'रिपु' एवं 'वीरक कीर्त्ति'क हेतु प्रयुक्त भेल अछि आ दुनूक हेतु मात्र एकहिटा क्रिया काज कए रहल अछि— 'विखरल' ।

उदाहरण :

कुमुद समेत दशो दिशा, विकसित शशिक इजोर ।
जन-लोचन-सङ्गहि तथा, प्रमुदित भेल चकोर ॥ (एकावली-परिणय)

एतय पूर्वा□मे समेत एवं उत्तरा□मे सङ्गहि 'सह'क पर्याय थिक जे दू-दू टा शब्दक वाचक बनल अछि आ एहि सभक हेतु मात्र एकहिटा क्रियापदक प्रयोग भेल अछि— विकसित ।

33—विनोक्ति

कोनो वस्तुक अभावमे जखन कोनो वस्तुकेँ सुन्दर वा असुन्दर कहि देल जाइछ तऽ विनोक्ति अलङ्कार होइछ ।

विनोक्ति सहोक्तिक विपरीत अलङ्कार थिक । एहिमे बिना वा तत्सदृश वस्तुक प्रयोग होयब आवश्यक मानल जाइछ । कोनो वस्तुक बिना कोनो वस्तुक सुन्दरता वा असुन्दरता भेलासँ विनोक्ति अलङ्कार होइछ ।

लक्षण :

विनोक्तिश्चेद् विना कि□चत् प्रस्तुतं हीनमुच्यते ।
विद्या हृद्यापि सा विद्या विना विनय सम्पदम् ॥ (कुव०)

जतय 'बिना'क प्रयोग द्वारा कोनो वस्तुकेँ न्यून कहल जाय ओतय विनोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— विद्या रमणीय होइतहु विनयक बिना निन्द्य अछि ।

2. **विनोक्तिर्यद्विनान्येन नासाध्वन्यद्साधु वा ।** (सा०द०)

विनोक्ति ओ अलङ्कार थिक जाहिमे एक वस्तुक अभावमे दोसर वस्तुकेँ साधु वा असाधु कहल जाइछ ।

3. **बिना कथुक यदि बिथुत हो प्रकृत 'विनोक्ति' बनैछ ।**
विनु दाने धन, बिनु विनय विद्या विफल रहैछ ॥ (अ०मा०)

कोनो वस्तुक अभावमे यदि कोनो वस्तु खराब भए जाए तऽ विनोक्ति अलङ्कार कहबैछ; यथा— बिना दानसँ धन तथा बिना विनयसँ विद्या विफल थिक ।

एतय बिना शब्दक प्रयोग द्वारा धन तथा विद्याकेँ विफल बनाओल गेल अछि ।

उदाहरण :

1. **तुअ दरसन विनु तिलओ न जीव ।**
जइयो कलामति पीयुख पीव ॥ (विद्यापति)

कतबो अमृत लोक (कलामति) पीबि लिअए किन्तु ईश्वरक दर्शन बिनु जीवि नहि सकैछ ।

2. गुण वैषम्य

असित लेखनी राखल छल तहिठाम ।
लिखलन्हि तहिसँ लालहि लाल प्रमाण ॥ (लेखक)

एतय कारी कलमसँ लाल लिखबामे गुण वैषम्य जन्य द्वितीय विषम भेल ।

3. तृतीय विषम

जतय कर्त्ताकेँ अभीष्टक बदलामे अनिष्टक प्राप्ति होइछ; यथा—

नाम यथार्थ मानि पथिकव्रज
स्फुट अशोककेँ सेवल ।
ओ पुनि मदन दहन उज्ज्वल कए
शोक बढ़ाओल केवल ॥ (एकावली-परिणय)

पथिक अशोकक (जतय शोक नहि होअए) गाछतर ओकर नाम सुनि पहुँचल किन्तु ओ कामशोक अत्यधिक बढ़ा देलकैक । एतय कर्त्ताकेँ इष्टक बदला अनिष्टक प्राप्ति भए गेलैक ।

विरोधाभास एवं विषम

विरोधाभासमे वाह्यतः विरोधी वस्तुक सम्बन्ध रहैत छैक, किन्तु विषममे असमान वस्तुक सम्बन्ध रहैछ । विरोधाभासक विरोध अर्थज्ञानक पश्चात् समाप्त भए जाइछ, किन्तु विषमक विरोध सर्वदाक हेतु रहैछ । विरोधाभासमे विरोधक आभास मात्र रहैछ, किन्तु एहिमे वस्तुतः विरोध ।

47—सम

जतय दूटा समान वस्तुक परस्पर योग्य सम्बन्धक वर्णन होअए ओतय सम अलङ्कार होइछ ।

ई विषमक विपरीत अलङ्कार थिक । एहिमे समान वस्तुमे यथायोग्य सम्बन्धक वर्णन रहैत अछि ।

लक्षण :

1. **समं स्यादानुरूपेण श्लाघा योग्यस्य वस्तुनः ।** (सा०द०)

जतय दू टा अनुरूप वस्तुक संसर्गक वर्णन हो ओतय सम अलङ्कार होइछ ।

2. **दुहु अनुरूपक वर्णना, संगत 'सम' अभिधान ।**
चन्द्र-चन्द्रिका, मदन-रति, अलि-कमलहुक मिलान ॥ (अ०मा०)

जतय दू टा अनुरूप वस्तुक सम्बन्ध देखाओल जाइछ ओतय सम अलङ्कार होइछ; यथा— चन्द्रकेँ चन्द्रिकासँ, मदनकेँ रतिसँ एवं भ्रमरकेँ कमलसँ मिलान भेल ।

भेद :

एकर तीन भेद अछि— 1. प्रथम सम 2. द्वितीय सम 3. तृतीय सम ।

भेद :

एकर निम्नलिखित तीन भेद अछि—

1. प्रथम विषम 2. द्वितीय विषम 3. तृतीय विषम ।

1. प्रथम विषम

जखन दूटा बेमेल वस्तुमे परस्पर सम्बन्ध देखाओल जाइछ तऽ ओतय प्रथम विषम होइछ; यथा—

1. **जसु मुख चाँद-सुधामय-हास ।**
गरलहि भरल नयन-परगाश ॥ (गोविन्द दास)

एक दिस नायिकाक मुखचन्द्रसँ अमृत तुल्य हास निकलि रहल अछि आ ओही ठाम आँखिसँ विष टपकि रहल अछि । तात्पर्य ई जे हिनक हास देखि लोकके̐ जहिना आनन्द भेटैत छैक, तहिना नेत्रसँ आहत भए जाइत अछि ।

एतय एकहि स्थल पर दू परस्पर विरोधी (विष एवं अमृत)मे सम्बन्ध देखाओल गेल अछि, अतः प्रथम विषम भेल ।

2. **दनुजाधिप ! जनु अगुताइ, त्रस्त,**
छथि आइ अधिक ई विपतिग्रस्त ।
कत तात-नृपति-घर सौख्य भोग,
कत आकस्मिक अपहरण योग ॥ (एकावली-परिणय)

एतय एक दिस जँ राजा घरक सुखभोग तऽ दोसर दिस आकस्मिक अपहरणक दुख अछि ।

2. द्वितीय विषम

जतय कारण एवं कार्यक गुण एवं क्रिया एक दोसराक विरोधी होअए ओतय द्वितीय विषम होइछ; यथा—

1. क्रिया वैषम्य

(क) **सुन्दरि ! तोहर चरित विपरीते ।**
काजर गरलहि भरल नयन शर
हनलिह अन्तर चित्ते ॥ (गोविन्द दास)

किन्तु हे सुन्दरी ! अहाँक चरित्रमे वैपरीत्य पाओल, कारण जे जकरा हम कमल वा चपला वा चन्द्रमा बुझैत छलिऐक ताहिसँ कज्जल-रूप विषसँ अनुलिप्त एहन नयन रूप वाण अहाँ प्रक्षिप्त कएल जे हमर अन्तस्तलके̐ बि□ कए देलहुँ ।

एतय कमल, विद्युत वा चन्द्रमाक गुण थिक आह्लादकत्व, किन्तु कार्यमे परिणत अछि प्राण हरत्व । अतः क्रिया वैषम्य जन्य द्वितीय विषम भेल ।

(ख) **कत तुच्छ हमर फल अणु-समान ।**
ओ ई फल कत पर्वत महान ॥ (एकावली-परिणय)

एतय बिना शब्दक प्रयोगे̐ विनोक्ति अलङ्कार भेल ।

2. **दिनमनि बिनु दिन, शशि बिनु राति ।**
हरि बिनु ब्रज तीनू एक भाँति ॥ (मनबोध)

34—समासोक्ति

यदि प्रस्तुत वृत्तान्तसँ अप्रस्तुत वृत्तान्तक बोध होअए तऽ ओकर संक्षिप्तताक कारण समासोक्ति अलङ्कार होइछ ।

ई गम्यौपम्यमूलक अलङ्कार थिक । समासोक्तिक अर्थ होइछ— संक्षिप्त कथन । एहिमे प्रकृत व्यापार वाच्य होइछ आ ओहिसँ अप्रकृत व्यापारक व्य□जना होइछ । अप्रकृतिक व्य□जना श्लिष्ट विशेषणक कारण होइछ । विशेषण सतत प्रकृतपरक होइछ । संक्षेपमे प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत दुनू वृत्तान्तक व्यंजना भेलासँ समासोक्ति अलङ्कार होइछ । कवि प्रकृतक वर्णन करबाकाल पूर्ण सतर्कतासँ पुरुषबोधक, स्त्रीबोधक शब्द एवं विशेषणक प्रयोग करैत छथि जाहिसँ ओही क्षण अप्रकृत पदार्थक बोध होमय लगैछ । एकर विशेषण श्लिष्टात्मक होइछ । एहि अलङ्कारमे किछु गोपनीय वस्तु रहैछ जे कविक इष्ट रहैत अछि गुप्त रीतिए बुझयबाक ।

लक्षण :

1. **परोक्तिर्भेदकैः श्लिष्टैः समासोक्तिः ।** (का०प्र०)

समासोक्ति अलङ्कार श्लिष्ट विशेषण द्वारा परोक्ति (अप्रकृत अर्थ वा वृत्तान्तक बोधक) होइछ ।

2. **समासोक्तिः परिस्फूर्त्तिः प्रस्तुतेऽप्रस्तुतस्यचेत् ।**
अयमैन्द्रीमुखं पश्य रक्तश्चुम्बति चन्द्रमाः ॥ (कुव०)

जतय प्रस्तुत वृत्तान्तक द्वारा अप्रस्तुतक स्फुरण होअए ओतय समासोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— ई लाल रङक चान पूर्व दिशाक मुँहके̐ चूमि रहल छथि ।

3. **समासोक्तिः समैर्यत्र कार्यलिङ्ग विशेषणैः ।**
व्यवहार समारोपः प्रस्तुतेऽन्यस्य वस्तुनः ॥ (सा०द०)

जतय समान कार्य, लिङ्ग एवं विशेषणक द्वारा प्रस्तुतपर अप्रस्तुत व्यवहारक आरोप होअए ओतय समासोक्ति अलङ्कार होइछ ।

4. **'समासोक्ति' यदि अप्रस्तुतक स्फूर्ति प्रस्तुते माँझ ।**
प्राची मुख चूमथि शशी रागी भरले साँझ ॥ (अ०मा०)

समासोक्ति तखन होइछ यदि प्रस्तुत वृत्तान्तक द्वारा अप्रस्तुतक स्फुरण होइछ; यथा— ई रागी चन्द्रमा भरल साँझ प्राची (पूर्व) दिशाक मुँहके̐ चूमि रहल छथि ।

एतय मुखक अर्थ पूर्व दिशा एवं मुँह थिक तथा रागीक अर्थ प्रेमी एवं लाल, जाहिसँ चुम्बन क्रिया श्लेषरहित भेलोसँ दुनूक पोषक थिक ।

उदाहरण :

1. **रविकर-कलित तिमिर-पट-मोचन**
   प्रकट अरुणा-तनु भास ।
   लाज पुरुब दिशि मुनल कुमुद दृग
   लखि कमलिनि करु हास ॥ (हर्षनाथ झा)

सूर्यक किरण रूपी हाथसँ अन्धकार रूपी वस्त्र हटाओल गेल जाहिसँ पूर्व दिशारूपी नायिकाक लाल देह देखार भए गेलैक । एहि लाजसँ ओ कुमुद रूपी आँखि मुनि लेलक । ई देखितहि कमलिनी हँसय लागलि ।

एतय अप्रस्तुत अर्थ ई अछि जे जखन नायक नायिकाक देहपरसँ वस्त्र हटाए दैत छथि तऽ ओ लज्जित भए नेत्र बन्द कए लैत छथि । अतः समासोक्ति भेल ।

2. **पट-तिमिर हटाए पथिक झट,**
   उदयाचल कुच पर दए कर ।
   अनुरागेँ विकसित कयलनि
   प्राचीक रुचिर मुख दिनकर ॥ (एकावली-परिणय)

ई समासोक्ति तीन प्रकारसँ भए सकैछ

1. विशेषण साम्यसँ – जतय समान विशेषणक प्रयोग भेल हो ।
2. कार्य साम्यसँ – जतय समान कार्यक उल्लेख रहय ।
3. लिङ्ग साम्यसँ – जतय प्रस्तुत एवं अप्रस्तुतक लिङ्गमे समानता रहय ।

समासोक्ति एवं श्लेष

दुनूमे श्लेषत्व रहैछ किन्तु श्लेषमे दुनू अर्थ प्रस्तुत रहैछ जखनकि समासोक्तिमे एक प्रस्तुत एवं दोसर अप्रस्तुत । श्लेषमे विशेषण एवं विशेष्य दुनूमे श्लेष होइछ किन्तु समासोक्तिमे केवल विशेषणेटामे । श्लेषमे वाच्य होइछ किन्तु समासोक्तिमे प्रस्तुत वाच्य एवं अप्रस्तुत व्यंग्य।

समासोक्ति एवं रूपक

रूपकमे प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत दुनू वाच्य रहैछ किन्तु समासोक्तिमे प्रस्तुत वाच्य एवं अप्रस्तुत व्यंग्य । रूपकमे प्रस्तुतक अप्रस्तुतमे आरोप रहैछ किन्तु समासोक्तिमे प्रस्तुतमे अप्रस्तुतक कार्यक आरोप रहैछ ।

35—परिकर

जखन कोनो विशेष अभिप्रायसँ विशेषणक प्रयोग कयल जाइछ तऽ परिकर अलङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारमे साभिप्राय विशेषणक प्रयोग कयल जाइछ जाहिसँ सौन्दर्य-वृ होइछ। एकर सौन्दर्य विशेषण वैचित्र्यपर निर्भर अछि । कवि अपन कथनकेँ तर्क-सम्मत

एतय पूर्वामे चित्त वेगसँ चलैत अछि किन्तु थाकि कए जड़ देह बनि जाइछ । ई चित्तक प्रतिकूल बात भेल कारण जे चित्त सतत चंचल होइछ । अतः तृतीय असङ्गति भेल । एकरे उत्तरामे प्रथम असंगति भेल ।

असङ्गति एवं विशेषोक्ति

दुनू विरोधमूलक अलङ्कार थिक जाहिमे विरोधक परिहार भए जाइत छैक । असङ्गतिमे कार्य एवं कारण भिन्न-भिन्न स्थानमे वर्णित रहैत अछि किन्तु विशेषोक्तिमे कारण रहितहु कार्य नहि होइछ ।

असङ्गति एवं विभावना

दुनूमे विरोधक प्रतीति होइछ जकर स्थायित्व नहि रहैछ । ठाम-ठाम वर्णित कार्य-कारण भाव भिन्न-भिन्न स्थानमे प्रतिष्ठित कयल जाइछ, किन्तु विभावनामे बिनु प्रसि कारणहुक कार्योत्पत्ति देखाओल जाइछ ।

विरोधाभास एवं असंगति

दुनूमे विरोधक आभास बुझि पड़ैछ । असङ्गतिमे कार्य-कारणगत विरोध रहलाक कारणेँ एकर क्षेत्र सीमित होइछ, किन्तु विरोधाभासमे कार्य-कारणक अतिरिक्त सब तरहक विरोध आबि जाइछ, तेँ एकर क्षेत्र व्यापक होइछ । विरोधाभासमे कार्योत्पत्तिक निश्चय भेलाक पूर्वहि विरोधक आभास होमय लगैछ, जखनकि असंगतिमे कार्योत्पत्तिक पश्चात् । विरोधाभासमे विभिन्न स्थानमे रहयवला वस्तुकेँ एकहि स्थानमे देखाओल जाइछ, किन्तु एहिमे एकर विपरीत एक स्थानपर रहयवला वस्तुकेँ भिन्न-भिन्न स्थानमे देखाओल जाइछ ।

46—विषम

जतय अनमेल वस्तुमे परस्पर सम्बन्धक वर्णन हो ओतय विषम अलङ्कार होइछ ।

विषम विरोधमूलक अलङ्कार थिक । एहिमे दू टा अनमेल वस्तुमे सम्बन्ध स्थापित कयल जाइछ ।

लक्षण :

1. **गुणौ क्रिये वा चेत्स्यातां विरु हेतुकार्ययोः ।**
   यद्वारब्धस्य वैफल्यम् अनर्थस्य च सम्भवः ॥
   विरूपयोः संघटना या च तद्विषमं मतम् । (सा०द०)

जतय कारण कार्यक गुण एवं क्रिया एक दोसराक विरोधी होइछ एवं कर्त्ताकेँ अभीष्टक प्राप्ति नहि भए अनिष्ट होइछ तऽ विषम अलङ्कार होइछ ।

2. **विषम सुदूर विरूपहुक यदि घटना संयोग ।**
   कतय कमल-कोमल धनी, मदन दाह कत रोग ॥ (अ०मा०)

अत्यन्त बेमेल वस्तुअहुमे जखन सम्बन्ध स्थापित कयल जाय तँ विषम अलङ्कार होइछ; यथा— धनिक कमल सदृश कोमल शरीरमे विरहाग्निक कारण अनेक रोग छनि ।

4. **काज कतहु कारण कतहु असङ्गतिक थिक मूल ।**
उमड़ल घन नभ विरहिनिक बरिसल नयन अतूल ॥ (अ०मा०)

असङ्गतिमे कार्य कतहु आ कारण कतहु अन्यत्र होइछ; यथा— उमड़ल मेघ आ बरिसल विरहिणीक नयन ।

एतय मेघ देखि कए विरहिणीक विरह वेदना बढ़ि गेलैक आ ओकर नयनसँ अश्रुपात होमय लगलैक । जेँ मेघ कतहु लागल आ वर्षा कतहु अन्यत्र भेल तेँ असङ्गति अलङ्कार ।

भेद :

असङ्गतिक निम्नलिखित तीन भेद कएल गेल अछि—
1. प्रथम असङ्गति 2. द्वितीय असङ्गति 3. तृतीय असङ्गति ।

1. प्रथम असङ्गति

जतय कारण एवं कार्य भिन्न-भिन्न स्थितिमे देखाओल जाय; यथा—

1. **प्रिय दर्शन पाओल नयन,**
हर्ष रोमकेँ भेल । (एकावली-परिणय)

एतय प्रियक दर्शन आँखि करैत अछि आ रोमा[illegible]चत भेलासँ स्पष्ट अछि जे प्रसन्नता रोमकेँ भेलैक । अत: प्रथम असङ्गति भेल ।

2. **रावण दुष्ट चोरओलनि सीता**
बान्हल गेला समुद्र । (लेखक)

एतय सीता चोरओलक रावण आ बान्हल गेला बेचारे समुद्र ।

2. द्वितीय असङ्गति

जे कार्य जतय करबाक चाही ओतय नहि कए अन्यत्र करबामे द्वितीय असङ्गति होइछ; यथा—

नखपद हृदय तोहार । अन्तर ज्वलित हमार ॥
अधरहि काजर तोर । वदन मलिन भेल मोर ॥ (गोविन्द दास)

एतय नायकक हृदयमे नखपद एवं अधरपर काजर लागल देखि नायिकाक हृदय जरैत छनि आ वदन मलिन होइत छनि । ओ बुझि जाइत छथि जे ई अन्य नायिकाकाक संग संभोग कयलनि अछि, तकरे चिह्न थिकनि ।

एहिठाम हृदयमे नखपद आ अधरमे काजर लागलसँ (जे नहि रहबाक चाही) द्वितीय असंगति भेल ।

3. तृतीय असंगति

एहिमे स्वभावक प्रतिकूल क्रिया करबाक वर्णन होइछ; यथा—

चलल चित्त वेगेँ मगहिँ
थाकि बनल जड़ देह ।
आह्लादे उमड़ल हृदय
वरिसल लोचन मेह ॥ (एकावली-परिणय)

बनयबा ले' तदनुकूल विशेषणक प्रयोग करैत छथि ।

लक्षण :

1. **विशेषणैर्यत्साकूतैरुक्तिः परिकरस्तु सः ।** (का०प्र०)

जतय प्रकृतक वर्णन साभिप्राय विशेषणक संग कयल जाय ओतय परिकर अलङ्कार होइछ ।

2. **उक्तैर्विशेषणैः साभिप्रायैः परिकरो मतः ।** (सा०द०)

विशेषणक साभिप्राय कथनसँ परिकर अलङ्कार होइछ ।

3. **अलङ्कारः परिकरः साभिप्राये विशेषणे ।**
सुधांशुकलितोत्तंसस्तापं हरतु वः शिवः ॥ (कुव०)

जतय विशेषणक प्रयोग कोनो विशेष अभिप्रायसँ हो ओतय परिकर अलङ्कार होइछ; यथा— मस्तकपर चन्द्रमाकेँ धारण कयनिहार शिव अहाँलोकनिक तापकेँ दूर करथु ।

एतय सोझे शिव नहि कहि, चन्द्रमाकेँ धारण कयनिहार शिव कहल गेल अछि कारण जे ताप दूर करबामे सहजता होयतनि । चन्द्रमा ताप दूर कयनिहार थिकाह।

4. **साभिप्राय विशेषणक परिकर लेल सङोर ।**
गङ्गा चन्दा माथ जनि ताप हरथु शिव मोर ॥ (अ०मा०)

परिकरमे साभिप्राय विशेषणक सङोर होइछ; यथा- जाहि शिवक माथपर गङ्गा आ चन्द्रमा छथि से हमर ताप हरथु ।

एतय गङ्गा आ चन्द्रमामे ताप हरबाक सामर्थ्य छनि तेँ शिवमे ताप हरण करबाक क्षमता बेसी छनि ।

उदाहरण :

1. **सुता-हरणकेँ सुननहु मानी भूप ।**
रैभ्य किएक कहू छथि बैसल चूप ॥ (एकावली-परिणय)

एतय भूपक विशेषण मानी तर्कयुक्त अछि कारण जे सुताक हरण भेलोसँ चुपचाप बैसल छथि अर्थात् ओ रूसल छथि ।

2. **रति सुविसारद तुहु राखु मान ।**
बढ़िले यौवन तोह देव दान ॥ (विद्यापति)

36—परिकरांकुर

जतय साभिप्राय विशेष्यक प्रयोग होअए ओतय परिकरांकुर अलङ्कार होइछ ।

ई परिकरक विलोम तऽ नहि कहल जा सकैछ किन्तु एतबा बुझबाक थिक जे परिकरमे साभिप्राय विशेषण रहैत अछि एवं परिकरांकुरमे साभिप्राय विशेष्य । जयदेव, विद्याधर, अप्पय दीक्षित आदि एकर पृथक् अस्तित्व मानैत छथि किन्तु बहुतो विद्वानक दृष्टिमे परिकरांकुर पृथक् अलङ्कार नहि अपितु परिकरेक अन्तर्गत आबि जाइछ । ओ लोकनि

साभिप्राय विशेषणक वर्णनमे साभिप्राय विशेष्यकेँ सेहो अन्तर्भूत कए लैत छथि ।

लक्षण :

1. **साभिप्राय विशेष्य यदि परिकरांकरहु सार्थ ।**
   दै छथि देव चतुर्भुजे जे चारू पुरुषार्थ ॥ (अ०मा०)

यदि साभिप्राय विशेष्यक प्रयोग होअए तऽ परिकरांकुर अलङ्कार होइछ; यथा— देव चतुर्भुजे चारू पुरुषार्थ दैत छथि । एतय चतुर्भुज साभिप्राय विशेष्य थिक ।

उदाहरण :

नव घनश्याम सिंचु निज नीर ।
हृदय जरइये भेलहुँ अधीर ॥ (लेखक)

एतय घनश्याम साभिप्राय विशेष्य थिक कारण जे नायिकाक हृदय जरैत छनि आ नायक अपन नीर अर्थात् प्रेमसँ सिंचन करथिन ।

जेँ घनश्याम (मेघ आ कृष्ण) तेँ ने नीर (जल आ प्रेम) ।

37—अप्रस्तुत प्रशंसा

जतय अप्रस्तुतक वर्णनसँ प्रस्तुतक आभास होअए, अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार कहबैछ ।

अप्रस्तुत प्रशंसासँ तात्पर्य अछि प्रस्तुतक वर्णनसँ । जखन लोक प्रसंगानुकूल गप्प छोड़ि अप्रासङ्गिक गप्पक वर्णनसँ प्रसंगक बोध करबैछ तऽ ई अलंकार होइछ । एहिमे वाच्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ भिन्न-भिन्न अर्थक द्योतक होइछ । कवि अप्रस्तुतक माध्यमसँ प्रस्तुतमे सौन्दर्य बढ़बए चाहैत छथि, सैह एहि अलङ्कारक उद्देश्य भेल । एकर मूलमे सादृश्य रहैत अछि किन्तु से गम्य ।

लक्षण :

1. **अप्रस्तुत प्रशंसा या सा सैव प्रस्तुताश्रया ।** (का०प्र०)

अप्रस्तुत प्रशंसा ओ अलङ्कार थिक जाहिमे अप्रस्तुतक एहन प्रशंसा रहैत छैक जे प्रस्तुतक बोध करा दिअए ।

2. **अप्रस्तुत प्रशंसा स्यात्सा यत्र प्रस्तुताश्रया ।**
   एकःकृती शकुन्तेषु योन्यं शक्रान्न याचते ॥ (कुव०)

जतय प्रस्तुत पदार्थसँ सम्बन्धित अप्रस्तुतक वर्णन होअए ओतय अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार होइछ; यथा— पक्षीमे एकहिटा (चातक) धन्य अछि जे इन्द्रक अतिरिक्त अनकासँ याचना नहि करैछ ।

3. **अप्रस्तुतसँ प्रस्तुतक निन्दा वन्दा उक्ति ।**
   थिक 'अप्रस्तुत प्रशंसा' अलंकार अन्योक्ति ॥ (अ०मा०)

अप्रस्तुतसँ जखन प्रस्तुतक निन्दा कयल जाइछ तऽ अप्रस्तुत प्रशंसा अलङ्कार होइछ ।

कार्य-कारण सम्बन्धी विरोधगर्भ अलङ्कार थिक, जाहिमे कार्य-कारणगत विरोध देखल जाइछ । विशेषोक्तिक चमत्कार कार्योत्पत्तिसँ होइछ, तऽ विभावनाक कारण भावक कारणेँ ।

44—असम्भव

जतय कोनो कार्यक सि□मे असम्भावना बुझि पड़य ओतय असम्भव अलङ्कार होइछ ।

लक्षण :

अर्थ सि□ सम्भाव्य नहि अथच असम्भव बंध ।
कुम्भज मुनि, कहु, चुरुक भरि कोना सुरुकलन्हि सिंधु ॥ (अ० मा०)

जतय अर्थसि□क कोनहु टा सम्भावना नहि होअए ओतय असम्भव अलङ्कार होइछ; यथा— कहू जे कुम्भज (अगस्त्य मुनि) कोनाकेँ चुरुके भरिमे समुद्रकेँ सुरुकि गेलाह ।

उदाहरण :

अछि नहि सम्भव स्वर्ण मृग,
जनम भूमि पर लेत ।
किन्तु राम सन मनुजकेँ
विपति कयल हतचेत ॥ (लेखक)

एतय स्वर्णमृगक पृथ्वीपर जन्म ग्रहण करबामे असम्भव अलङ्कार भेल ।

45—असंगति

जतय कारण एवं कार्य भिन्न-भिन्न स्थानमे होअए ओतय असङ्गति अलङ्कार होइछ ।

जतय अर्थक संगति नहि बैसय ओतहि असङ्गति अलङ्कार होइछ । एहिमे कार्य-कारणक संगति कदापि नहि देखायत । एहिमे विरोधक आभास सेहो बुझाइत छैक । एकर मूलमे विरोध रहिते छैक । कार्य-कारणक भिन्न देशत्व वर्णनसँ एहिमे विलक्षणता आबि जाइछ ।

लक्षण :

1. **भिन्नदेशतयाऽत्यन्तं कार्यकारणभूतयोः ।**
   युपग□र्मयोर्यत्र खातिः सा स्यादसंगतिः ॥ (का०प्र०)

जतय कार्य-कारण रूपमे रहयवला वस्तुक अत्यन्त भिन्न स्थानमे वर्णन होअए ओतय असङ्गति अलङ्कार होइछ ।

2. **कार्यकारणयोर्भिन्नदेशतायामसङ्गतिः ।** (सा०द०)

जतय कार्य-कारण भिन्न स्थानमे होअए ओतय असङ्गति अलङ्कार होइछ ।

3. **विरु□ं भिन्नदेशत्वं कार्यहेत्वोरसङ्गतिः ।**
   विषं जलधरैः पीतं मूर्च्छिताः पथिकाङ्गनाः ॥ (कुव०)

जतय कार्य-कारणक स्थिति दू भिन्न स्थानमे होअए ओतय असङ्गति अलङ्कार होइछ; यथा— विष मेघ पीलक आ मूर्च्छित ओ स्त्री लोकनि भेलीह जनिकर स्वामी अन्यत्र छलथिन।

पर्याप्त कारण रहनहुँ जँ कार्य नहि हो तऽ विशेषोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— काम-शिखा (कामदेव रूपी अग्नि) जरलहुँसँ दीप हृदयक नेह नहि कम होइछ ।

भेद :

विशेषोक्तिक निम्नलिखित तीन भेद अछि—

1. उक्त निमित्ता 2. अनुक्त निमित्ता 3. अचिन्त्य निमित्ता ।

1. उक्त निमित्ता

जतय कार्य नहि होयबाक कारण कथित होअए; यथा—

विष कण्ठहु उर भुजग भयङ्कर
किन्तु न होथि मलीन ।
मस्तक चन्द्र जटा बिच गङ्गा
तेँ होइथ नहि दीन ॥ (लेखक)

एतय शिवक कण्ठमे विष आ देहमे साप लपेटलो रहलापर मलिन नहि होयबामे विशेषोक्ति अछि, आ पुनः तकर कारण सेहो कहल गेल अछि जे माथपर चन्द्रमा एवं जटामे गङ्गा छथि, तेँ उक्त निमित्ता भेल ।

2. अनुक्त निमित्ता

जतय कार्य नहि होयबाक कारण नहि कहल जाय; यथा—

मदन-दीप उर मे जरए
तदपि घटए नहि नेह ।
पजरल विरहक आगि हो
तदपि भस्म नहि देह ॥ (अ०द०)

एतय नेह नहि घटबाक तथा देह नहि भस्म होयबाक कारण कथित नहि अछि ।

3. अचिन्त्य निमित्ता

जतय कार्योत्पत्तिक कारण अज्ञात रहय ओतय अचिन्त्य निमित्ता विशेषोक्ति होइछ; यथा—

रागी संध्या दिवस पुनि
आगू किछुए दूर ।
विधिक विधान विचित्र अछि
संगम होए न पूर ॥ (लेखक)

एतय संध्या एवं दिवसक मिलन नहि होयबाक कारण अज्ञात अछि, तेँ अचिन्त्य निमित्ता भेल ।

विभावना एवं विशेषोक्ति

दुनू एक दोसराक विरोधी अलङ्कार थिक, कारण जे विभावनामे बिना कारणहि कार्योत्पत्ति होइछ, जखनकि विशेषोक्तिमे कारण भेलोसँ कार्योत्पत्ति नहि होइछ । दुनू

भेद :

एहि अलङ्कारक पाँच भेद अछि—

1. कारण निबन्धना 2. कार्य निबन्धना 3. विशेष निबन्धना 4. सामान्य निबन्धना 5. सारूप्य निबन्धना ।

1. कारण निबन्धना

जतय अप्रस्तुत कारणसँ प्रस्तुत कार्यक बोध होअए ओतय कारण निबन्धना होइछ; यथा—

ब्रह्मा जखनहि सिय मुख रचलन्हि ।
सार अंश चानक हरि अनलन्हि ॥ (लेखक)

एतय प्रस्तुत कार्य अछि सीताक मुँहक सौन्दर्यक वर्णन करब किन्तु अप्रस्तुतक (चानक सारांश हरण करब) वर्णन कए कहि दैत छथि जे सीता अत्यन्त सुन्दरी छलीह कारण जे चन्द्रमा स्वयं सुन्दर आ तनिक सार अंशसँ बनल सीताक मुँह किएक नहि सुन्दर हो ? एतय अप्रस्तुतक कारणसँ प्रस्तुत कार्यक वर्णन भेल अछि ।

2. कार्य निबन्धना

जतय अप्रस्तुत कार्यक वर्णनसँ प्रस्तुत कारणक प्रतीति कराओल जाइछ ओतय कार्य निबन्धना होइछ; यथा—

दुर रहु श्याम भमर-वर राय ।
स्वामिक सेवन करइत एहन जनि करब अन्तराय ॥
एतहु तिया जे होए जिब आकुल की फल मंदिर गुंज ।
ततय जाह जहँ कुसुम विथारल म□जुल व□जुल कु□ज ॥ (गोविन्द दास)

एतय प्रस्तुत कारण छथि श्री कृष्ण, जे स्वामीक सेवामे रत नायिकासँ मिलन करबाले' पहुँचल छथि । नायिका ई सोचि, जे हमर स्वामी ने बुझि जाथि, अप्रस्तुत श्याम भ्रमरक कार्यक वर्णन करैत छथि जे— हे श्याम भ्रमर ! अहाँ स्वामी-सेवामे रत हमरा किएक बाधा दैत छी ? एतय हल्ला कएकेँ कोन फल ? ततय जाउ जतय कुंज गलीमे फूल पसारल अछि ।

तात्पर्य ई जे हम ओतहि आयब तेँ अप्रस्तुत कार्यक वर्णनसँ कार्य निबन्धना भेल ।

3. विशेष निबन्धना

जतय अप्रस्तुत विशेषक वर्णनसँ प्रस्तुत सामान्यक बोध हो; यथा—

दिन दस धैरज कर यदुनन्दन हमे तप वरि वरु देवा ।
कोरि कुसुम मधु बेकत न रहते हठ जनु करिअ मुरारि ॥ (लखिमी नाथ)

एतय प्रस्तुत अछि जे नायिका अत्यन्त मुग्धा छथि । ओ नायकक संग केलि-क्रीड़ामे रत रहबायोग्य अपनाकेँ नहि बुझैत छथि तेँ अप्रस्तुत विशेषक वर्णन करैत— जे फूलक कलीमे मधु नहि रहैत छैक— अपन असमर्थता देखबैत छथि । तात्पर्य ई जे कलीकेँ प्रस्फुटित होमय दियौक ।

4. सामान्य निबन्धना

जतय अप्रस्तुत सामान्यक वर्णनसँ प्रस्तुत विशेषक बोध होअए ओतय सामान्य निबन्धना होइछ; यथा—

पामर जनसँ विज्ञ जन यदि च करैछ अरारि।
तँ ओ मूर्खहु सँ महा बनि जाइछ नर नारि॥ (लेखक)

एतय अप्रस्तुत सामान्य कथन अछि जे मूर्ख व्यक्तिसँ जे विद्वान् विवाद करैत छथि से नर-नारि महामूर्ख छथि। एतय प्रस्तुत विशेष अर्थक माध्यमे क्यो ककरहु बुझा रहल छथि जे मूर्ख लोकसँ नहि लागी। ओकरा दूटा पाइ दियै किन्तु बुर्□ नहि।

5. सारूप्य निबन्धना

जतय अप्रस्तुत समान वस्तुक वर्णनसँ प्रस्तुत सामान्य वस्तुक वर्णन होअए, सारूप्य निबन्धना होइछ; यथा—

झटकझाटल छाड़ल ठाम।
कएल महातरु तर विश्राम॥
ते जानलि जिब रहत हमार।
शेष डारि टुटि खसल कपार॥ (विद्यापति)

एतय प्रस्तुत अछि जे नायिका नायककेँ आत्मसमर्पण कए देलथिन, किन्तु हुनका अनेक प्रेयसी छलथिन तेँ हिनका ठोकरा देलनि।

एतय अप्रस्तुत महातरुक वर्णन कए देखबैत छथि जे महातरु तर कतेको लोक विश्राम करैछ किन्तु एहि अभागलिक ऊपरमे ठाढ़िए टुटि खसलैक। अतः सारूप्य निबन्धना भेल।

समासोक्ति एवं अप्रस्तुत प्रशंसा

दुनू अलङ्कार एक दोसराक विरोधी थिक। दुनूमे दू अर्थक बोध होइछ। समासोक्तिमे प्रस्तुत वाच्य एवं अप्रस्तुत व्यंग्य होइछ जखनकि अप्रस्तुत प्रशंसामे अप्रस्तुत वाच्य एवं प्रस्तुत व्यंग्य।

दृष्टान्त एवं अप्रस्तुत प्रशंसा

दृष्टान्तमे प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत दुनू वाच्य होइछ किन्तु अप्रस्तुत प्रशंसामे मात्र अप्रस्तुते वाच्य होइछ जाहिसँ प्रस्तुत रूप व्यंग्यार्थक प्रतीति होइछ। एहिमे एकहि धर्म रहैछ जखनकि दृष्टान्तमे दू धर्म।

38—पर्यायोक्ति

जखन पर्याय द्वारा अर्थात् प्रकारान्तरसँ विवक्षित अर्थक कथन होअए तऽ पर्यायोक्ति अलङ्कार होइछ।

पर्यायोक्तिक अर्थ होइछ जे पर्याय शब्दक द्वारा विवक्षित गप्प बाजि दी। सोझे नहि कहि घुमा-फिरा कए कहबामे बेसी प्रभावकता अबैत छैक। एहिमे कोनो बहानासँ सेहो

6. षष्ठ विभावना

जतय कार्ये भेलासँ कारणक ज्ञान होअए ओतय षष्ठ विभावना होइछ; यथा—

सूर्य सुधाकर खोजलो न पाबिअ।
कमल कुमुद निसि वासर जानिअ॥ (मनबोध)

एतय कमल ओ कुमुदनीक विकाससँ दिन एवं रातिक ज्ञान होयबामे षष्ठ विभावना भेल।

विरोधाभास एवं विभावना

दुनूमे विरोधक आभास होइछ जकरा दूर कयल जाइछ। विभावनामे कार्य-कारणपरक विरोध होइछ तेँ एकर क्षेत्र संकुचित आ विरोधाभासक विस्तृत होइछ। विभावनामे कारणक अभावमे कार्य होइछ आ विरोधाभासमे विरोधक आभास। विभावनामे कार्यकारणमूलक विरोध होइछ आ विरोधाभासमे द्रव्य, गुण, क्रिया एवं जातिक।

43—विशेषोक्ति

जतय पर्याप्त कारण रहनहु कार्योपत्ति नहि होअए, विशेषोक्ति अलङ्कार कहबैछ।

विशेषोक्ति विभावनाक विरोधी अलङ्कार थिक। विभावनामे बिनु कारणहि कार्य होइछ तथा विशेषोक्तिमे कारण भेलोसँ कार्य नहि होइछ। एहि विरोधक परिहार भए जाइत अछि। ई कथन सामान्यसँ भिन्न होइछ, तेँ एकरा विशेषोक्ति कहल जाइछ। ई सामान्य कथनसँ विशेष भाव रखैत अछि कारण जे सामान्य स्थितिमे यैह देखल जाइछ जे कारणक पश्चात् कार्य होइछ, किन्तु एहिमे ठीक ओकर विपरीत। तेँ ई विशेष आकर्षक होइछ।

लक्षण :

1. **विशेषोक्तिरखण्डेषु कारणेषु फलावयः** (का०प्र०)

जतय पर्याप्त कारण भेलहुपर फलक असद्भाव रहय ओतय विशेषोक्ति अलङ्कार होइछ।

2. **सति हेतौ फलाभावो विशेषोक्तिः।** (सा० द०)

हेतु (कारण)क होइतहु फलक अभावमे विशेषोक्ति अलङ्कार होइछ।

3. **कार्याजनिर्विशेषोक्तिः सति पुष्कल कारणे।**
हृदि स्नेहक्षयो नाभूत स्मरदीपे ज्वलत्यपि॥ (कुव०)

जतय प्रस्तुत कारण रहनहुँ कार्योत्पत्ति नहि होअए ओतय विशेषोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— कामदेव रूपी दीपक जरलहु सन्ता हृदयमे स्नेहक अभाव नहि भेल।

एतय स्नेहक अर्थ तेल आ प्रेम दुनू थिक। दीप जरलासँ तेल घटब स्वाभाविक, किन्तु एतय कामदीप जरलोसँ स्नेहरूपी तेल नहि घटल।

4. **विशेषोक्ति नहि काज वरु कारण रहओ अशेष।**
काम-शिखा जरितहुँ न हो, नेह दीप-उर शेष॥ (अ०मा०)

श्री कृष्ण बिना साधनहि नायिकाक मान भगा दैत छथि ।

एतय बिनु कारणहि कार्य भेल तेँ प्रथम विभावना थिक ।

2. द्वितीय विभावना

जतय अपूर्णो कारण रहलासँ कार्योत्पत्ति होअए; यथा—

तीख न कठिन कुसुम शरहु
मदन जगत जिति लैछ । (अ०मा०)

कुसुमक शरमे तऽ कोमलता रहैछ, ने तीक्ष्णता आ ने कठोरता, किन्तु कामदेव ओहीसँ विश्वपर विजय प्राप्त कए लैत छथि ।

3. तृतीय विभावना

जतय व्यवधानक रहितहु कार्योत्पत्तिक वर्णन होअए ओतय तृतीय विभावना होइछ; यथा—

1. **कुच-नितम्ब-भारेँ विकलि, रहितहुँ झटकारैत ।**
वारवधूजन चललि मग, युवजन-हृदय हरैत ॥ (एकावली-परिणय)

एतय कुच-नितम्बक भार व्यवधान अछि, तथापि झटकारिकेँ चलबामे तृतीय विभावना होइछ ।

4. चतुर्थ विभावना

जतय अकारणहि कार्योत्पत्ति होअए ओतय चतुर्थ विभावना होइछ; यथा—

सहज सुन्दर गोल कलेवर पीन पयोधर सिरी ।
कनक लता अति विपरित फलल जुगल गिरी ॥ (विद्यापति)

सहजहिँ सुन्दर गौरवर्णा नायिकाक पयोधर बुझि पड़ैछ जेना सोनाक लत्तीमे दूटा पर्वतशृंग उगल हो ।

एतय अहेतुसँ कार्योत्पत्ति भेल कारण जे सोनाक लतामे कोना पर्वतशृंग उगत ?

5. प□चम विभावना

जतय विरोधी कारण रहलासँ कार्योत्पत्ति होअए ओतय प□चम विभावना होइछ; यथा—

1. **शीत किरण परसहि धनिक अंग-अंग सन्ताप ।** (अ०मा०)

विरहिणी नायिका छथि तेँ चन्द्रक शीत किरणसँ सन्ताप होइत छनि ।

एतय शीत किरणसँ सन्ताप होयबामे प□चम विभावना भेल ।

2. **तुहिन शीतलो चन्द्ररुचि देल विरहिकेँ दाह ।**
दैव विमुख भेलेँ जनक नीको कर अधलाह ॥ (एकावली-परिणय)

एतय शीतल चन्द्रमा विरहीकेँ जरबैत छथि । शीतलता एवं जरायब एक दोसराक विरोधी थिक तेँ प□चम विभावना भेल ।

कार्यक सम्पादन कयल जाइछ । एहि अलङ्कारमे व्यंग्य अर्थकेँ वाच्यार्थक रूपमे प्रकट कयल जाइछ । एहिमे वाच्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ दुनू होइत अछि आ से दुनू प्रस्तुते रहैछ ।

लक्षण :

1. **पर्यायोक्तं विना वाच्यवाचकत्वेन यद्वचः ।** (का०प्र०)

पर्यायोक्ति ओ अलङ्कार थिक जाहिमे वाच्यार्थक प्रतिपादन वाच्यवाचक रीतिक बिना होइछ ।

2. **पर्यायोक्तं तु गम्यस्य वचो भंग्यन्तराश्रयम् ।**
नमस्तस्मै कृतौ येन मुधा राहुवधूकुचौ ॥ (कुव०)

जतय व्यंग्यार्थबोधिका अप्रचलित प□तिसँ व्यंग्यार्थक बोध कराबय ओतय पर्यायोक्ति अलंकार होइछ; यथा— हुनका (भगवान विष्णुकेँ) नमस्कार करैत छियनि जे राहुक स्त्रीक स्तनकेँ व्यर्थ बना देलनि ।

एतय भगवान विष्णुकेँ नमस्कार करबाक अछि से व्यंग्य थिक, किन्तु एकर कथन राहुक पत्नीक पयोधरकेँ व्यर्थ बनौनिहारकेँ नमस्कार कयल गेल अछि ।

3. **कार्याद्यैः प्रस्तुतैरुक्तैः पर्यायोक्तिः प्रचक्षते ।**
तृणान्यङ्कुरयामास विपक्षनृपसद्मसु ॥ (चन्द्रालोक)

जतय प्रस्तुत कार्यादिक वर्णनसँ प्रस्तुते कारणादिक बोध होअए ओतय प्रर्यायोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— ओहि राजाक शत्रुक घरमे घास जनमि गेलनि ।

एतय घास जनमब कार्य एवं राजाकेँ घर छोड़ि भागब कारण थिक । किन्तु कारण नहि कहि कार्यहिसँ कारणक बोध कराओल गेल अछि ।

4. **वचन-भंगिमेँ व्यंग्यहुक प्रवचन पर्यायोक्त ।**
हरि-गुण गाबथु राहु-बहु चुम्बित पहु मुह मुक्त ॥ (अ०मा०)

वचन-भङ्गिमासँ जखन व्यंग्यक कथन कयल जाय तऽ पर्यायोक्ति होइछ; यथा— राहुबधू हरिक गुण गाबथु जे अपनो पतिक चुम्बनसँ वंचित भए गेलीह ।

तात्पर्य ई जे हरि हुनक सतीत्व नष्ट कऽ देलथिन तेँ ओ अपन पतिक प्रेमसँ वंचित भऽ गेलीह ।

भेद :

अप्पय दीक्षित पर्यायोक्तिक दू भेद मानैत छथि—

1. विवक्षितार्थक प्रकारान्तरसँ कथन 2. कोनो व्याजसँ अभीष्ट कथन ।

1. विवक्षितार्थक प्रकारान्तरसँ कथन

एहिमे विवक्षित अर्थक प्रकारान्तरसँ कथन होइछ; यथा—

(क) **लङ्का दहनक कारणेँ फल पओलनि हनुमान ।**
मकरध्वज सन लालसँ जूझि गेला बलवान ॥ (लेखक)

एतय यदि लङ्कादहन कारण नहि रहैत तऽ मकरध्वजसँ हनुमानक लड़ाइ रूप कार्य

नहि होइत । एतय विवक्षित अर्थ अछि जे हनुमान लङ्का जाकए जखन समुद्रमे श्रम दूर करए गेलाह तऽ हुनक स्वेद-बुन्द एकटा माँछ पीलक आ ताहिसँ मकरध्वजक उत्पत्ति भेल । एकरे प्रकारान्तरसँ कहल गेल अछि ।

(ख) **मरमक वेदन मरमहि जान ।**
आनक दुख आन नहि जान ॥ (विद्यापति)

2. कोनो व्याजसँ अभीष्ट कथन

जतय कोनो बहानासँ इष्ट साधन कयल जाय ओतहु पर्यायोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा—

पट झाँपल कन्दुक हमर दिअ झट जाइ खेलाइ ॥ (अ० मा०)

एतय श्री कृष्ण भगवान राधासँ कहैत छथि जे वस्त्रसँ झाँपल हमर गेंद (स्तन) दिअ जे जल्दीसँ खेलयबाले' जाइ ।

पर्यायोक्ति एवं अप्रस्तुत प्रशंसा

पर्यायोक्तिमे कार्य एवं कारण दुनू प्रस्तुत एवं अपेक्षित रहैत अछि जखन कि अप्रस्तुत प्रशंसामे मात्र एकहि टा प्रस्तुत रहैछ आ दोसर अप्रस्तुत । कार्य निबन्धना अप्रस्तुत प्रशंसामे मात्र कारणेँ प्रस्तुत रहैछ, कार्य नहि आ पर्यायोक्तिमे दुनू ।

39—व्याजस्तुति

जतय स्तुतिक बहानासँ निन्दा आ निन्दाक बहानासँ स्तुति कयल जाइछ ओतय व्याजस्तुति अलङ्कार होइछ ।

व्याजस्तुतिमे दूटा शब्द अछि— व्याज एवं स्तुति । व्याजक अर्थ ओइछ बहाना आ स्तुतिक प्रशंसा । तेँ एहिमे निन्दाक बहानासँ प्रशंसा कयल जाइछ । एहिमे दूटा अर्थ होइछ — वाच्य एवं व्यंग्य । जतय वाच्यार्थ स्तुतिपरक होइछ तऽ व्यंग्यार्थ निन्दापरक । एहि अलङ्कारमे अधिक चमत्कारत्व अछि । ककरो यदि ई कहिऐक जे अहाँ सन बुधियार दोसर थोड़बे भेटत ! तऽ ई प्रशंसा नहि निन्दा भए जाइछ । अर्थ ई जे अहाँ महामूर्ख छी, किन्तु नीक लोकक शब्दमे निन्दा कयल गेल अछि ।

लक्षण :

1. **व्याजस्तुतिर्मुखेनिन्दा स्तुतिर्वा रूढ़िरन्यथा ।** (का०प्र०)

व्याजस्तुति ओ अलङ्कार थिक जाहिमे वाह्यतः निन्दा भेलोपर आभ्यन्तरतः स्तुति वा वाह्यतः स्तुति भेलोसँ आभ्यन्तरतः निन्दाक बोध होअए ।

2. **उक्तिर्व्याजस्तुतिर्निन्दास्तुतिभ्यां स्तुतिनिन्दयोः ।**
कः स्वर्धुनि विवेकस्ते पापिनो नयसे दिवम् ॥
साधु दूति ! पुनः साधु कर्त्तव्यं किमतः परम् ।
यन्मदर्थे विलूनासि दन्तैरपि नखैरपि ॥ (कुव०)

एतय कल्पना कयल गेल अछि जे नायिकाक स्तन-मण्डलमे प्रज्वलित अग्नि अछि जे दूरसँ लोकक हृदयकेँ दग्ध कए दैछ किन्तु हृदयसँ लगओलापर शीतल लगैछ ।

आगिक काज छैक जरायब तेँ हृदयकेँ जरायब तऽ ठीक, किन्तु ओ पुनः शीतल सेहो लगैत अछि, विरोधाभास बुझना जाइछ । किन्तु वस्तुतः विरोधक आभासेटा अछि विरोध नहि, कारण जे नायिकाक स्तनमे ओ गुण छैक जे दूरसँ हृदयकेँ जराबय आ छातीसँ लगौलापर शीतल लागय ।

42—विभावना

जतय कारणक बिना कार्य होअए ओतय विभावना अलङ्कार होइछ ।

विभावना अलङ्कारमे कारणक अभावमे कार्योत्पत्ति होइत छैक । एहिमे विरोधक भाव बुझि पड़ैछ कारण जे बिना कारणेँ कार्य होइछ । कार्य हेतु तऽ सतत कारण अपेक्षित रहैत अछि किन्तु एहिमे से नहिएँ भेने विशेष चमत्कारक होइछ । कखनहुँ कारणक अभावमे कार्योत्पत्ति होइछ तऽ कखनहुँ कारणक निषेधमे सेहो विभावना होइछ ।

लक्षण :

1. **क्रियायाः प्रतिषेधेऽपि फलव्यक्तिर्विभावना ।** (का०प्र०)

जतय क्रियाक (कारणक)निषेध (अभाव) भेलोपर फलक उत्पत्ति होअए ओतय विभावना अलङ्कार होइछ ।

2. **विभावना विनापिस्यात्कारणं कार्यजन्म चेत् ।**
अप्यलाक्षारसासिक्तं रक्तं त्वच्चरणद्वयम् ॥ (कुव०)

जतय कारणक बिना कार्योत्पत्ति होअए ओतय विभावना अलङ्कार होइछ; यथा— लाक्षारससँ बिनु रङनहि हुनक चरण युगल लाल छनि ।

एतय लाक्षारससँ बिनु रङने चरण युगल लाल होयबामे बिनु कारणहि कार्य भए गेल ।

3. **कारण बिनु यदि कार्य हो 'विभावनालङ्कार' ।**
बिनु आलत रङनहु हुनक पदयुग सहजहि लाल ॥ (अ०मा०)

यदि बिना कारणक कार्य होअए तऽ विभावनालंकार होइछ; यथा— बिनु अलतासँ रङनहु हुनक पदयुग लाल छनि ।

भेद :

विभावनालङ्कारक निम्नलिखित भेद अछि—

1. प्रथम विभावना 2. द्वितीय विभावना 3. तृतीय विभावना 4. चतुर्थ विभावना 5. प□चम विभावना 6. षष्ठ विभावना ।

1. प्रथम विभावना

जतय बिनु कारणहि कार्योत्पत्तिक वर्णन कयल जाय; यथा—

बड़इ चतुर मोर कान ।
साधन बिनहि भगाओल मझु मान ॥ (विद्यापति)

3. **आभासत्वे विरोधस्य विरोधाभास इष्यते ।**
विनापि तन्वि ! हारेण वक्षोजौ तव हारिणौ ॥ (कुव०)

जतय दू उक्तिमे विरोधक आभास होअए ओतय विरोधाभास अलङ्कार होइछ; यथा— हे सुन्दरि ! अहाँक स्तन बिनु हारक हारवला अछि ।

एतय हारक बिना हारवलामे विरोधक आभास होइछ किन्तु हारिणौक अर्थ मनोहारिणौ लेलासँ अर्थ स्पष्ट अछि ।

4. **नहि विरोध आभास तनि, बुझिअ विरोधाभास ।**
भव-अनादि भव-आदि जग वसितहुँ नगनहि वास ॥ (अ०मा०)

जतय वस्तुत: विरोध नहि भए मात्र ओकर आभासेटा रहैछ, विरोधाभास कहबैछ; यथा— केओ भक्त शिवसँ कहैत छथि जे अहाँ संसारक अनादि (जकर आदि नहि छैक) छी आ आदि छी, संसारमे रहैत छी आ नङटे छी ।

एतय शिवक संग वस्तुत: विरोध नहि अछि कारण जे ओ यथार्थत: संसारक आदि एवं अनादि दुनू छथि, सम्पूर्ण संसारे वासस्थल छनि आ फेर किछु ने छनि । अत: विरोधक आभासे मात्र अछि ।

उदाहरण :

1. **सेहो मधुर बोल श्रवनहि सूनल**
श्रुतिपथ परश न गेल । (विद्यापति)

एतय विरोध बुझि पड़ैत अछि कारण जे जखनहि सुनबाक क्रिया होयत तऽ श्रुति-पथकेँ स्पर्श करबे करत । किन्तु तात्पर्य ई अछि जे तेहन मधुर बोल छलैक जे तृप्ति नहि भेल । पुन: हमर कान ओहिना तृषित अछि जेना पूर्वमे छल ।

2. **निर्भय, पद्मा-भ्रू-भङ्ग-भीत**
सम-दृष्टि, असुर-रिपु, देव-मीत ।
जग-आदि, अनादि, अनन्त, अन्त
अज्ञेय, बुद्धि-गोचर तुरन्त ॥ (एकावली-परिणय)

एतय राजा तुर्वसु भगवान विष्णुसँ कहैत छथि जे अपने निर्भय छी आ लक्ष्मीक भ्रू-भङ्ग होइतहिँ काँपय लगैत छी, दृष्टि समान अछि किन्तु असुर शत्रु आ देव मीत छथि, संसारक आदि (जकरा क्यो नहि जानए) छी आ बुद्धिमान शीघ्रहि जानि लैछ ।

एहिमे प्रत्येक युगल शब्द एक दोसराक विरोधी अछि । दुनू एक ठाम सम्भव नहि छैक किन्तु भगवान विष्णुमे यथार्थत: ई सबटा सम्भव भए जाइत अछि तेँ विरोधाभास भेल ।

3. **की सुन्दर अछि वह्नि प्रज्वलित**
कामिनीक कुचमण्डलमे ।
दूरहिसँ छाती जरबय
पुनि शीतल हृदयालिङ्गनमे ॥ (लेखक)

जतय निन्दा वा स्तुतिसँ क्रमश: स्तुति वा निन्दा कयल जाय ओतय व्याजस्तुति अलङ्कार होइछ; यथा— 1. हे गंगे ! ई अहाँक केहन विवेक अछि जे पापीकेँ स्वर्ग लए जा रहल छिऐक (निन्दासँ स्तुति) । 2. हे दूती ! अहाँ धन्य छी ! एहिसँ अधिक की करबाक चाही जे अहाँ हमर दाँत आ नहसँ काटल गेलहुँ (स्तुतिसँ निन्दा) ।

3. **स्तुतिएँ निन्दा व्याजसँ निन्देँ स्तुति 'व्याजोक्ति' ।**
गंगे ! केहन विवेक अछि पापिहुकेँ दी मुक्ति ॥
दूती उपकारिणि ! सही परहित कष्ट विशेष ।
हमर सनेस सुनौल सहि दन्तक्षत नख लेख ॥ (अ०मा०)

स्तुतिक व्याजसँ निन्दा आ निन्दाक व्याजेँ स्तुति व्याजस्तुति कहबैछ; यथा— 1. हे गंगे ! अहाँक केहन विवेक अछि जे पापियोकेँ मुक्ति दए दैत छिऐक (निन्दासँ स्तुति) । 2. हे उपकारिणी दूती ! अहाँ अनकाले' बड़ कष्ट सहैत छी । हमरा नीक सनेस सुनौलहुँ तेँ अहाँ हमर दाँत आ नह द्वारा काटल गेलहुँ (स्तुतिसँ निन्दा) ।

भेद :

एकर दू भेद अछि— 1. स्तुति पर्यवसायिनी निन्दा 2. निन्दा पर्यवसायिनी स्तुति ।

1. स्तुतिपर्यवसायिनी निन्दा

जतय स्तुतिक व्याजसँ निन्दा कयल जाय; यथा—

अद्भुत अछि कवि प्रतिभा अपनेक,
अविकल अनुवाद बनओलहुँ अछि ।
अप्पयकेर कुवलय आनन केर
की सुन्दर बिम्ब देखओलहुँ अछि ॥ (लेखक)

एतय कोनो कविक निन्दा कयल गेल अछि जे अहाँ अनके श्लोकक अनुवाद कए अपन बनबैत छी, अपन मौलिक किछु नहि । किन्तु अछि प्रशंसा जे नीक अनुवाद बनौलहुँ अछि । यदि वस्तुत: अनुवाद रहैत तऽ ई प्रशंसा होइत किन्तु जेँ मौलिक थिक तेँ ई निन्दा कहाओत ।

2. निन्दापर्यवसायिनी स्तुति

जतय निन्दाक व्याजेँ स्तुति कयल जाय; यथा—

गंगे ! अहँक ई काज तँ
होइछ नहि अनुकूल ।
अघी सुजन अहँ सबहुकेँ
तारी बुझि समतूल ॥ (मै० का०)

एतय वाह्यत: गंगाक निन्दा अछि कारण जे ओ पापी एवं सुजन दुनूकेँ मुक्ति दैत छथि किन्तु गम्भीरतापूर्वक देखलासँ ई प्रशंसा थिक कारण जे गंगा सभकेँ समाने दृष्टिसँ देखैत छथि ।

40—आक्षेप

जतय अभीष्ट गप्पक निषेध कए देल जाइत छैक ओतय आक्षेप अलङ्कार होइछ।

जखन विवक्षित गप्पकेँ पूर्ण कयनहि बिना बीचहिमे छोड़ि देल जाइत छैक तऽ आक्षेप अलङ्कार होइछ। आक्षेपक अर्थ होइछ निषेध करब। जखन बीचहिमे कोनो गप्पक निषेध कयल जाइछ तऽ ओहिमे विशेष चमत्कार आबि जाइछ। एहिमे निषेध वास्तविक नहि भए आभासी होइछ। वक्ता अपन इष्टार्थक सि□क हेतु बीचहिमे निषेध कए दैत छथि जाहिसँ गप्पक प्रभावकता अत्यन्त बढ़ि जाइछ।

लक्षण :

1. **वस्तुनो वक्तुमिष्टस्य विशेषप्रतिपत्तये।**
निषेधाभाष आक्षेपो वक्ष्यमानोक्तगोद्विधा॥ (सा०द०)

अभीष्ट वस्तुक विशेष अभिप्रायसँ निषेध करब आक्षेप अलङ्कार कहबैछ। ई दू प्रकारक होइछ— 1. वक्ष्यमान 2. उक्त।

2. **आक्षेपः स्वयमुक्तस्य प्रतिशेधो विचारणात्।**
चन्द्र संदर्शयात्मानमथवास्ति प्रियामुखम्॥ (कुव०)

जतय स्वयं कहल गेल गप्पकेँ निषेध कयल जाय ओतय आक्षेप अलङ्कार होइछ; यथा— हे चन्द्र! दर्शन दियऽ, अथवा छोड़ू, प्रियामुख तऽ अछिए।

3. **कहि किछु पुनि नव कथा कहि, प्रतिषेधक आक्षेप।**
सुजन वचन अछि तखन की करब चाननक लेप॥ (अ०मा०)

किछु कहिकए आ पुनः नव कथा कहि ओकर निषेध करब आक्षेप अलङ्कार थिक; यथा— सुजनवचन अछिए तऽ चाननक लेप किएक करब?

भेद :

आक्षेप अलङ्कारक मुख्यतः तीन भेद होइछ—
1. उक्ताक्षेप 2. निषेधाक्षेप 3. व्यक्ताक्षेप

1. उक्ताक्षेप

जतय अभीष्ट गप्प बाजि कए ओकर निषेध कयल जाय ओतय उत्काक्षेप होइछ; यथा—

तुर्वसुक मोद से कहए पार
जे नापि सकए जल जलधि धार।
करबा मे वा क्षम हो विशेष
जे तारागण-गणना अशेष॥ (एकावली-परिणय)

एतय अभीष्ट अछि तुर्वसुक मोदक वर्णन करब जकर कथन पहिनहि कयल गेल, किन्तु बादमे ई कहि जे समुद्रक जलकेँ नपनिहार वा अशेष तारागणकेँ गननिहारेटा हुनक मोदक पार पाबि सकैछ— ओकर निषेध भेल।

2. व्यक्ताक्षेप

जतय विषयक कथनसँ पूर्वहि निषेध कयल गेल हो ओतय व्यक्ताक्षेप होइछ; यथा—

तखनुक के कवि कहि सकए
युवजन हृदयाह्लाद।
अनुभव गोचर जनिक नहि
सपनहुँ ब्रह्मास्वाद॥ (एकावली-परिणय)

एतय युवजनक हृदयाह्लादक वर्णन करब इष्टार्थ छनि किन्तु ताहिसँ पूर्वहि निषेध अछि जे के कवि कहि सकैत अछि? अर्थात् क्यो नहि। बादमे ओकर सहायक अछि जे जनिका सपनहुमे ब्रह्मास्वाद नहि भेल छनि। तात्पर्य ई जे क्यो नहि कहि सकैत छथि। तेँ व्यक्ताक्षेप भेल।

3. निषेधाक्षेप

जतय इष्टार्थहिमे निषेध नुकायल हो ओतय निषेधाक्षेप होइछ; यथा—

जुग-जुग जिबथु बसथु लाख कोस।
हमर अभाग हुनक नहि दोष॥ (विद्यापति)

एतय कोनो विरहिणी नायिकाक उक्ति थिक जे हमर पति कतहु रहि कए जीवथु। एतय नहि अबैत छथि ताहिमे हुनक कोनो दोष नहि। ई तऽ दुर्भाग्य हमर थिक। किन्तु एहिमे निषेध प्रच्छन्न अछि। नायिकाक आक्रोश छनि जे दोष अहाँक नहि तऽ आओर ककर?

41—विरोधाभास

जतय वस्तुतः विरोध नहि भए विरोधक आभास मात्र होअए, विरोधाभास अलङ्कार कहबैछ।

एहि अलङ्कारमे किछुए काल धरि विरोध रहैछ आ फेर लगले ओकर परिहार भए जाइत अछि। कतहु-कतहु ई श्लेषाश्रित सेहो होइछ। एहिमे दू विरोधी वस्तु एकहि वस्तु वा व्यक्ति लेल एकहि ठाम आबि जाइछ, किन्तु प्रसङ्ग बुझिते अर्थ स्पष्ट भए जाइछ। विरोध मात्र शब्देसँ होइछ, अर्थसँ नहि। किछु आचार्यगण विरोध अर्थहुमे मानैत छथि, किन्तु से तर्कसंगत नहि बुझना जाइछ।

लक्षण :

1. **विरोधः सोऽविरोधेऽपि विरु□त्वेन यद्वचः।** (का०प्र०)

वस्तुतः विरोध नहियो भेने यदि विरोधक आभास होअए तऽ विरोधाभास अलङ्कार होइछ।

2. **विरु□मिवभासेत विरोऽधोसौ।** (सा०द०)

विरोध ओ थिक जे विरोध जेकाँ बुझि पड़य अर्थात् वास्तविक नहि, काल्पनिक विरोध होअए।

2. व्याजोक्तिगोपनं व्याजादुद्भिन्नस्यापि वस्तुनः । (सा०द०)

जतय प्रकट भेल वस्तु कोनो बहानासँ चोराओल जाय ओतय व्याजोक्ति अलङ्कार होइछ ।

3. नुकबथि आने हेतु कहि कृति आकृति 'व्याजोक्ति' ।
भमर कमल पर छल सखी अधर दशल कटु युक्ति ॥ (अ०मा०)

देखार भेलाक बाद यदि कोनो आन बात कहि हेतुकेँ नुकाओल जाय तऽ व्याजोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— कोनो नायिकाक ओष्ठमे नायकक द्वारा कयल गेल दन्तक्षत देखि हुनक सखीकेँ संदेह होइत छनि, किन्तु ई चतुर सखी बहाना कय दैत छथि जे कमलपरसँ भ्रमर उड़ि कय काटि लेलक । अतः व्याजोक्ति अलङ्कार भेल ।

उदाहरण :

लोभे निठुर हरि कएलन्हि केलि ।
की कहब यामिनि अति दुख देलि ॥ (विद्यापति)

नायिका जखन देखार भए जाइत छथि जे ओ राति भरि श्री कृष्णक संग केलि कयलनि तऽ अपन दोष झपबाले' कहैत छथि जे निष्ठुर कृष्ण लोभसँ केलि कयलनि आ तेँ रातिमे हमरा अत्यन्त दुख भेल ।

एतय निष्ठुर कृष्णहिक निन्दा करबामे आ अपन कष्ट देखयबामे उद्देश्य ई अछि जे हम जे किछु कयलहुँ से अनिच्छासँ । अतः व्याजोक्ति अलङ्कार भेल ।

व्याजोक्ति एवं छेकापह्नुति

छेकापह्नुतिमे गोपनीय वस्तुकेँ प्रकट कय ओकर गोपन कयल जाइत छैक, जखन कि व्याजोक्तिमे गोपनीय वस्तु अनायासे प्रकट भेलापर ओकरा नुकाओल जाइत छैक । अपह्नुति साधर्म्यमूलक अलङ्कार थिक, किन्तु व्याजोक्ति गूढ़ार्थ प्रतीतिमूलक ।

व्याजोक्ति एवं वक्रोक्ति

वक्रोक्तिमे आनक कथनक आन व्यक्ति अन्य अर्थक रूपमे उत्तर दैत अछि, जखन कि व्याजोक्तिमे कोनो प्रकारेँ प्रकट भेल रहस्यकेँ पुनः नुका देल जाइत अछि ।

83—लोकोक्ति

जतय प्रसङ्ग पाबि लोकोक्तिक प्रयोग कयल जाय ओतय लोकोक्ति अलङ्कार होइछ ।

लोकोक्तिक अर्थ थिक कहबी । एहि अलङ्कारमे लोकोक्तिक प्रयोगसँ चमत्कार उत्पन्न होइछ ।

लक्षण :

थिक 'लोकोक्ति' यथार्थ जे चलित लोकमुख वाक्य ।
कतबहु कहु किछु असरि नहि उसरक उपज न शक्य ॥ (अ०मा०)

जे लोकमुहेँ प्रचलित कहबी अछि से लोकोक्ति भेल; यथा— ककरहु बुझयबाक

पदार्थ ओहि कार्यसँ विरु□ कार्यकेँ उत्पन्न करय; यथा— जाहि पुष्पसँ संसार प्रसन्न होइत अछि ओही पुष्पसँ कामदेव संसारकेँ मारैत छथि ।

3. साधन आने साध्य किछु हो 'व्याघातहि' नाम ।
दृग दगधल जे मदन तनि दृगहि जिआओल बाम ॥ (अ०मा०)

जतय साधन किछु आ साध्य किछु हो व्याघात अलङ्कार होइछ; यथा— शिवक नेत्रसँ जराओल गेल कामदेवकेँ सुन्दरी लोकनि अपन आँखिएसँ जिआ दैत छथि ।

भेद :

एकर दू भेद होइछ— 1. प्रथम व्याघात 2. द्वितीय व्याघात ।

1. प्रथम व्याघात

ककरो द्वारा सि□ कार्यकेँ यदि दोसर ओही साधनसँ अन्यथा कए दिअए तऽ प्रथम व्याघात होइछ; यथा—

रचलन्हि कुचमण्डल चतुरानन बढ़बए धनिक शृंगार ।
ओ पुनि किंचित दृश्य देखाकए मारथि रसिक गमार ॥ (लेखक)

एतय साधन एकहिटा अछि स्तन जे ब्रह्माक द्वारा शोभा बढ़यबाक हेतु देल गेल, किन्तु सुन्दरी ओकर झलक देखाए रसिक एवं गमार दुनूकेँ मारैत छथि ।

3. द्वितीय व्याधात

यदि ककरो द्वारा सुगमतासँ कार्यकेँ उलटि देल जाय तऽ द्वितीय व्याघात होइछ; यथा—

लोभी सोचथि धन नहि छोड़ी,
जँ दिन विपतिक आबए ।
दानी सोचथि झट दए दऽ दी,
जँ पुनि धन नहि आबए ॥ (लेखक)

एतय लोभी जाहि शंकाक कारण धन नहि छोड़य चाहैत छथि दानी ताही शंकासँ दान करय चाहैत छथि ।

54—कारणमाला

कारणमाला ओ अलङ्कार थिक जाहिमे पूर्व-पूर्व वर्णित पदार्थ उत्तरोत्तर कथित पदार्थक कारणस्वरूप वर्णित भेल रहैछ ।

नामहिसँ स्पष्ट अछि जे ई कारणक माला थिक । एहिमे पूर्व कहल गेल वस्तु उत्तर पदार्थक कारणस्वरूप वर्णित रहैछ । ई शृंखलामूलक अलङ्कार थिक जाहिमे कार्य-कारणक अनुक्रम रहैछ । एहिमे कारणमालाक संग कार्यक सेहो माला रहैत अछि, किन्तु प्रधानता कारणेक होइछ । जेँकि ई शृंखलामूलक अलङ्कार थिक तेँ कार्य-कारणक शृंखला रहब आवश्यक । मात्र एकहिटा वस्तुक कार्य-कारणक उल्लेख कयने कारणमाला नहि होयत ।

लक्षण :

1. **परं परं प्रति यदा पूर्वपूर्वस्य हेतुता ।**
तदा कारणमालास्यात्...... ।। (सा०द०)

कारणमाला ओ अलङ्कार थिक जे उत्तरोत्तर वस्तुक हेतु पूर्व-पूर्व वर्णित वस्तु कारणक रूपमे रहैत अछि ।

2 **पूर्व-पूर्व कारण ग्रथित 'कारणमाला' जान ।**
तपसँ लक्ष्मी, लक्ष्मियहि दान, दानसँ मान ॥ (अ०मा०)

जखन उत्तरोत्तर पदार्थक हेतु पूर्व-पूर्व कारण कथित रहैछ तऽ कारणमाला अलङ्कार होइछ; यथा— तपसँ लक्ष्मी, लक्ष्मीसँ दान आ दानसँ मान भेटैछ ।

भेद :

एकर दू भेद अछि— 1. प्रथम कारणमाला 2. द्वितीय कारणमाला ।

1. प्रथम कारणमाला

पूर्व-पूर्व पद जतय पर पदक कारणस्वरूप वर्णित रहय ओतय प्रथम कारणमाला होइछ; यथा—

श्रमसँ विद्या, विद्यासँ धन,
धनसँ हो सम्मान ।
सम्मानहिसँ यशक प्राप्ति हो,
यशसँ कीर्त्ति महान ।। (लेखक)

एतय श्रम विद्याक कारण, विद्या धनक कारण, धन सम्मानक कारण, सम्मान यशक कारण एवं यश कीर्त्तिक कारण थिक, तेँ प्रथम कारणमाला भेल ।

2. द्वितीय कारणमाला

पूर्व-पूर्व पदक जतय उत्तरोत्तर पद कारणस्वरूप वर्णित रहय ओतय द्वितीय कारणमाला होइछ; यथा—

ईश्वर भेटथि विराग सँ
हो विराग यदि भक्ति ।
भक्ति होय आसक्ति सँ
आसक्तिहु यदि शक्ति ॥ (लेखक)

एतय ईश्वर प्राप्तिक कारण थिक विराग, विरागक कारण थिक भक्ति, भक्तिक कारण थिक आसक्ति एवं आसक्तिक कारण थिक शक्ति; तेँ द्वितीय कारणमाला भेल ।

कारणमाला एवं मालादीपक

कारणमालामे कार्य-कारण सम्बन्ध रहैत अछि, किन्तु मालादीपकमे एक धर्माभिसम्बन्ध रहैत अछि । एहिमे पूर्व-पूर्व वर्णित पदार्थ पर-पर वर्णित वस्तुक कारण रहैत अछि, किन्तु मालादीपकमे दुनूमे एकधर्माभिसम्बन्ध द्वारा सम्बन्ध स्थापित कयल गेल रहैछ ।

81—सूक्ष्म

जतय आकार वा चेष्टा द्वारा कोनो तरहेँ सूक्ष्म अर्थ प्रतिपादित होअए तऽ ओतय सूक्ष्म अलङ्कार होइछ ।

सूक्ष्मक शाब्दिक अर्थ थिक महीन । एहि अलङ्कारमे आकार वा चेष्टाक द्वारा जानल जयबा योग्य कोनहुँ सूक्ष्म वस्तु कोनो अन्य उपायसँ प्रकाशित होइछ । ई गूढ़ार्थ प्रतीतिमूलक अलङ्कार थिक जाहिमे गूढ़ अर्थक प्रतीति होइछ । एहिमे कोनहु कथन स्पष्टतः नहि अपितु लक्ष्यरूपमे रहैत अछि । एहिमे गोपनक भावना स्पष्टतः प्रतीत होइछ । एकर विलक्षणता ई अछि जे कहनिहार ओ सुननिहारे मात्र अर्थग्रहण कय सकैत अछि ।

लक्षण :

आनक बुझ संकेत सुझ आशय 'सूक्ष्म' परेखि ।
कु□ज पैसि झट नील पट पहिरि चन्द्रमुखि देखि ॥ (अ०मा०)

सूक्ष्म ओ अलङ्कार थिक जकर संकेत आन नहि बूझय; यथा— नायिका कु□जमे पैसि नील वस्त्र धारण कय नायककेँ संकेत दैत छथि जे हमरा लोकनिक मिलन रातिमे होयत ।

उदाहरण :

पितु-गुरुजन बिच नलिनकेँ
कयल सम्पुटित वाम ।
छल संकेत निशि मिलन केर
सता रहल छल काम ॥ (लेखक)

पिता एवं गुरुजनक उपस्थितिमे नायिका कमलकेँ सम्पुटित कय नायककेँ ई संकेत देलथिन जे संध्या समय अर्थात् जखन कमल मौला जाइत छैक, हमरालोकनिक मिलन होयत।

एतय सूक्ष्म अर्थ अछि जे सम्बन्धित व्यक्तिये मात्र बुझतैक ।

82—व्याजोक्ति

जतय गुप्त रहस्य प्रकट भेलापर ओकरा कोनो व्याजेँ नुकाओल जाय, व्याजोक्ति अलङ्कार कहबैछ ।

व्याजोक्तिक अर्थ होइछ व्याज (बहाना)सँ कथन । एहिमे गुप्त रहस्य प्रकट भेलापर ओकरा लोक कोनो बहाना ताकि कय चोराबय चाहैत अछि । ई गूढ़ार्थ प्रतीतिमूलक अलङ्कार थिक ।

लक्षण :

1. **व्याजोक्तिश्छद्मनोद्भिन्नवस्तुरूप निगूहनम् ।** (का०प्र०)

व्याजोक्ति ओ अलङ्कार थिक जाहिमे प्रकटित वस्तुकेँ नुकाय कोनो बहानाक वर्णन कयल जाइछ ।

भेद :

एकर तीन भेद अछि—

1. प्रथम उत्तर, 2. द्वितीय उत्तर, 3. तृतीय उत्तर ।

1. प्रथम उत्तर

जतय उत्तरेसँ प्रश्नक कल्पना कयल जाय; यथा—

साँझक अतिथि भागेँ विहि आन ।
विमुखे पाप बड़ अछए गेआन ॥
हमरओ कन्त बसय परदेश ।
अथिक पथिक देखि मोहि कलेश ॥
पथिक वास भमि अनतए लेह ।
हमरा दोसर तेसर नहि गेह ॥ (चतुर्भुज)

एतय उत्तर थिक कोनो प्रोषितपतिका नायिकाक कोनो नायकक प्रति । हे पथिक ! साँझक पाहुन बड़ भाग्यसँ अबैत छथि । हुनका घुमयबामे बड़ पाप छैक, सेहो हम जनैत छी । किन्तु हमर स्वामी परदेशमे छथि आ हमरा दोसर-तेसर घरो नहि अछि, तेँ अहाँ घूमिकय अन्तय वास लियऽ ।

स्पष्ट अछि जे पथिक राति भरि रहबाक हेतु प्रश्न कयने होयथिन । अत: प्रथम उत्तर भेल।

2. द्वितीय उत्तर

जतय अनेक प्रश्नक अनेक अप्रसि□ वा असम्भव उत्तर देल जाय; यथा—

दुख की थिक ? नररूप धरव पृथ्वीपर ।
सुख की थिक ? तन दान करब पृथ्वीपर ॥ (लेखक)

एतय दुख एवं सुखक हेतु अप्रसि□ उत्तर देल गेल अछि ।

3. तृतीय उत्तर

जतय अनेक प्रश्नक एक उत्तर होअए; यथा—

पान सड़ल घोड़ा अड़ल बड़दहु किऐ उदास ?
केश ठाढ़ रोटी जरल सेवक भेल हतास ।
नवललना क्रीड़ा सुमिरि उर उपजल किअ त्रास ?
उत्तर सभकेर एक छल 'फेरल नहि छल' कास ॥ (लेखक)

एतय अनेक प्रश्नक एकहिटा उत्तर कहल गेल अछि ।

काव्यलिङ्ग एवं उत्तर

दुनूमे एकक कथनसँ दोसरक ज्ञान होइछ । अन्तर एतबेक अछि जे काव्यलिङ्गमे एक कथन दोसरक कारक हेतु होइछ, जखन कि उत्तरमे ज्ञापक हेतु । काव्यलिङ्गमे कारण एवं कार्य दुनू वर्णित रहैछ, किन्तु एहिमे कारणस्वरूप उत्तर मात्रेक कथन होइछ, प्रश्नक कल्पना पाठककेँ स्वयं करय पड़ैछ ।

55—एकावली

एकावली अलङ्कारमे पूर्व-पूर्व कथित पदार्थ उतरोत्तर कथित पदार्थक विशेषण रूपमे स्थापित वा निषेधित होइछ ।

एकावली शृंखलामूलक अलङ्कार थिक जाहिमे पूर्व-पूर्व वर्णित पदार्थ एवं पर-पर वर्णित पदार्थमे विशेषण-विशेष्यक सम्बन्ध रहैछ । एकावलीक अर्थ होइछ— माला, तेँ ई शृंखलाक एकटा माला बनि जाइत अछि, जे सौन्दर्यवृ□ करैछ ।

लक्षण :

1. **स्थाप्यतेऽपोह्यते वापि यथा पूर्व परं परम् ।**
   विशेषणतया यत्र वस्तु सैकावली द्विधा ॥ (का० प्र०)

एकावली अलङ्कारमे पूर्व-पूर्व वर्णित वस्तुक हेतु उत्तरोत्तर वर्णित वस्तुक विशेषण रूपमे विधान वा निषेध होइछ ।

2. **पूर्व-पूर्व प्रतिविशेषणत्वेन परं परम् ।**
   स्थाप्यतेऽपोह्यते वा चेत् स्यात्तदैकावली द्विधा ॥ (सा०द०)

एकावली अलङ्कारमे पूर्व-पूर्व वर्णित वस्तुक हेतु उत्तरोत्तर वर्णित वस्तुक विशेषण रूपमे स्थापन वा निषेध होइछ ।

3. **क्रमहि पहिल हो विशेषण अगिलुक श्रेणीब□ ।**
   उक्त-मुक्त क्रमसँ ग्रथित 'एकावली' निब□ ॥ (अ०मा०)

जतय पूर्वमे विशेषण आ बादमे विशेष्य श्रेणीब□ होअए ओतय एकावली अलङ्कार होइछ ।

भेद :

विशेष्य एवं विशेषणक स्थापन एवं निषेधक आधारपर एकर दू भेद होइत अछि—

1. स्थापनसँ 2. निषेधसँ ।

1. स्थापनसँ

जतय स्थापनक भाव प्रदर्शित होअए; यथा—

जलमे किरण, किरणमे लाली, लालीमे सौन्दर्य अपार ।
सुखमे खग, खगमे कलरव रव, कलरवमे मुदमोद प्रचार ॥
सरमे कमल, कमल पर मधुकर, मधुकरमे कलमद गुंजार ।
तरुमे दल, दलपर कोकिल कुल, कोकिल कुल कलनाद उचार ॥ (चाणक्य)

एतय जलमे किरण, किरणमे लाली, लालीमे सौन्दर्य आदिक स्थापन भेल अछि ।

2. निषेधसँ

जनम होअए जनु जोँ पुनि होइ ।
युवती भए जनमए जनु कोइ ॥

होए युवति जनु हो रसमंति ।
रसओ बुझए जनु हो कुलमंति ॥ (विद्यापति)

जन्म नहि होअए, जँ होअए तऽ युवती भए क्यो नहि जनमए, जँ युवती होअए तऽ रसमंति नहि आ जँ रसो बुझनिहारि होअए तऽ कुलमंति नहि ।

एतय निषेधसँ एकावली अलङ्कार भेल ।

एकावली एवं कारणमाला

एकावलीमे विशेष्य-विशेषण-भाव व्यंजित रहैछ जखनकि कारणमालमे कार्य-कारणभाव । दूनू शृंखलामूलक अलङ्कार थिक जाहिमे पूर्व-पूर्व वस्तुक उत्तरोत्तर वर्णित वस्तुक संग संबंध देखाओल जाइछ ।

एकावली एवं मालादीपक

मालादीपक एवं एकावलीमे अत्यन्त साम्य अछि जकरा अलङ्कार सर्वस्वमे स्पष्ट कहल गेल अछि— **उत्तरोत्तरस्य पूर्व-पूर्व प्रति उत्कर्ष हेतुत्वे, एकावली । पूर्व-पूर्वस्यतु उत्तरोत्तरं प्रतिउत्कर्ष निबन्धनत्वे मालादीपकम् ।** (अ०स०, पृ०सं० 159)

दुनूमे पूर्वकथित पदार्थक उत्तरकथित पदार्थक संग सम्बन्ध रहैछ । अन्तर एतबे अछि जे मालादीपकमे पूर्वकथित पदार्थ उत्तरकथित पदार्थक विशेषणरूपमे आबि कए चमत्कारक होइछ आ एकावलीक सौन्दर्य उत्तर स्थित पदार्थक पूर्वकथित पदार्थक विशेषण रूपमे स्थित भेलासँ होइछ । मालादीपकमे अनेक पदार्थक एक धर्म रहैत अछि जे एहिमे नहि रहैछ ।

56—सार

कतोक पदार्थमे जखन उत्तरोत्तर अपकर्ष वा उत्कर्ष वर्णित होअए तऽ सार अलङ्कार होइछ ।

ई शृंखलामूलक अलङ्कार थिक जाहिमे कतोक पदार्थ होइछ जकर उत्तरोत्तर उत्कर्ष वर्णित रहैछ । अपकर्षक वर्णनसँ सेहो सार अलंकार होइछ । एहिमे उत्कर्ष वा अपकर्ष चरम सीमा धरि पहुँचि जाइछ ।

लक्षण :

1. **उत्तरोत्तरमुत्कर्षो भवेत्सारः परावधिः ।** (का०प्र०)

जतय अनेक पदार्थमे उत्तरोत्तर पदार्थ पूर्व पदार्थसँ उत्कृष्ट कहल जाय ओतय सार अलङ्कार होइछ ।

2. **उत्तरोत्तरमुत्कर्षोवस्तुनः सार उच्यते ।** (सा०द०)

जतय वर्ण्य वस्तुक उत्तरोत्तर उत्कर्ष वर्णित होअए ओतय सार अलङ्कार होइछ ।

3. **उत्तरोत्तरमुत्कर्षः सारः इत्यभिधीयते ।**
मधु मधुरंतस्माच्य सुधातस्या कवेर्वचः ॥ (कुव०)

अनेक पदार्थक वर्णनमे उत्तरोत्तर पदार्थ यदि पूर्व पदार्थक गुणमे बढ़ैत जाय तऽ सार

होअए, तऽ उन्मीलित अलङ्कार होइछ ।

ई मीलित अलङ्कारक विपरीत अलंकार थिक । एहिमे दू वस्तुक भेद प्रत्यक्ष रूपसँ देखल जाइत अछि । तात्पर्य ई जे अत्यधिक गुणसाम्यक कारण दू वस्तुकेँ मिलि गेलोपर यदि कोनो कारणविशेषसँ भेद देखाय तऽ ओतय उन्मीलित अलङ्कार होइछ ।

लक्षण :

'उन्मीलित' यदि मीलितहुँ भेद पड़य किछु सूझि ।
यश हिमगिरि मिलितहुँ लितहुँ शीत परस वश बूझि ॥ (अ०मा०)

उन्मीलित ओ अलङ्कार थिक जाहिमे दू वस्तुकेँ मिलियो गेलापर किछु भेद बुझि पड़य; यथा— हे राजन् ! हिमालय अहींक गुणमे मिलि गेलाह, किन्तु देवता शीत गुणक कारण ओकर ज्ञान प्राप्त कय लैत छथि ।

उदाहरण :

केश छटाकय मोछ कटाकय
ड्रेस लगाकय एक समान ।
टहलथि बीच बाट पर धयने
एक दोसरक बाहु-वितान ॥
हँसी ठहाका देथि सभक सङ
नर नारिक हो किछु नहि भान ।
किन्तु जाथि नजदीक आबि तऽ
वक्षोजहि सँ समुचित ज्ञान ॥ (लेखक)

आइ-काल्हि युवा-युवतीमे एतेक समानता आबि गेलैक अछि जे दूरसँ चिन्हब कठिन किन्तु लग अयलासँ नारिक उन्नत पयोधर देखि सहजहि अन्तर स्पष्ट भए जाइछ ।

80—उत्तर

जतय चमत्कारपूर्ण उत्तरक वर्णन होअए ओतय उत्तरालङ्कार होइछ ।

एहिमे कविकल्पनाप्रसूत उत्तरक वर्णन होइछ, जाहिमे कतहु तँ उत्तरसँ प्रश्नक कल्पना कयल जाइछ, कतहु अनेक प्रश्नक अनेक प्रसि□ उत्तर देल जाइछ एवं कतहु प्रश्नहिसँ उत्तर निकालल जाइछ । एकरा चित्रोत्तर सेहो कहल जाइछ ।

लक्षण :

'चित्रोत्तर' प्रश्नोत्तरहु चित्रित एक अनेक ।
दुहब कि ? पिअब कि ? पढ़ब ओ सुनब कि ? सुरधुनि एक । (अ०मा०)

चित्रोत्तर ओ अलङ्कार थिक जाहिमे एक वा अनेक प्रश्नोत्तर चित्रित रहैछ; यथा— दुहब कि ? पिअब कि ? पढ़ब ओ सुनब कि ?— प्रश्न थिक, जकर एकेटा उत्तर अछि, सुरधुनि (गङ्गा) । अतः उत्तर अलङ्कार भेल ।

तद्गुण एवं मीलित

दुनूमे मुख्य पदार्थ निर्बलकेँ अपनामे मिला लैत अछि, किन्तु अन्तर ई अछि जे तद्गुणमे अपन गुण त्यागि आनक गुण ग्रहण कयल जाइछ, जखनकि मीलितमे अधिक गुणवला वस्तुमे न्यून गुणवला वस्तु लुप्त भए जाइछ। मीलितमे पदार्थ तुल्य गुणवला होइछ, जखन कि तद्गुणमे भिन्न गुणवला।

78—सामान्य

जतय समान गुणक कारण प्रस्तुत एवं अप्रस्तुतमे अभेद स्थापन कयल जाय ओतय सामान्य अलङ्कार होइछ।

एहिमे समान गुण वा धर्मक कारण दू पदार्थमे अभेद प्रतीति होइछ। ई लोकन्यायमूलक अलङ्कार थिक जाहिमे तुल्य गुणवला दू पदार्थक वर्णन कयल जाइत अछि।

लक्षण :

वस्तु विशेष न लक्ष्य हो सादृश्येँ सामान्य।
पदुमिनि पैसलि कमल वन वदन न बुझि पड़ अन्य॥ (अ०मा०)

जतय सादृश्यक कारणेँ वस्तुविशेष लक्षित नहि होअए ओतय सामान्य अलंकार होइछ; यथा— पद्मिनी (नायिका) जखन कमल वनमे प्रवेश कयलनि तऽ हुनक वदन कमलक संग मिलिकय अभेद प्रदर्शित कयलक।

उदाहरण :

चरण-नूपुर उपर सारी। मुखर मेखल करे निवारी।
अम्बरे सामरि देह झपाइ। चलहि तिमिर-पथ समाइ॥ (विद्यापति)

कृष्णाभिसारिकाक वर्णन अछि जे जखन ओ कारी वस्त्र पहिरि प्रयाण कयलनि तऽ अन्हारमे तेनाकऽ मिलि गेलीह जे हुनका चिन्हब कठिन।

एतय नायिका एवं रातिमे अभेद स्थापना अछि।

सामान्य एवं तद्गुण

तद्गुणमे अपन गुण त्यागि आनक गुण ग्रहण कयल जाइछ, किन्तु सामान्यमे स्वगुणक त्याग नहि कयल जाइछ। सामान्यमे गुणसाम्यक कारण दू पदार्थमे अभेद देखाओल जाइछ।

सामान्य एवं मीलित

दुनूमे समानताक कारण अभेद स्थापना होइछ। मीलितमे प्रधान पदार्थ गौणकेँ अपनामे मिला लैछ, किन्तु सामान्यमे गुणक समानताक कारण अभेद देखाओल जाइछ। मीलितमे दुनू पदार्थक प्रत्यक्ष ज्ञान नहि होइछ, किन्तु सामान्यमे दुनू प्रत्यक्ष होइछ।

79—उन्मीलित

यदि एक वस्तुमे दोसर वस्तु नुका जाय आ कोनो कारणविशेषसँ ओकर भेदक प्रतीति

अलङ्कार होइछ; यथा— मधु मधुर होइछ; ताहूसँ मधुर अमृत आ अमृतोसँ मधुर कविक वचन।

4. सार उत्तरोत्तर बढ़य जत उत्कर्ष उदार।
दूध मधुर, मधु मधुरतर, कवितामधुराधार॥ (अ०मा०)

जतय उत्तरोत्तर उत्कर्ष बढ़य ओतय सार अलङ्कार होइछ; यथा— दूध मधुर होइछ, मधु ताहूसँ मधुर आ कविता ओहि सबसँ मधुर।

भेद :

उत्कृष्टता एवं अपकर्षता वर्णनक आधारपर एकर दू भेद अछि— 1. प्रथम सार 2. द्वितीय सार।

1. प्रथम सार

एहिमे उत्तरोत्तर उत्कर्ष वर्णित रहैछ; यथा—

(क) **प्राणीमे श्रेष्ठ मनुज अछि**
मनुजहुमे पढ़ल लिखल जन।
पढ़लहुमे जे अछि योगी
योगीमे मुक्त विमल मन॥ (अ०क०)

एतय उत्तरोत्तर वस्तुमे वैशिष्ट्य वर्णित अछि।

(ख) **नारि जाति सहजहिँ सुन्दर**
सुन्दरतम तनि रूप।
रूपहुसँ सुन्दर नयन
नयनहुँ कुच अपरूप॥ (लेखक)

2. द्वितीय सार

एहिमे उत्तरोत्तर अपकर्षक वर्णन रहैछ; यथा—

सबसँ दुख थिक दरिद्रता
दुखतर थिक पुनि व्याधि।
व्याधिहुसँ दुख थिक महा
चंचल मन केर आधि॥ (लेखक)

एक तँ पैघ दुख थिक दरिद्रता, ततःपर व्याधि आ ताहूसँ महादुख थिक मोनक कष्ट।

एतय उत्तरोत्तर अपकर्ष वर्णनसँ द्वितीय सार भेल।

57—पर्याय

जतय एक वस्तुक अनेकमे एवं अनेक वस्तुक एकमे स्थिति होअए, पर्याय अलङ्कार कहबैछ।

ई वाक्यन्यायमूलक अलङ्कार थिक जकर जड़िमे दू तत्त्व विद्यमान रहैछ— विस्तार एवं औचित्य। एहिमे वस्तुक वर्णन क्रमशः आ कालभेदक अनुसार होइछ। एहिमे आधार, आधेय एवं क्रम तीनूक वर्णन कविकल्पनाप्रसूत होयबाक चाही।

लक्षण :

क्वच्चिदेकमनेकस्मिन्ननेकंचैकगं क्रमात्।
भवति क्रियते वा चेत्तदा पर्याय इष्यते॥ (सा०द०)

पर्याय ओ अलङ्कार थिक जाहिमे एक वस्तुक अनेकमे वा अनेक वस्तुक एकमे क्रमशः अवस्थान वा सम्पादनक वर्णन प्रदर्शित कयल जाय।

भेद :

एकर दू भेद अछि— 1. प्रथम पर्याय 2. द्वितीय पर्याय।

1. प्रथम पर्याय

लक्षण :

एकहु क्रमहि अनेक गत हो पर्याय प्रवृत्त।
पद तजि, दृग गहि, धनिक पुनि गहल चपलता चित्त॥ (अ० मा०)

एक वस्तुक अनेक स्थानपर क्रमशः अवस्थानक वर्णनमे प्रथम पर्याय होइछ यथा— चपलता सर्वप्रथम नायिकाक चरणमे आयल, पुनः आँखिमे आ अंतमे चित्तमे।

एतय एकहिटा चपलता अनेक स्थानमे वर्णित अछि।

उदाहरण :

वर्षाबुन्द खसल गिरिजापर जे छलि तपमे लीन।
किछु क्षण कए विश्राम पलकपर भेल अधोगति दीन॥
पुनि से अधर ओष्ठकेँ चुमइत दुहु उरोजपर गेल।
त्रिवलीकेर आलिङ्गन करइत नाभि परस कए लेल॥ (लेखक)

एतय एकहिटा वर्षाबुन्द पहिने तपनिरत पार्वतीक देहपर खसल, किछु क्षण दुनू पलकपर विश्राम कयलक, पुनः नीचाँ खसि हुनक अधरोष्ठकेँ चुमइत स्तनद्वयपर पहुँचल आ पुनः त्रिवलीकेर आलिंगन करैत नाभिक स्पर्श कए लेलक।

2. द्वितीय पर्याय

लक्षण :

एक आश्रयहु अनेकक आश्रय पुनि पर्याय।
काश-पटेरक वन जतय ततय खेत लहराय॥ (अ०मा०)

जतय एक आश्रयमे अनेक आश्रित रहैत अछि ओतय द्वितीय पर्याय होइछ; यथा— जाही स्थानमे काश-पटेरक वोन अछि ततहि खेत सेहो लहराइत अछि।

उदाहरण :

रक्त अधरसँ युक्त अछि सित दन्तक वरमाल।
किन्तु बरय नहि रक्तिमा चमकय मुक्ता जाल॥ (लेखक)

एतय ओष्ठक अत्यन्त सम्पर्कमे रहितहुँ दन्तपंक्ति ओकर गुण नहि ग्रहण कयलक।

77—मीलित

जतय दू न्यूनाधिक समान गुणवला पदार्थक वर्णन होअए आ ओहिमे अधिक गुणमे न्यून गुण लुप्त भए जाए, तऽ मीलित अलङ्कार होइछ।

मीलितक अर्थ होइछ— मिलब। एहि अलङ्कारमे दू न्यूनाधिक गुणवला पदार्थ तेना कए मिलि जाइत अछि जे ओकर स्वरूप पृथक् रूपेँ दृष्टिगोचर नहि होइछ। ई लोकन्यायमूलक अलङ्कार थिक।

लक्षण :

1. **समेन लक्ष्मणा वस्तु वस्तुना यन्निगृह्यते।**
निजेनागन्तुना वापि तन्मीलितमितिस्मृतम्॥ (का०प्र०)

जतय कोनो समान वस्तुक द्वारा ओकर अपन वा आगन्तुकक गुणसँ कोनो समान वस्तु प्रच्छन्न भए जाय ओतय मीलित अलङ्कार होइछ।

2. **मीलितं वस्तुनो गुप्तिः केनचित्तुल्य लक्ष्मणा।** (सा०द०)

जतय कोनो समान लक्षणवाला वस्तुसँ कोनो अन्य वस्तु लुप्त भए जाय, ओतय मीलित अलङ्कार होइछ।

3. **मीलितं यदि सादृश्याद्भेद एव न लक्ष्यते।**
रसो नालक्षि लाक्षायाश्चरणे सहजारुणे॥ (कुव०)

जतय दू वस्तुमे एहन सादृश्य रहय जे ओकर भेद नहि बुझाय, ओतय मीलित अलङ्कार होइछ; यथा— हुनक सहज लाल चरणमे लाक्षा रंग नहि प्रतीत होइछ।

4. **'मीलित' सादृश्ये न जौँ हो लक्षित किछु भेद।**
आलत बुझल न जाय जे रतरत चरण अभेद॥ (अ०मा०)

मीलित ओ अलंकार थिक, जाहिमे सादृश्यक कारणेँ दू वस्तुमे भेद नहि बुझाय; यथा— हुनक सहजहि लाल चरणमे अलताक रंग नहि बुझाइत अछि।

उदाहरण :

स्पर्श परस्पर पाबि दुहुक कर जे आमोदेँ जड़ छल।
जन, समाज लाजक-साम्रज्येँ से चतुरो नहि बूझल॥ (एकावली-परिणय)

एतय एकवीर एवं एकावलीक करस्पर्शक वर्णन अछि। पहिलुका जड़ताभावकेँ नुकाय एकाकार भाव व्यक्त कयल गेल अछि, तेँ मीलित अलङ्कार भेल।

3. **तद्गुणः स्वगुणत्यागादत्युत्कृष्टगुणग्रहः ।** (सा०द०)

स्वगुण त्यागि कय आनक उत्कृष्ट गुण ग्रहण करब तद्गुण थिक ।

4. **त्यागि अपन गुण आन गुण ग्रहण तद्गुणक लेल ।**
नक छक मोती अधर रङ पदुम राग बनि गेल ॥ (अ०मा०)

अपन गुण त्यागि आनक गुण ग्रहण करब तद्गुण भेल; यथा— नाकक छकक मोती अधरक लाल रंगक कारण पद्मरागक कान्तिकेँ धारण कय लेलक ।

एतय मोती अपन गुण (श्वेतिमा) छोड़ि पद्मरागक गुण (रक्तिमा) ग्रहण कय लेलक, तेँ तद्गुण भेल ।

उदाहरण :

1. **व्योम भूमिवन गिरि नदी, आदि पदार्थ जतेक ।**
देल छनहिमे तरुण तम, नील रङ्ग कए एक ॥ (एकावली–परिणय)

तरुण तम अत्यधिक शक्तिशाली थिक । ओ सभ वस्तुकेँ अपन रंगमे रङि सकैछ, तेँ व्योम, भू आदिकेँ रङि देलक । अतः तद्गुण भेल ।

तद्गुण एवं उल्लास

उल्लासमे एकक गुणसँ दोसरमे नवीन गुण उत्पन्न होइछ । तद्गुणमे एक वस्तुक गुण अन्य वस्तु द्वारा ग्रहण कय लेल जाइछ ।

76—अतद्गुण

जतय निकटतम उत्कृष्ट वस्तुक गुण ग्रहण नहि कयल जाय ओतय अतद्गुण अलङ्कार होइछ ।

ई तद्गुणक विरोधी अलङ्कार थिक । एहिमे न्यून गुणवला वस्तु उत्कृष्ट गुणवला वस्तुक सम्पर्कोमे रहि ओकर गुण ग्रहण नहि करैछ । ई लोकन्यायमूलक अलङ्कार थिक ।

लक्षण :

1. **तद्रूपाननुहारश्चेदस्य तत्स्यादतद्गुणः ।** (का०प्र०)

प्रकृष्ट गुणवला प्रकृतक संसर्गमे आबिकय, अपकृष्ट गुणवला अप्रकृत ओकर गुणकेँ नहि ग्रहण करय, तऽ अतद्गुण होइछ ।

2. **तद्रूपाननुहारस्तु हेतौ सत्यप्यतद्गुणः ।** (सा०द०)

जतय कारण भेलहु संता प्रकृतक गुणकेँ अप्रकृत ग्रहण नहि करय, ओतय अतद्गुण होइछ ।

3. **संगत गुण आनक न पुनि ग्रहण अतद्गुण ह्वैछ ।**
चिर रागी मम मनहु बसि पिय रंजित न बनैछ ॥ (अ०मा०)

उत्कृष्ट गुणवलाक संगहु रहि ओकर गुण ग्रहण नहि करबामे अतद्गुण होइछ; यथा— हमर अनुरक्त हृदयमे रहियो कय स्वामी नहि रङला ।

उदाहरण :

जे उरोज छल मणिसँ झाँपल मिलन समयमे ।
से पुनि अश्रुबुन्दसँ पूरित विरह समयमे ॥ (लेखक)

एतय एकहि आधार पयोधर क्रमशः मणि एवं अश्रुबुन्दसँ आवृत्त रहैछ तेँ द्वितीय पर्याय भेल ।

विशेष एवं पर्याय

विशेषालङ्कारमे एकहि पदार्थक एकहि स्थानमे स्थिति देखाओल जाइछ किन्तु पर्यायमे कालभेदसँ अर्थात् भिन्न-भिन्न समयमे एक वस्तुकेँ अनेक आधारमे । पर्यायमे समयान्तर रहैछ, किन्तु विशेषमे तकर अभाव ।

58— परिवृत्ति

परिवृत्ति अलङ्कार ओ थिक जाहिमे सम एवं विषम पदार्थक परस्पर विनिमय होअए ।

परिवृत्तिक अर्थ होइछ- विनिमय । एहिमे एक पदार्थक अन्य पदार्थक संग अदल-बदल होइछ । ई विनिमय वास्तविक नहि कविकल्पित होइछ । एहि अलङ्कारक प्रधान तत्त्व थिक— औचित्य आ वैषम्य ।

लक्षण :

1. **परिवृत्तिर्विनिमयः समन्यूनाधिकैर्भवेत् ।** (सा०द०)

परिवृत्ति ओ अलङ्कार थिक जाहिमे कोनो वस्तुक समान, न्यून वा अधिक वस्तुसँ विनिमय वर्णन होइछ ।

2. **अदल बदल कम अधिकमे अलङ्कार परिवृत्ति ।**
किनल जीर्ण तन दय विमल यश जटायु खग वृ□ ॥ (अ०मा०)

जतय कम एवं अधिकमे अदल-बदल होइछ ओतय परिवृत्ति अलङ्कार होइछ; यथा— जटायु अपन जीर्ण शरीर दय विमल यश किनलक ।

एतय जटायुक जीर्ण शरीर एवं विमल यशमे अदला-बदली भेलैक ।

भेद :

एकर निम्नलिखित भेद अछि— 1. प्रथम परिवृत्ति 2. द्वितीय परिवृत्ति 3. तृतीय परिवृत्ति 4. चतुर्थ परिवृत्ति ।

1. प्रथम परिवृत्ति

जतय उत्कृष्ट पदार्थक उत्कृष्ट पदार्थक संग विनिमय होइछ; यथा—

(क) **छवि देखाए रविसन क्रेता सँ,**
दाम गछा कऽ भावि प्रकाश ।
बेचि लेल, दूर्वादल-दोना
मे अलेल होइछ जे भास ॥ (राधा-विरह)

एतय प्रकृति मोदियानि अपन छवि देखाय सूर्य समान क्रेतासँ भावि प्रकाश गछा लेलक ।

एतय छविसँ भावि प्रकाशक बदलामे प्रथम परिवृत्ति भेल ।

(ख) कन्यागत निज सुता दान दए सुत कीनै छथि ।
कन्या अपन विमल शरीर दए हृदय जितै छथि ॥ (लेखक)

एतय बेटीसँ बेटा ओ सुन्दर शरीरसँ हृदयकेँ जितबामे प्रथम परिवृत्ति भेल ।

2. द्वितीय परिवृत्ति

जतय न्यून वस्तुक न्यूने वस्तुक संग विनिमय होइछ; यथा—

हे गंगे ! उपकार कएल बड़ हरलहुँ मन केर पाप ।
अंग-अंग बालूसँ भरिकए देलहुँ की न सन्ताप ? (लेखक)

एतय पाप लए संताप देबामे निकृष्ट वस्तुक निकृष्टे वस्तुक संग विनिमय अछि, तेँ द्वितीय परिवृत्ति भेल ।

3. तृतीय परिवृत्ति

जतय उत्कृष्ट वस्तु दय निकृष्ट वस्तु लेल जाय; यथा—

निज अमूल्य मन दए प्रियवरकेँ विरह वेदना पओलहुँ ।
अधरासव प्रदान कए, सखि हे ! दन्तक्षत कत लेलहुँ ॥ (लेखक)

एतय मन एवं अधरासव सन अमूल्य वस्तु प्रदान कए विरह-वेदना एवं दन्तक्षत सन निकृष्ट वस्तु लेबामे तृतीय परिवृत्ति भेल ।

4. चतुर्थ परिवृत्ति

जतय निकृष्ट वस्तु दए उत्कृष्ट वस्तु लेल जाइछ; यथा—

धन्य जटायु वृ□, जे निज जीर्ण शरीर दए ।
शशि सम विमल समृ□, कीनल यश रविकर सदृश ॥ (लेखक)

एतय जटायु द्वारा जीर्ण शरीर सन तुच्छ वस्तु दय शशि सन विमल समृ□ आ सूर्यक प्रकाश सन भासमान अमर कीर्त्तिकेँ किनबामे चतुर्थ परिवृत्ति भेल ।

59—यथासंख्य

जतय पूर्व कथित पदार्थक ओही क्रमसँ अन्वय भेल रहैछ तऽ यथासंख्य अलङ्कार कहबैछ ।

एहि अलङ्कारमे संख्यापर बेसी ध्यान देल जाइत छैक । पूर्वमे कहल गेल वस्तुक ओही क्रममे निर्वाह कयल जाइत अछि । एही क्रमिक सम्बन्धक कारणेँ एहि अलंकारमे चमत्कारिता अबैछ ।

लक्षण :

1. उद्दिष्टाणां क्रमेण अनुनिर्देशः यथासंख्याम् । (रुय्यक)

कोनो व्यक्ति वा स्थानोक नाम आबय तऽ मुद्रालङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारमे मुद्राक (मोहरक) द्वारा कोनो व्यक्तिक सम्बन्ध देखाओल जाइछ । सूचनीय अर्थक संग व्यक्ति, स्थान, वस्तु इत्यादिक सेहो नाम अबैछ ।

लक्षण :

मुद्रा प्राप्त प्रसङ्ग मत पदसँ सूचित अर्थ ।
कृष्ण द्वैपायन महा-भारत रचथि सदर्थ ॥ (अ०मा०)

प्रसङ्गप्राप्त पदसँ जखन कोनो अन्य अर्थक सूचना हो तऽ मुद्रा अलंकार होइछ; यथा— एतय कृष्ण एवं द्वैपायन (भ्रमर एवं व्यास)क सूचना भेटल अछि ।

उदाहरण :

हम छोट मानव, पैघ दानव,
कातर स्वर सँ करैछी सोर,
विकल मनसँ ओ लगैछी गोड़ । (मेरु-प्रभा)

एतय मानव एवं दानवसँ सूचनीय अर्थ थिक क्रमशः सुर एवं असुर, जे समुद्र मन्थनक समयमे उपस्थित छलाह ।

75—तद्गुण

जतय अपन गुणक त्याग कय अन्य उत्कृष्ट गुणक ग्रहण होअए, ओतय तद्गुण अलङ्कार होइछ ।

तद्गुण— तत् एवं गुण— दू शब्दक मेलसँ बनल अछि । एहिमे एक वस्तु अपन गुण छोड़िकय अपन निकटतम गुणाधिक्यवला वस्तुक गुण ग्रहण कय लैत अछि । एहिमे एकटा अधिक गुणवला एवं दोसर न्यून गुण वला पदार्थ रहैत अछि । एहिमे दुनू वर्णनीय वस्तुक रूप रंग एवं गुण भिन्न-भिन्न रहैत अछि । ई सादृश्यमूलक अलंकार थिक ।

लक्षण :

1. **तद्गुणः स्वगुणत्यागादन्यदीयगुणग्रहः ।**
पद्मरागायते नासामौक्तिकं तेऽधरत्विषा ॥ (कुव०)

जतय स्वगुणकेँ त्यागि कय आनक गुणकेँ ग्रहण कयल जाय, ओतय तद्गुण अलङ्कार होइछ; यथा— अहाँक अधरोष्ठक कान्तिसँ नाकक मोती पद्मराग मणिक कान्तिकेँ धारण कय लेलक ।

एतय श्वेत रंगधारी मोती अपन श्वेतिमा छोड़ि लालिमा धारण कय लेलक, तेँ तद्गुण अलंकार भेल ।

2. **स्वगुणत्यागादत्युत्कृष्टगुणस्वीकारस्तद्गुणः ।** (अ०स०)

अपन गुणकेँ छोड़ि आनक अत्यन्त उत्कृष्ट गुणकेँ धारण करबकँ तद्गुण कहल जाइछ ।

2. द्वितीय अवज्ञा

जतय दोषक असरि दोषपर नहि होअए; यथा—

कमल मलानो यदि च हो नहि चानक गुण हानि ।
बड़द चढ़थि शंकर यदपि की जग गजक न मानि ॥ (अ०मा०)

कमल मलानो भए जाइत अछि तथापि चानक गुणहानि नहि होइछ । शंकर बड़दपर चढ़ैत छथि तेँ की हाथीक मान्यता कम थोड़बे भेलैक ?

73—लेश

जतय दोषकेँ गुण एवं गुणकेँ दोष कहल जाइत छैक ओतय लेश अलङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारमे गुणक संग दोषक अंश ओ दोषक संग गुणक अंश देखाओल जाइछ ।

लक्षण :

गुणक दोष, दोषहुक गुण 'लेश' विशेष उदन्त । (अ०मा०)

जखन गुणमे आंशिक रूपेँ दोष एवं दोषमे आंशिक रूपेँ गुण उपस्थित रहय तऽ लेश अलङ्कार होइछ ।

भेद :

एकर दू भेद अछि—

1. प्रथम लेश 2. द्वितीय लेश ।

1. प्रथम लेश

जतय गुणक दोषरूपमे कथन होअए ओतय प्रथम लेश अलङ्कार होइछ; यथा—

गगन मगन उड़इछ सतत जत स्वच्छन्द विहंग ।
शुक पंजर बंधन पड़ल स्फुट मधु वचन प्रसंग ॥ (अ०मा०)

जतय पक्षी सब आकाशमे मग्न भए उड़ैत अछि ओतय बेचारा सुग्गाकेँ पिजड़ामे बन्द कए मधुर वचन रटाओल जाइत छैक ।

एतय गुणक दोष रूपमे कथन अछि ।

2. द्वितीय लेश

जतय दोषक गुण रूपमे वर्णन होअए; यथा—

सुख-दुख बुझि चिन्तित दुखी,
सुखी मूढ़ निश्चिन्त । (अ०मा०)

बु□मान व्यक्ति सुख-दुखसँ चिन्तित आ दुखी रहैत छथि, भने बेचारा मूढ़ अछि, जे सुखी आ निश्चिन्त रहैत अछि ।

74—मुद्रा

जतय प्रस्तुत अर्थसूचक पद द्वारा कोनो सूचनीय अर्थक आभास होअए आ संगहि

जतय पूर्व कथित वस्तुक ओही क्रमसँ अन्वय रहैछ ओतय यथासंख्य अलङ्कार होइछ ।

2. यथासंख्यमनूद्देश उद्दिष्टाणां क्रमेण यत् ॥ (सा०द०)

जतय अदृष्ट (कथित) पदार्थक क्रमशः अनुवृत्ति रहय ओतय यथासंख्य अलङ्कार होइछ ।

3. **वस्तु विधान विशेष्य वा विशेषणक संस्थान ।**
यथाक्रमहि अन्वित करिअ 'यथासंख्य' अभिधान ॥ (अ०मा०)

जतय वस्तु विधान विशेष्य रहय वा विशेषण ओकर आदि तथा क्रमहि अन्वय होअए तऽ यथासंख्य अलङ्कार होइछ ।

उदाहरण :

1. **शत्रु मित्र गुरु शिष्यकेँ हतु गहु नमु अपनाउ ।**
श्याम रक्त सित वरन तन हरि विधि शिव चित लाउ ॥ (अ०मा०)

एतय शुत्रु, मित्र, गुरु एवं शिष्यक हेतु क्रमशः अछि— हतु, गहु, नमु एवं अपनाउ । अर्थात् शत्रुकेँ हतु (मारू), मित्रकेँ गहु, गुरुकेँ नमु एवं शिष्यकेँ अपनाउ । पुनः दोसर चरणमे श्याम, रक्त एवं सित वर्णक हेतु अनुवृत्ति भेल अछि— हरि, विधि एवं शिवक । अतः यथासंख्य अलंकार भेल ।

2. **शंख सुदर्शन गदा सरोरुह सारङ्ग पीयर-वासे ।**
जनि शशि सूरुज मेरु-शिखर कुज इन्द्रधनु तड़ित अकाशे ॥ (उमापति)

एतय-शंख, सुदर्शन, गदा, सरोरुह, सारङ्ग एवं पीयर-वासक हेतु क्रमशः अनुवृत्ति अछि— शशि, सूरुज, मेरुशिखर, कुज, इन्द्रधनु एवं तड़ित (विजलोका) ।

60—परिसंख्या

परिसंख्या ओ अलङ्कार थिक जाहिमे कोनो पदार्थकेँ एक स्थानसँ निषेध कए दोसर स्थानमे स्थापित कयल जाय ।

ई वाक्यन्यायमूलक अलङ्कार थिक जाहिमे कोनो पदार्थकेँ एक स्थानसँ निषेध कए दोसर स्थानमे स्थापित कयल जाय ।

एहि अलंकारमे दू शब्द अछि— परि एवं संख्या । परि उपसर्ग थिक जकर अर्थ होइछ छोड़ि कए आ संख्याक क्रम । अतः एहि अलङ्कारमे एक वस्तुक अनेक स्थानमे स्थिति सम्भव भेलो सन्ता अन्यत्र निषेध कए एक स्थानपर स्थापित कयल जाइछ । एहिमे निषेधक वर्णन कविकल्पनाप्रसूत होइछ । एहिमे एक वस्तुकेँ अनेक ठामसँ हटाय एकहि स्थानपर स्थापित कयल जाइछ । ई श्लेषयुक्त एवं श्लेषरहित दुनू भए सकैछ । एहिमे प्रश्नवाचक वा बिनु प्रश्नहुक उक्ति होइछ ।

लक्षण :

1. **प्रश्नादप्रश्नतो वापि कथिताद्वस्तुनो भवेत् ।**
तादृगन्यव्यपोहश्चेच्छाब्द अर्थोऽथवा तथा ॥ (सा०द०)

जतय प्रश्नपूर्वक वा बिनु प्रश्नहुक एक वस्तुक कथनसँ तत्समाने दोसर वस्तुक शब्दत: वा अर्थत: निराकरण होअए ओतय परिसंख्या अलङ्कार होइछ ।

2. **परिसंख्या निषिध्यैकमेकस्मिन्वस्तुयन्त्रणम् ।**
स्नेहक्षय: प्रदीपेषु न स्वान्तेषु नतभ्रुवाम् ॥ (कुव०)

कोनो वस्तुक एक स्थानपर अभाव देखाकय दोसर स्थानपर सद्भाव देखायब परिसंख्या अलङ्कार थिक; यथा— रमणीक हृदयमे स्नेहक क्षय नहि भेल किन्तु दीपमे स्नेह (तेल)क क्षय भए गेल ।

3. **कय निषेध एकक अपर वस्तुक जन अभिधान ।**
संख्या सीमन नियन्त्रण 'परिसंख्या'क निदान ॥ (अ०मा०)

एक वस्तुक निषेध कय जतय दोसर वस्तुक स्थापना कयल जाय ओतय परिसंख्या अलङ्कार होइछ ।

उदाहरण :

1. **स्नेह घटय तऽ दीपमे नहि मनमे रमणीक ।**
कारिख दीपक-शिखहिमे नहि चरित्रमे थीक ॥ (अ०मा०)

स्नेह (प्रेम आ तेल) दीपमे घटैत छैक रमणीक मोनमे नहि । कारिख दीपेक शिखामे होइछ चरित्रमे नहि ।

2. **विरहेँ व्याकुल जत चक्रवाक,**
जड़ मात्र जीव सदिखन अवाक ।
एकान्त अधोगति पानिहीक
द्विजराज विमुखता पद्मिनीक ॥ (एकावली-परिणय)

61—विकल्प

विकल्प ओ अलङ्कार थिक जाहिमे समान बलवला परस्पर विरोधी पदार्थ एकहि समयमे एकत्र देखाओल जाइछ ।

विकल्पक अर्थ होइछ दूमेसँ एकटा । ई समुच्चयक विपरीत अलङ्कार थिक । ई वाक्यन्यायमूलक अलंकार रहितहु अनिश्चितताक प्रधानताक कारण विरोधगर्भ मानल जाइछ । एहिमे औपम्यगर्भतेक कारण चमत्कार होइछ ।

लक्षण :

यदि विरोध हो तुल्य बल बीच विकल्प प्रमाण ।
संधि विग्रहो जे कोनो झुकबथु माथ कमान ॥ (अ० मा०)

यदि तुल्य बलक बीच विरोध होअए तऽ विकल्प होइछ; यथा— संधि-विग्रहमे माथ-कमान (क्रमशः) झुकबय पड़ैछ ।

2. दोषसँ दोषक प्राप्ति

(क) मणिहिक मोल घटैछ यदि जौहरीक नहि हाथ ।
मणि यदि बानर हाथ पड़ फुटइछ पाथर माथ ॥ (अ०मा०)

जौहरीक हाथमे नहि पड़ने मणिक मोल घटि जाइछ । जँ बानरक हाथमे मणि पड़ल तऽ ओ तोड़िए कए फेकत ने ? एतय दोषसँ दोषक प्राप्ति अछि ।

(ख) नहि बरिसय अवसर नहि होए ।
पुर परिजन संचर नहि कोए ॥ (विद्यापति)

3. गुणसँ दोषक प्राप्ति

रमणि अभागलि ब्रज-रमण संग न जे रमि जाथि ।
भूखल लोकक भाग्य से भूखेँ जहर ने खाथि ॥ (अ०मा०)

ओ रमणी अभागलि छलीह जे ब्रजमे कृष्णक संग रमण नहि कयलनि । भूखल लोक भाग्यहिसँ जहर नहि खाइत अछि ।

एतय गुणसँ दोषक प्राप्ति देखाओल गेल अछि ।

4. दोषसँ गुणक प्राप्ति

नयन चपलता चरणमे रहय दितथि भगवान ।
तव भय द्रुत अरि युवति मुख वचन सुनय सब कान ॥ (अ०मा०)

एतय दोषसँ गुणक प्राप्ति भेल अछि ।

72—अवज्ञा

जतय एकक गुण-दोषसँ दोसरक गुण-दोष नहि होयब देखाओल जाय, ओतय अवज्ञा अलङ्कार होइछ ।

ई उल्लासक विरोधी अलङ्कार थिक । अवज्ञाक अर्थ होइछ अनादर । एहिमे एकक गुण-दोषक दोसर अनादर करैछ ।

लक्षण :

गुणक असरि दोषक कसरि यदि न 'अवज्ञा' उक्त । (अ०मा०)

जतय गुण एवं दोषक असरि अनकापर नहि पड़य ओतय अवज्ञा अलङ्कार होयत ।

एकर दू भेद अछि—

1. प्रथम अवज्ञा 2. द्वितीय अवज्ञा ।

1. प्रथम अवज्ञा

यदि गुणक असरिसँ गुणक प्राप्ति नहि होअए; यथा—

गङ्गा वसितहुँ होय नहि घोंघा सितुआ मुक्त । (अ०मा०)

एतय गंगामे रहितहु घोंघा-सितुआ मुक्त नहि होयबामे प्रथम अवज्ञा भेल ।

प्रतिबिम्बक वर्णन कयल जाइछ।

लक्षण :

अप्रस्तुत प्रतिबिम्बने प्रस्तुत ललित बनैछ।
खेत पानि बहि गेल ओ तैयो आरि बन्हैछ॥ (अ०मा०)

एहिमे अप्रस्तुत प्रतिबिम्बनसँ प्रस्तुत अर्थक ज्ञान होइछ; यथा— खेतक पानि बहियो गेलासँ ओ आरि बन्हैत अछि।

तात्पर्य ई जे समय बीतियो गेलापर ओ अपन कार्य नहि छोड़लनि।

उदाहरण :

जइतहि हार टुटिए गेल ना।
भूषण वसन मलिन भेल ना॥
रोए-रोए काजर दहाए देल ना।
अदकहि सिंदुर मेटाए गेल ना॥ (विद्यापति)

एतय प्रस्तुत वर्णन नहि कय अप्रस्तुतक वर्णन अछि। एहि अप्रस्तुतक वर्णनसँ प्रस्तुत अर्थ ग्राह्य थीक।

71—उल्लास

एकक गुण-दोषसँ दोसरक गुण-दोषक प्राप्ति होयब उल्लास अलङ्कार थिक।

उल्लासक अर्थ होइछ प्रबल सम्बन्ध। एहि एक वस्तुक प्रबल गुण-दोषसँ दोसरक गुण-दोषक प्राप्ति होइछ।

लक्षण :

आनक ककरहु दोष-गुण सँ होइछ 'उल्लास'।
गङ्गा कहथि पवित्र हम लहि तट संतक वास॥ (अ०मा०)

जखन आनक गुण-दोष आन प्राप्त करैछ तऽ उल्लास अलङ्कार कहबैछ; यथा— गंगा कहैत छथि जे हमर तटपर संतक वास अछि, तेँ हम पवित्र भए गेलहुँ।

भेद :

एकर चारि भेद अछि—

1. गुणसँ गुणक प्राप्ति 2. दोषसँ दोषक प्राप्ति 3. गुणसँ दोषक प्राप्ति 4. दोषसँ गुणक प्राप्ति।

1. गुणसँ गुणक प्राप्ति

गंगा कहथि पवित्र हम लहि तट संतक वास। (अ० मा०)

गंगा कहैत छथि जे संत हमर तटपर वास करैत छथि, तेँ हम पवित्र छी।

एतय गुणसँ गुणक प्राप्ति अछि।

उदाहरण :

सीता मन सङ्कल्प लए बैसलि छलि मनमारि।
वरण करब रघुराजकेँ नहि तऽ रहब कुमारि॥ (लेखक)

एतय रघुराजकेँ वरण करब वा कुमारि रहबमे विकल्प अछि।

62—समुच्चय

समुच्चय ओ अलङ्कार थिक जाहिमे एक साधक रहितहु साधकारन्तरक कथन कयल जाइछ।

समुच्चयक अर्थ होइछ समूह। जखन एक साधक रहितहु दोसरक चर्चा कयल जाइछ तऽ समुच्चय अलङ्कार होइछ। ई विकल्पक प्रतिपक्षी अलङ्कार थिक। एहिमे एक कार्यक सि□क हेतु अनेक कारणक विन्यास कयल जाइछ, एक संग अनेक भावक उदय होइछ आओर कइएक कारणसँ कार्यक सि□ होइछ।

लक्षण :

1. **समुच्चयोऽयमेकस्मिन् सति कार्यस्य साधके।**
खलेकपोतिकान्यायात् तत्करःस्यात् परोऽपिचेत्।
गुणौ क्रिये वा युगपद् यद् वा स्यातां 'गुणक्रिये'॥ (सा०द०)

जतय खले कपोतिकान्यायसँ एक साधकक स्थानपर साधकक समूह जुटि जाइछ ओतय समुच्चय अलङ्कार होइछ; यथा— विरहिणी नायिका सुतैत छली, उठैत छली, बैसैत छली, चलैत छली एवं कुहरैत छली।

एतय अनेक क्रियाक एकहि स्थानमे वर्णन भेलासँ समुच्चयालङ्कार भेल।

भेद :

एकर प्रथमतः दू भेद अछि आ पुनः दुनूक तीन-तीन भेद।

1. प्रथम समुच्चय

जखन एक कार्यक सि□क हेतु एक साधनक रहितहु अनेक साधनक वर्णन होअए ओतय प्रथम समुच्चय होइछ।

एकर पुनः तीन विभेद कयल गेल अछि—

(क) सद्योग प्रथम समुच्चय

जतय सभटा उत्तमे साधनक वर्णन होइछ; यथा—

सुन्दरि ! सम्बरु कुटिल कटाक्ष।
कलसिक मीन वडिस किय जडसी ई अति कठिन विपाक॥
पुन दय झाँप पड़ल जब आकुल नाभि सरोवर माँह।
ताहि रोमावलि-भुजगि संग भय त्रिवलि वेणि अवगाह॥
ताहि फिरत कत कतहु मनोरथ दैवक गति नहि जान।
किंकिणि जाल पड़ल भेल संशय गोविन्द दास रस गान॥ (गोविन्द दास)

श्री कृष्ण राधासँ कहैत छथि— हे राधे ! कामदेव रूप नक्रक भयसँ हमर मोन रूप मत्स्य काँपि गेल, तेँ प्राणरक्षाक हेतु अहाँक हृदयस्थित मुक्तामाला रूप सरिताक तटमे स्थित अहाँक कुच युग कलशमे उछलि पड़ल तथा अपनाकेँ मगर (नक्र)सँ नुकओलक । किन्तु ओतहु अहाँ अपन कुटिल कटाक्ष रूप वंशी (वडिश)सँ ओकरा बझाबय चाहैत छिऐक । अतः कुटिल कटाक्षक सम्बरण करू । अहाँक कुटिल कटाक्षक भयसँ ओतहुसँ भागल । डेराकय अहाँक नाभिरूप सरोवरक गहीँर जलमे अपनाकेँ नुकओलक मुदा ओतहु अहाँक रोमावलि रूप सर्पिणीक भय छलैक तेँ अहाँक त्रिवलीमे अर्थात् जलक धारमे नुकायल । किन्तु ओतहु त्राण कहाँ ? ओतहु अहाँक किंकिणीरूप जालमे फँसबाक डर !

एतय कुटिल कटाक्ष मात्रे कामोद्वेग बढ़यबाले' पर्याप्त अछि किन्तु एतेक साधन नाभि, सरोवर, त्रिवली धारा आ गोटक युक्त जालक वर्णनसँ समुच्चयक प्रथम भेद भेल। एहिमे सभटा उत्तमे साधनक वर्णन अछि तेँ सद्योग प्रथम समुच्चय भेल ।

(ख) असद्योग प्रथम समुच्चय

जतय सभटा अधलाहे साधनक वर्णन होअए; यथा—

(अ) आकुल चिकुर चूड़ शिखि चन्द्रक भालहि सिंदुर दहना
चन्दन-चन्द महँ लागल मृगमद ताहि बेकत तिनि नयना ।
माधव अब तोहेँ शंकर देवा । (गोविन्द दास)

श्री कृष्ण राधाकेँ मिलनक समय दय नहि अबैत छथि । ओ राति भरि कोनो अन्य नायिकाक संग रमण कय भोरमे अबैत छथि जकर कतोक प्रमाण हुनक शरीरमे अछि, तेँ श्री कृष्णक प्रति नायिकाक व्यंग्य अछि जे— हे माधव ! आब अहाँ शंकरजी भए गेलहुँ, कारण जे केश छिड़ियाएल अछि (अन्य नायिकाक संग सम्भोगक चिह्न) जे शिवहुकेँ छनि, माथपर शिवकेँ सर्प छनि तऽ अहूँकेँ मयूरक पाँखिमे सर्प उपस्थिते अछि । महादेवकेँ तेसर आँखि छनि जे लोककेँ जरबैत छैक तऽ अहूँकेँ सिंदूरक ठोप (नायिकाक माथसँ लागल) त्रिनेत्र थिक, जे हमरा जरा रहल अछि । महादेवकेँ भालपर चन्द्र छथिन, तऽ अहूँकेँ चन्दन बिंदु लगले अछि (अन्य नायिकाक ललाट स्थित मृगमदस्फोटाङ्कन) । अतः अहाँ आ शंकरमे कोनो भेद नहि ।

एतय नायिकाक औदास्यक साधक— जे भालपर सिंदूरक ठोप अछि— पर्याप्त अछि, किन्तु अनेक साधकक वर्णनसँ प्रथम समुच्चय भेल । जेँकि एतय सभटा अनुत्तमे साधकक वर्णन अछि तेँ असद्योग भेल ।

(आ) एक तँ राति निविड़तम
दोसर विपिन घन-घोर ।
कहु तरुवर ! मोर जीवन पहु
विलमल कोनि ओर ॥ (जीवन झा)

एतय निविड़तम रातिये नायिकाकेँ अधीर करबाले' पर्याप्त अछि किन्तु अन्य साधकक वर्णन तेँ समुच्चय ।

विशेषक सामान्यसँ समर्थन कय यदि पुनः विशेषसँ समर्थन कयल जाय तऽ विकस्वर अलङ्कार होइछ ।

उदाहरण :

धातु रतन कत भरल यदि हिम न गिरीश कलङ्क ।
गुनगन विच त्रुटि कत किछु न जनु शशि श्यामल अङ्क ॥ (अ०मा०)

एतय विशेष कथन अछि— धातु-रत्नसँ पूर्ण हिमालयक हेतु बर्फ कलङ्क नहि थिक, जकर समर्थन सामान्य कथनक द्वारा कयल गेल अछि जे बहुत गुणक बीच एकटा दोष झँपि जाइत छैक । पुनः एकर समर्थन विशेष कथन द्वारा कयल गेल अछि, यथा चन्द्रमाक किरणमे कलङ्क झपि जाइछ ।

69—प्रौढ़ोक्ति

उत्कर्षक कारण नहियो रहलासँ यदि उत्कर्षक कारण कहल जाय तऽ प्रौढ़ोक्ति अलङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारमे उत्कर्षक कारणकेँ बढ़ा-चढ़ा कय कहल जाइत छैक, अयोग्यहु वस्तुकेँ योग्य सि□ कयल जाइछ ।

लक्षण :

उत्कर्षक कारण न पुनि 'प्रौढ़-उक्ति' करु सि□ ।
यमुना जल कज्जल कलित वेणी धनिक प्रसि□ ॥ (अ०मा०)

यदि उत्कर्षक कारण नहि रहय तथापि कहिऐक तऽ प्रैढ़ोक्ति होइछ; यथा— यमुनाजलसँ कारी कयल गेल नायिकाक केश प्रसि□ अछि ।

एतय केशक प्रसि□क हेतु अहेतुएकेँ हेतु मानि लेल गेल ।

उदाहरण :

1. **मेहदी रंजित उभय अधर हासक सहचारी ।**
काजर घोरि छिटल सबतहुँ रातुक अँधियारी ॥ (लेखक)

श्रेष्ठ युवती लोकनिक ओष्ठ सहजहिँ लाल होइत छनि किन्तु ओकरा मेहदीसँ रङल कहल गेल अछि, तहिना रातुक अन्हार सहजहि भयानक होइछ किन्तु, काजर घोरि कय छिटल अछि— कहि एकर उत्कर्ष देखाओल गेल अछि, यद्यपि ई उत्कर्ष कारण नहि थिक ।

70—ललित

जतय वर्णनीय वस्तुक वर्णन नहि कय ओकर प्रतिबिम्बक वर्णन कयल जाय ओतय ललित अलङ्कार होइछ ।

ललितक अर्थ होइछ सुन्दर । एहि अलंङ्कारमे गोपन भाव रहैछ जकरा वक्ता लोकक समक्षमे प्रकट नहि करैछ । एहिमे प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत विषयक वर्णन नहि कय ओकर

कालकेतु काम वासनासँ पीड़ित भए एकावलीकेँ अनुकूल होयबाक निर्देश सुनाय देलक— विशेष वाक्य भेल, जकरा सामान्य वाक्य— औत्सुक्य कनियो विलम्ब नहि सहि सकैत अछि— द्वारा समर्थन कयल गेल अछि ।

एतय निषेधात्मक वाक्यसँ समर्थन भेल अछि; अतः चतुर्थ अर्थान्तरन्यास भेल ।

काव्यलिङ्ग एवं अर्थान्तरन्यास

यद्यपि दुनूमे समर्थ्य-समर्थकक भाव रहैत अछि, अर्थात् एक वाक्यार्थक दोसर वाक्यार्थक द्वारा पुष्टि होइत छैक, किन्तु काव्यलिङ्गमे कोनो तथ्यक समर्थन कारणसँ होइत अछि जखनकि अर्थान्तरन्यासमे सामान्यक विशेष द्वारा एवं विशेषक सामान्य द्वारा । एतदतिरिक्त काव्यलिङ्गमे दुनू वाक्यार्थ प्रस्तुतपरक होइछ, किन्तु एहिमे एक प्रस्तुत एवं दोसर अप्रस्तुत ।

अप्रस्तुतप्रशंसा एवं अर्थान्तरन्यास

अर्थान्तरन्यासमे प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत दुनूक शब्दतः वर्णन रहैत अछि, किन्तु अप्रस्तुतप्रशंसामे एक पदार्थक वर्णन रहैछ आ दोसर व्यंग्य । एहिमे सामान्यसँ विशेषक एवं विशेषसँ सामान्यक समर्थन कयल जाइछ, किन्तु अप्रस्तुतप्रशंसामे अप्रस्तुत सामान्यक वर्णनसँ प्रस्तुत विशेषक तथा अप्रस्तुत विशेषक वर्णनसँ प्रस्तुत सामान्यक कथन होइछ ।

दृष्टान्त एवं अर्थान्तरन्यास

दुनूमे दू वाक्यक योजना होइछ । दृष्टान्तमे दुनू वाक्यमे बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव रहैछ, जखनकि अर्थान्तरन्यासमे समर्थ्य-समर्थकक भाव । दृष्टान्तमे उपमानोपमेय भाव एवं अर्थान्तरन्यासमे सामान्य-विशेष भाव होइत अछि ।

प्रतिवस्तूपमा एवं अर्थान्तरन्यास

दुनूमे दू वाक्यक योजना होइछ । प्रतिवस्तूपमामे दुनू वाक्यमे उपमानोपमेय भाव रहैछ आ अर्थान्तरन्यासमे समर्थ्य-समर्थकक भाव । प्रतिवस्तूपमामे दू वाक्यमे सादृश्य देखाओल जाइछ किन्तु अर्थान्तरन्यासमे एक वाक्य दोसरक समर्थनक हेतु प्रयुक्त होइछ । ई विशेषसँ सामान्य वा सामान्यसँ विशेष वाक्यकेँ समर्थन करैछ ।

68—विकस्वर

जतय विशेषक सामान्यसँ समर्थन कय पुनः ओकरा विशेष द्वारा समर्थन कयल जाय ओतय विकस्वर अलङ्कार होइछ ।

एहिमे कविकेँ विशेष कथनक सामान्यसँ समर्थन कयलापर संतोष नहि होइत छनि तऽ पुनः विशेष द्वारा ओकर समर्थन करैत छथि । एहिमे तेसर वाक्य सतत विशेष होइछ ।

लक्षण :

कय विशेषकेँ समर्थन सामान्यक उपचार ।
पुनि विशेष उपमान जनु 'विकस्वर'क आधार ॥ (अ०मा०)

पुनः निविड़तम राति, घोर विपिन एवं जीवन पहुक विलमब असद्योग थिक ।

(ग) ससद्योग प्रथम समुच्चय

जतय उत्तम एवं अनुत्तम दुनू प्रकारक साधनक वर्णन हो; यथा—

एक तऽ ग्रहकेर वाम, दोसर रोगाक्लान्त ।
तेसर मोन व्यथित छल, देखि हुनक दुति कान्त ॥ (लेखक)

एतय ग्रहक फेरी, रोगाक्लान्त होयब, असद्योग एवं हुनक रूप लावण्यसँ व्यथित मोनमे सद्योग । तेँ ससद्योग भेल ।

2. द्वितीय समुच्चय

जतय अनेक गुण वा क्रिया एक संग वर्णित रहय । एकरहु तीन भेद होइछ— (क) गुण समुच्चय (ख) क्रिया समुच्चय (ग) गुणक्रिया समुच्चय ।

(क) गुण समुच्चय

एकहि संग जतय अनेक गुणक वर्णन होअए; यथा—

एक वृ□ता दोसर तनुज वियोग ।
तेसर छल जे शासन आधिक योग ॥ (एकावली-परिणय)

एतय अनेक गुणक एकहि संग कथन भेल अछि । भूपतिक विचित्र दशा देखयबाले' एकटा वृ□ता मात्र पर्याप्त अछि किन्तु अनेक गुणक वर्णनमे समुच्चय अलङ्कार भेल ।

(ख). क्रिया समुच्चय

एकहि संग जखन अनेक क्रियाक वर्णन होइछ; यथा—

सुतथि उठथि बैसथि चलथि कुहरथि विरहिन वाम । (अ० मा०)

विरहिणी नायिका सुतैत छली, उठैत छली, बैसैत छली, चलैत छली एवं कुहरैत छली ।

एतय अनेक क्रियाक कारण क्रिया समुच्चय भेल ।

(ग) गुणक्रिया समुच्चय

जतय गुण एवं क्रिया दुनूक समुच्चय होअए; यथा—

कुसुमाकर निर्माए धनुष शर सुहृद् हाथमे छोड़ल ।
मन्मथ-मथित-चित्त पथिक ब्रज जीवन-आशा तोड़ल ॥ (एकावली-परिणय)

एतय फूलक समूह आ ताहिसँ बनल धनुषसँ सुहृद्जनकेँ मारबामे क्रिया एवं मन्मथ-मथित-चित्तमे गुणक समुच्चय अछि, तेँ एकरा गुणक्रिया समुच्चय कहब ।

द्वितीय समुच्चय एवं कारक दीपक

समुच्चयक जड़िमे अतिशयोक्ति रहैछ, किन्तु कारक दीपकक जड़िमे अतिशयोक्ति नहि रहैछ । दुनूमे अनेक क्रियाक एकहि संग वर्णन होइछ, किन्तु समुच्चयालङ्कारमे सभ क्रियाक एकहि बेर वर्णन होइछ, जखन कि कारक दीपकमे क्रमशः ।

63—समाधि

समाधि अलङ्कारमे साधनान्तरक आकस्मिक संयोगसँ कोनो कार्य सहजतासँ सि□ भए जयबाक वर्णन रहैछ ।

एहि अलङ्कारमे कारणान्तरसँ अनायासे कार्यक सि□ भए जाइत छैक । ई वाक्य न्यायमूलक अलङ्कार थिक जाहिमे कारण अनायासे उपस्थित भए जाइत छैक । समाधिक अर्थ होइछ नीक जेकाँ कार्यक सम्पादन होयब—

सम्यक् आधिः आधानाम् उत्पादनं समाधिः । (बा०बो० पृ० 716)

सम्यक् आधिः समाधिः । (गोविन्द ठक्कुर, प्रदीप पृ०सं० 554)

एहि अलंकारमे स्वभावतः जे कार्य सि□ होइत रहैत अछि ताहिमे अकस्मात् अन्य कारणक उपस्थितिसँ सरलतापूर्वक कार्यक सम्पादन भए जाइछ ।

लक्षण :

1. **समाधिः सुकरं कार्यं कारणान्तर योगतः ।** (का०प्र०)

समाधि ओ अलङ्कार थिक जाहिमे कारणान्तरक योगसँ कार्यक सम्पादनमे सुगमता आबि जाय ।

2. **समाधिः सुकरे कार्यं दैवाद्वस्त्वन्तरासगमात्** (सा०द०)

समाधि ओ अलङ्कार थिक जाहिमे अकस्मात् कोनो कारणेँ अभीष्ट सि□ भए जाय।

3. **आन कारणहु कार्य हो सुकर 'समाधि'क लच्छ ।**
मानिनि पद नत भेलहुँ जा घनधुनि ता परतच्छ ॥ (अ०मा०)

यदि आनहु कारणेँ अभीष्ट सि□ भए जाय तऽ समाधि अलङ्कार होइछ; यथा—यावत मानिनीक पदपर नत भेलहुँ तावत मेघक गर्जन सेहो सुनाइ पड़ल । तात्पर्य ई जे पावसक समयमे नायिकाक मान स्वभावतः नष्ट भए जाइत छनि ।

उदाहरण :

सुमिरि मझु तनु अवस भेल जनि
अथिर थर-थर काँप ।
ई मझु गुरुजन नयन दारुण
घोर तिमिरहि झाँप ॥ (विद्यापति)

नायिका गुरुजनक दारुण नयनसँ डेराइत छथि किन्तु अनायासे घोर तिमिर हुनक आँखिकेँ झाँपि देलक ।

एतय अनायासे घोर तिमिरक झपबामे समाधि होयत ।

64—प्रत्यनीक

शत्रुक तिरस्कार करबामे असमर्थ रहलाक कारण यदि ओकर सम्बन्धीक तिरस्कार कय दी तऽ प्रत्यनीक अलङ्कार होइछ ।

भेद :

एकर मुख्य चारि भेद होइछ—

1. प्रथम अर्थान्तरन्यास

एहिमे सामान्य वाक्यक विशेष वाक्यसँ साधर्म्य द्वारा समर्थन होइछ—

नहि रोकल गुरुजन भए विरु□,
भवितव्यक गति की कतहु रु□ ?
विधि इच्छहि जीवक चित्तवृत्ति,
पावए प्रवृत्ति अथवा निवृत्ति ॥ (एकावली-परिणय)

एतय—'भवितव्यक गति की कतहु रु□' सामान्य वाक्य थिक जकर समर्थन विशेष वाक्य— ब्रह्मेक इच्छासँ जीवक चित्तवृत्ति प्रवृत्ति वा निवृत्ति पबैत अछि— द्वारा कयल गेल अछि । दुनूक समान धर्म एके थिक— भवितव्य होयबे टा करत ।

2. द्वितीय अर्थान्तरन्यास

एहिमे सामान्यक विशेषसँ वैधर्म्य द्वारा समर्थन होइछ; यथा—

विपत् कालमे बु□ न ककरो रहइछ निश्चल ।
फक-फक कय दीपो मिझाय यदि वात वेग चल ॥ (लेखक)

एतय पूर्व वाक्य सामान्यपरक थिक जे निषेधात्मक अछि आ दोसर विशेषपरक । प्रथम वाक्यक दोसर वाक्य द्वारा समर्थन भेल अछि तेँ द्वितीय अर्थान्तरन्यास भेल ।

3. तृतीय अर्थान्तरन्यास

एहिमे विशेषक सामान्यसँ साधर्म्य द्वारा समर्थन होइछ; यथा—

से सुनितहि उपजल हृदय-कम्प,
तेँ विकल बाल लए चलल चम्प ।
राखल ओही थल त्वरित जाए,
भय योगहि लोलुपता पड़ाए ॥ (एकावली-परिणय)

एतय चम्प अनिष्टक डरेँ ओहि बालक (एकवीर)केँ शीघ्रहि ओही स्थलपर राखि देलक— विशेष वाक्य थिक, जकर समर्थन सामान्य वाक्य—भयक डरसँ लोभ भागि जाइछ—सँ कयल गेल अछि । दुनूक सामान्य धर्म एके थिक डरायब ।

4. चतुर्थ अर्थान्तरन्यास

एहिमे विशेषक सामान्यसँ वैधर्म्य द्वारा समर्थन होइछ; यथा—

देवारि मदन-शर-दलित चित्त,
एकावलि अनुकूलन-निमित्त ।
सत्वर सुनाए देलक निदेश,
औत्सुक्य सहय न विलम्ब-लेश ॥ (एकावली-परिणय)

एकावलीक उत्तरपर कालकेतु मौन भए गेल जकर कारण वर्णित अछि जे बालाक बलात्कारो निषि□ थीक। अत: प्रथम काव्यलिङ्ग भेल।

2. पदार्थगत काव्यलिङ्ग

जतय एकहि पदक अर्थमे कारण कहल जाइछ; यथा—

सहजहिँ गौरि रोष तिनि-लोचनि केसरि जिनि माँझ खिनी।
हृदय-पषाण वचन अनुमानिय शैल सुता कर चिन्ही॥ (विद्यापति)

क्रोधमे लोक तृतीये दृष्टिसँ विचार करैछ। एहि परम्परागत लोकोक्तिसि□ रोष-रूप हेतुसँ नायिकाक त्रिनेत्रत्वक काव्यात्मक उपपादन— कारण काव्यलिङ्ग भेल।

जेँकि कारण मात्र एक पदमे निहित अछि, अत: पदार्थगत काव्यलिंग भेल।

काव्यलिङ्ग एवं परिकर

परिकर अलङ्कारमे पहिने पदार्थ वा वाक्यार्थक ज्ञान होइछ आ तखन वाच्यसँ पदार्थ एवं वाक्यार्थसँ व्यंग्यार्थक ज्ञान; किन्तु काव्यलिङ्गमे पदार्थ एवं वाक्यार्थ समर्थनीय वाक्यक कारणरूपमे उपस्थित रहैत अछि।

67—अर्थान्तरन्यास

जतय सामान्यक विशेषसँ एवं विशेषक सामान्यसँ समर्थन कयल जाय ओतय अर्थान्तरन्यास होइछ।

एहिमे दू टा वाक्य होइत अछि— सामान्य परक एवं विशेष परक। दुनूमे समर्थ्य-समर्थकक भाव रहैत अछि। कतहु जँ सामान्यसँ विशेषक समर्थन होइत अछि तऽ कतहु विशेष द्वारा सामान्यक समर्थन सेहो। ई गम्यौपम्यसादृश्यमूलक अलङ्कार थिक। ई कवि कल्पनापर आश्रित नहि रहि कविक अनुभव जन्य लोकज्ञान एवं जीवनानुशीलन पर स्थिर रहैछ। सामान्य एवं विशेष वाक्य परस्पर निरपेक्ष रहैत अछि, किन्तु एक दोसराक पुष्टि कय ओहिमे समानता स्थापित कयल जाइछ।

लक्षण :

1. **सामान्यं वा विशेषो वा तदन्येन समर्थ्यते।**
   यत्तुसोऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येणेतरेण वा॥ (का० प्र०)

जतय साधर्म्य वा वैधर्म्यसँ सामान्यक विशेषसँ एवं विशेषक सामान्यसँ समर्थन कयल जाय ओतय अर्थान्तरन्यास अलङ्कार होइछ।

2. **भाव समर्थ्य-समर्थकक एक-दोसरक विन्यास।**
   यदि सामान्य विशेषगत हो 'अर्थान्तरन्यास'॥ (अ०मा०)

यदि सामान्य एवं विशेष वाक्यमे समर्थ्य-समर्थकक भाव रहय तऽ अर्थान्तरन्यास होइछ।

यदि शत्रु बलगर रहय आ ओकर तिरस्कार नहि कयल होअए तऽ ओकर सम्बन्धीक अनिष्ट कयलासँ समाधि अलङ्कार होइछ। एहिमे तिरस्कारक वास्तविक वर्णन नहि भए कविकल्पित होइछ। एहिमे दू परस्पर विरोधी पदार्थ वा वस्तुक वर्णन होइछ जाहिमे एक सबल पदार्थ आ दोसर निर्बल रहैछ। सबल पदार्थ निर्बलक तिरस्कार कय दैत अछि किन्तु निर्बलकेँ ओकर तिरस्कार नहि कयल होइत छैक तेँ ओ ओकर सम्बन्धीक तिरस्कार कय दैत छैक।

लक्षण :

प्रत्यनीक जे अबल हठि प्रबलक पक्ष दुरैछ।
श्याम-रूप जित काम हत श्यामा हृदय हनैछ॥ (अ०मा०)

प्रत्यनीक ओ अलङ्कार थिक जाहिमे दुर्बल सबलक सम्बन्धीक तिरस्कार करैत अछि; यथा— कामदेव जखन श्रीकृष्णक किछु नहि बिगाड़ि सकलाह तऽ राधाकेँ पीड़ा दियऽ लगलथिन।

भेद :

प्रत्यनीकमे शत्रुक सम्बन्धी दू प्रकारक होइछ— 1. साक्षात् सम्बन्धसँ 2. परम्परागत सम्बन्धसँ।

1. साक्षात् सम्बन्धसँ

जखन शत्रुक संग साक्षात् सम्बन्ध रखनिहारक तिरस्कार कयल जाइछ; यथा—

सूर्पनखा केर नाकक बदला,
राघवसँ ने चुका सकला।
तेँ छलसँ, बलसँ, कौतुकसँ,
साध्वी सीताकेँ हरि भगला॥ (लेखक)

एतय रामसँ साक्षात् सम्बन्ध रखनिहारि सीताक अपकार करबामे प्रथम प्रत्यनीक भेल।

2. परम्परागत सम्बन्धसँ

जखन शत्रुक सम्बन्धीक संग सम्बन्ध रखनिहारक तिरस्कार कयल जाइछ तऽ द्वितीय प्रत्यनीक होइछ; यथा—

कमलवदनि! पाओल नहि, शशि अहाँक दुतिकान्त।
तेँ रोषानल दग्ध भए, करथि कमलकेँ क्लान्त॥ (लेखक)

एतय चन्द्र नायिकाकेँ कष्ट देबामे असमर्थ छथि, तेँ हुनकासँ परम्परागत सम्बन्ध रखनिहार कमलकेँ कष्ट दैत छथि।

65—अर्थापत्ति

एक प्रधान अर्थक सि□सँ दोसर अप्रधान अर्थक सि□ भेलासँ अर्थापत्ति अलङ्कार होइछ।

एहिमे अर्थक आक्षेप आबि जाइत अछि अर्थात् उक्तक आधारपर अनुक्तक अनायासे कल्पना भए जाइछ । एहिमे दण्डापूपिकान्यायसँ अर्थ ग्रहण कयल जाइछ । दण्डापूपिका न्यायक अर्थ भेल जे दण्डामे खोसल मालपूआ मूस खा गेल आ पुछलापर ई कहल गेल जे मूस दंडा खा गेल । सहजहि स्पष्ट अछि जे दंडा खयनिहार मूस मालपूआ थोड़बे छोड़ने होयत, कारण जे दंडासँ मालपूआ खायब सुलभ बात छैक । एहिमे दुष्कर कार्यक सि□ देखाय ई स्पष्ट कयल जाइछ जे सहज कार्य स्वयंसि□ अछि ।

लक्षण :

1. **दण्डापूपिकयाऽन्यार्थागमोऽर्थाऽपत्ति रुच्यते ।** (सा०द०)

दण्डापूपिकान्यायसँ अन्य अर्थक सि□ भेलासँ अर्थापत्ति अलङ्कार होइछ ।

2. **दण्ड-पूप न्याये बुझिअ 'अर्थापत्ति' प्रसि□ ।**
स्व-उर बेधि बढ़ उरज जे पर-उर बेधब सि□ ॥ (अ०मा०)

दण्डापूपन्यायसँ अर्थापत्ति प्रसि□ अछि; यथा— स्तन अपन हृदय बेधि कय अनेको हृदय बेधैत अछि ।

एतय जाहि स्तनकेँ अपन हृदय बेधबामे नहि ममता भेलैक ओकरा आनक हृदय बेधबामे कते देरी लगतैक ? एहि स्वहृदय बेधन सन कठिन कार्यक सि□सँ आनक हृदय बेध न रूप सरल कार्य स्वयंसि□ अछि ।

भेद :

एकर दू भेद अछि—

1. प्रथम अर्थापत्ति 2. द्वितीय अर्थापत्ति ।

1. प्रथम अर्थापत्ति

जतय पैघक अपमान वा पराभवसँ छोटक अपमान वा पराभवक अनायास सि□ भए जाइछ; यथा—

सर्वसहाक उर उठल कम्प,
अहिपति शिर सिरजल महीझम्प ।
कालहुक नयनसँ बहल पानि,
के सकय दशा आनक बखानि ? (एकावली-परिणय)

एकावलीक अपहरणसँ पृथ्वीक हृदयमे कम्प उठि गेल, शेषनागक माथपर पृथ्वी कापय लगली, कालहुक आँखिसँ पानि बहय लागल तऽ आनक कथे कोन ?

एतय उत्कृष्टक अपकर्ष वर्णनसँ निकृष्टक अपकर्ष वर्णित अछि ।

2. द्वितीय अर्थापत्ति

जतय छोटक सम्मान वा उत्कर्षसँ पैघक सम्मान वा उत्कर्ष अनायास सि□ होइछ; यथा—

पाबए जतए अचेतनो तरु अरु लता विकास ।
रसिक तरुण नृपदम्पतिक उचिते ततय विलास ॥ (एकावली-परिणय)

वसन्त □तुमे अचेतनो लता विकसित भए जाइछ तऽ तरुण रसिक एकवीर पत्नीक संग किऐक ने विलसित होयताह ?

एतय छोटक उत्कर्षसँ पैघक उत्कर्ष वर्णित अछि ।

66—काव्यलिंग

जतय वाक्यार्थ वा पदार्थ कोनहु कथनक कारण होअए ओतय काव्यलिंग अलङ्कार होइछ ।

एकरा वाक्यन्यायमूलक अलङ्कार मानल जाइत अछि जाहिमे कवि अपन कथनक पुष्टि हेतुरूप वाक्यक विन्यास द्वारा करैत छथि । लिंगक अर्थ होछ कारण । एहि अलंकारमे जे बात सि□ करबाक रहैत अछि ओकर कारण वाक्यक अर्थमे वा पदक अर्थमे दय देल जाइत अछि । एहि अलङ्कारमे कवि कल्पनाप्रसूत अर्थक सि□क हेतु कथन होइछ ।

लक्षण :

1. **समर्थनीयस्यार्थस्य काव्यलिङ्गं समर्थनम् ।**
जितोऽसि मन्द कन्दर्प मच्चितेऽस्ति त्रिलोचनः ॥ (कुव०)

जतय समर्थनीय अर्थक समर्थन कयल जाय ओतय काव्यलिंग अलङ्कार होइछ; यथा— हे मूढ़ कामेदव ! अहाँकेँ हम जीति लेलहुँ कारण हमर मोनमे त्रिलोचन छथि ।

2. **काव्यलिङ्गं हेतोर्वाक्य पदार्थगा ।** (का०प्र०)

काव्यालिंग ओ अलङ्कार थिक जाहिमे वाक्य वा पदार्थ ककरो हेतु वर्णित हो ।

3. **हेतोर्वाक्यपदार्थत्वे काव्यलिङ्गं निगद्यते ।** (सा०द०)

जतय पदार्थ वा वाक्यार्थ ककरो हेतु वर्णित होअए ओतय काव्यलिङ्ग अलङ्कार होइछ ।

4. **अर्थ समर्थन हेतु दय 'काव्यलिङ्ग' पद वाक्य ।**
चित राजित यदि त्रिलोचन मदनक जय न अशक्य ॥ (अ०मा०)

कोनो पद वा वाक्य, अर्थ समर्थनक कारण होअए तऽ काव्यलिंग अलङ्कार होइछ; यथा— मोनमे यदि त्रिलोचन छथि तँ कामदेवकेँ जीतब कठिन नहि ।

भेद :

एकर दू भेद अछि— 1. वाक्यार्थगत काव्यलिङ्ग 2. पदार्थगत काव्यलिङ्ग ।

1. वाक्यार्थगत काव्यलिङ्ग

ई सुनि प्रस्तावक अननुरूप
उत्तर असुराधिप भेल चूप ।
सोचल कालेँ हो की न सि□
बालाक बलात्कारो निषि□ ॥ (एकावली-परिणय)

क्रममे क्यो कहैत छथि जे कतबहु कहब तऽ अहाँकेँ कोनो असरि नहि होइत अछि, जेना ऊसर जमीनमे उपज नहि होइछ ।

उदाहरण :

1. हनुमानक लग क्यो नहि जाय ।
मारिक डरसँ भूत पड़ाय । (चन्दा झा)

एतय 'मारिक डरसँ भूत पड़ाय' प्रचलित लोकोक्ति थिक ।

2. कयल उपद्रव सभ जनक, देखता भलेँ जमाय ।
टेङरा पोठी चाल दै रहुक शिर विसाय ॥ (चन्दा झा)

एतय उत्तरा□मे प्रयुक्त कहबी सुप्रसि□ अछि ।

84—स्वभावोक्ति

जतय कोनो वस्तुक जाति, स्वभाव वा गुणक यथावत् चित्रण होअए, ओतय स्वभावोक्ति अलङ्कार होइछ । एहि अलंकारमे वस्तुक यथावत् रूपमे चित्रण कयल जाइछ । ई कविक सूक्ष्म पर्यवेक्षणशक्तिक परिचायक थिक ।

लक्षण :

1. स्वभावोक्तिस्तु डिम्भादेः स्वक्रियारूप वर्णनम् । (का०प्र०)

स्वभावोक्ति अलङ्कारमे बालक इत्यादिक स्वभावसि□ क्रिया एवं रूपक वर्णन होइछ ।

2. स्वभावोक्तिर्दुरुहार्थस्वक्रियारूपवर्णनम् ॥ (सा०द०)

स्वभावोक्ति ओ अलङ्कार थिक जाहिमे दुरूह पदार्थक स्वरूप वा क्रियाक वर्णन होइछ ।

3. जाति स्वभावक वर्णना 'स्वभावोक्ति' निक लाग ।
मल भोजन, कर्कश वचन, कारी काया काग ॥ (अ०मा०)

जाति स्वभावक वर्णनमे स्वभावोक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— कौआक शरीर कारी, वयन कर्कश एवं भोजन विष्ठा थिक ।

उदाहरण :

1. कए बेरि आगि हाथसँ छीनु ।
कए बेरि पकला तकला बीनु ॥
कए बेरि साप धरय पुनि जाथि ।
कए बेरि चून दधी बुझि खाथि ॥ (मनबोध)

एतय श्री कृष्णक बालरूपक वर्णनमे स्वभावोक्ति अलङ्कार अछि ।

2. कखनहुँ आबि कोरमे बैसथि
लटकि पीठ पर जाथि ।

कखनहुँ पुनि सस्नेह बजओनहुँ
हैहय दूर पड़ाथि ॥ (एकावली-परिणय)

85—भाविक

जतय भूत एवं भविष्यक वर्त्तमानहि जकाँ वर्णन हो, भाविक अलङ्कार कहबैछ।

भाविक ओ शब्द थिक जाहिमे भाव विद्यमान रहय। विविध भाव एवं रसक अनुभूति जाहि तरहेँ कविकेँ होइछ तत्समानहि यदि पाठकोकेँ होअए तऽ भाविक अलङ्कार होइछ। एहि अलङ्कारमे कवि द्वारा वर्णित भूत एवं भावी पदार्थक श्रोता प्रत्यक्षवत् अनुभव करैछ।

लक्षण :

1. **'भाविक' भूतहु-भाविहुक वर्णन जनु प्रत्यक्ष।**
भारत छोड़हु घोषणा बृटिशक गमन समक्ष ॥ (अ०मा०)

जखन भूत एवं भविष्य दुनूक प्रत्यक्षवत् वर्णन होइछ तऽ भाविक अलङ्कार होइछ; यथा— भारत छोड़बाक घोषणा एवं अंग्रेजक गमन बीतियो गेलापर प्रत्यक्ष बुझाइत अछि। हमरालोकनि आइयो पन्द्रह अगस्तकेँ झण्डा फहरबैत छी, जेना आइये स्वराज्य भेटल हो।

भेद :

एकर दू भेद अछि—

1. प्रथम भाविक 2. द्वितीय भाविक।

1. प्रथम भाविक

जतय भूतक वर्त्तमान जेकाँ वर्णन हो; यथा—

जनम अवधि हम रूप निहारल नयन न तिरपित भेल।
सेहो मधुर बोल श्रवणहि सूनल श्रुतिपथे परस न गेल।
कत मधु-यामिनि रभसे गमाओल, न बुझल कैसन केलि
लाख-लाख युग हिय-हिय राखल तैयो हिया जड़ल न गेलि। (विद्यापति)

एतय भूतकालक वर्णन अछि; किन्तु वर्त्तमानोमे नयन, कान ओ हृदयकेँ तृप्ति नहि भेटलैक अछि, अपितु आओरो नवीनता आबि जाइत छैक। अतः प्रथम भाविक भेल।

2. द्वितीय भाविक

जतय भविष्यक वर्त्तमान जेकाँ वर्णन होअए; यथा—

समुद ऐसन निसि न पारिअ ऊर।
कखन उगत मोर हित भए सूर ॥ (विद्यापति)

एतय नायिका रातिमे नायकक संग रति-क्रीड़ा करैत परेशान भए गेलीह अछि, आ तेँ राति हुनका समुद्र जेकाँ अथाह बुझाइत छनि। ओ अपन हितैषी सूर्योदयक प्रतीक्षा कय रहलि छथि।

अतः एतय द्वितीय भाविक भेल।

मैथिली

1.	विद्यापति पदावली	–	राष्ट्रभाषा परिषद्
2.	कृष्ण-जन्म	–	महाकवि मनबोध
3.	मिथिलाभाषा रामायण	–	कवीश्वर चन्दा झा
4.	एकावली-परिणय	–	कविशेखर बदरीनाथ झा
5.	राधा-विरह	–	कविचूड़ामणि 'मधुप'
6.	झाङ्कार	–	कविचूड़ामणि 'मधुप'
7.	अम्बचरित	–	पं सीताराम झा
8.	मैथिली काव्य-शास्त्र	–	डॉ० दिनेश कुमार झा
9.	बाजि उठल मुरली	–	कविवर उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन'
10.	मेरुप्रभा	–	प्रो० श्रीकृष्ण मिश्र
11.	चित्रा	–	वैद्यनाथ मिश्र 'यात्री'
12.	अलङ्कारदर्पण	–	पं सीताराम झा
13.	अलङ्कार-प्रवेश	–	प्रो० रमानाथ झा
14.	अलङ्कारसागर	–	पं दीनबन्धु झा
15.	अलङ्कार कमलाकर	–	पं दामोदर झा
16.	अलङ्कार-मालिका	–	प्रो० सुरेन्द्र झा 'सुमन'
17.	चन्द्राभरण	–	रामचन्द्र मिश्र

अधीत ग्रंथ

संस्कृत

1.	काव्यप्रकाश	–	मम्मट
2.	काव्यालङ्कार (हिन्दी अनुवाद)	–	चौखम्बा
3.	अलङ्कारसर्वस्व	–	रुय्यक
4.	चन्द्रालोक	–	जयदेव
5.	साहित्यदर्पण	–	विश्वनाथ
6.	काव्यालंकार सूत्रवृत्ति	–	वामन
7.	अलंकारकौस्तुभ	–	विश्वेश्वर पंडित
8.	कुवलयानन्द	–	अप्पय दीक्षित
9.	काव्यादर्श	–	दण्डी
10.	काव्यालंकार (हिन्दी अनुवाद)	–	डॉ० सत्यदेव चौधरी
11.	सरस्वतीकण्ठाभरण	–	भोजराज
12.	वाग्भटालंकार	–	वाग्भट
13.	अलङ्कार-प्रदीप	–	विश्वेश्वर पंडित
14.	काव्यमीमांसा	–	राजशेखर
15.	वक्रोक्तिकाव्यजीवितम्	–	कुन्तक

हिन्दी

1.	अलङ्कारमीमांसा	–	डॉ० राजवंश सहाय 'हीरा'
2.	अलङ्कार-मीमांसा	–	डॉ० रामचन्द्र द्विवेदी
3.	भारतीय काव्यशास्त्र और काव्यालङ्कार	–	डॉ० भोलाशंकर व्यास
4.	काव्यात्म-मीमांसा	–	डॉ० जयमन्त मिश्र
5.	संक्षिप्त अलङ्कारम□जरी	–	सेठ कन्हैया लाल पोद्दार
6.	साहित्यालोचन	–	डॉ० श्याम सुन्दर दास
7.	ध्वनि सम्प्रदाय और उसके सि□ान्त	–	डॉ० भोलाशंकर व्यास
8.	भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका, भाग- 1		
9.	वाङ्मयविमर्श	–	आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
10.	सि□ान्त और अध्ययन	–	डॉ० गुलाब राय

86—उदात्त

जतय कोनो वस्तु, व्यक्ति वा स्थानक महत्त्वक वर्णन हो ओतय उदात्त अलङ्कार होइछ।

उदात्तक अर्थ होइछ— औदार्य एवं ऐश्वर्य। एहि अलङ्कारमे कोनो वस्तुक समृ□क वर्णन होइछ, जाहिसँ ओकर महत्त्व प्रतिपादित होअए। एहिमे मात्र नीके पदार्थक वर्णन होइछ, अधलाहक नहि। एकर विषय थिक सम्पत्ति, शौर्य, विभूति, औदार्य, नगर, राजप्रासाद आदि। ई गूढ़ार्थ प्रतीतिमूलक अलंकार थिक। एहिमे ऐतिहासिक तथ्यक अभावमे अतिशयोक्ति बीज रूपमे वर्त्तमान रहैत अछि।

लक्षण :

1. **(क) उदात्तं वस्तुनः सम्पत्।** (का०प्र०)

जतय वस्तुक समृ□क वर्णन होअए ओतय उदात्त अलङ्कार होइछ।

(ख) महतां चोपलक्षणम्। (का०प्र०)

जतय वर्ण्य वस्तुक प्रसङ्गमे महान् व्यक्तिक वर्णन होअए, ओतय उदात्त अलङ्कार होइछ।

2. **लोकातिशयसम्पत्तिवर्णनोदात्तमुच्यते ।**
यद्वापि प्रस्तुतस्याङ्गं महतां चरितं भवेत् ॥ (सा०द०)

जतय लोकोत्तर सम्पत्तिक वर्णन होअए वा प्रस्तुत वर्ण्य वस्तुक अंगरूपमे महान् व्यक्तिक चरित्रक वर्णन होअए, ओतय उदात्त अलङ्कार होइछ।

3. **कथा समृ□ प्रसंग गत वर्णन चरित उदात्त ।**
स्वर्ण शैल ई जत अमर बिहरथि साँझ परात ॥ (अ०मा०)

जतय समृ□ अथवा अन्य वस्तुक अङ्गरूपमे श्लाघ्य चरितक वर्णन होअए ओतय उदात्त अलङ्कार होइछ; यथा— ई सोनाक पहाड़ ओएह थिक जतय देवतालोकनि साँझ-परात विचरण करैत छथि।

भेद :

उदात्तक दू भेद अछि— 1. प्रथम उदात्त 2. द्वितीय उदात्त।

1. प्रथम उदात्त

जतय सम्पत्तिक समृ□क वर्णन होअए; यथा—

गिरि त्रिकूट ऊपर छल लङ्का स्वर्णक द्विव्य अटारी ।
छल कुवेर-भण्डार तुच्छ लखि विसकर्माक कलाकारी ॥ (लेखक)

एतय लङ्काक सोनक अटारीक समक्ष कुवेरक भण्डारोकेँ तुच्छ मानि लेल गेल अछि।

एतय समृ□क वर्णन भेल अछि, तेँ प्रथम उदात्त थिक।

2. द्वितीय उदात्त

जतय महान् व्यक्तिक चरित्रक विलक्षणता देखाओल जाइछ; यथा—

छल जतय निवास अयाचिक
बिनु मङने जीवन बीतल ।
ओ मिथिला धन्य किऐ नहि ?
जे एहन सपूत बनौलक ॥ (लेखक)

एतय महान् चरित्रक विलक्षणता देखाओल गेल अछि ।

87—निरुक्ति

योगवश कोनो नामक चमत्कारपूर्ण कल्पनामे निरुक्ति अलङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारमे शब्दक वास्तविक अर्थकेँ छोड़ि कय अन्य काल्पनिक अर्थक स्थापना कयल जाइछ, जे चमत्कारपूर्ण होइछ ।

लक्षण :

नामयोगसँ कल्पना अर्थान्तरक 'निरुक्ति' ।
जुझथि न यो□ा 'अयोध्या' वध न 'अवध'तेँ उक्ति ॥ (अ०मा०)

नामयोगसँ चमत्कारपूर्ण अर्थक कल्पनामे निरुक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— यो□ा आपसमे लड़ाइ नहि करैत छथि, तेँ 'अयोध्या' एवं बध नहि होयबाक कारण 'अवध' नाम थिक ।

उदाहरण :

करथि सकल कल्याण विश्वकेर विश्वामित्रहि नाम ।
परशु धारणहि लोक बुझै अछि परशुराम अभिराम ॥ (लेखक)

सतत विश्वक कल्याण करबाक कारण विश्वामित्र कहौलनि । परशु धारण कयनहि परशुराम नाम पड़ल । अतः एतय निरुक्ति अलङ्कार भेल ।

88—अत्युक्ति

जतय कोनो वस्तुक अत्यन्त बढ़ा-चढ़ा कय वर्णन कयल जाय ओतय अत्युक्ति अलङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारक अन्तर्गत दानशीलता, वीरता आदिक अत्यन्त बढ़ा-चढ़ाकय कथन कयल जाइत अछि । ई अतिशयोक्तियोक अतिशयोक्ति थिक । तात्पर्य जे अतिशयोक्तिमे असत् उक्तिक प्रयोग कयल जाइछ जखन कि अत्युक्तिमे अत्यन्त असत् उक्तिक प्रयोग कयल जाइछ ।

लक्षण :

अनहोनी अजगुतहुकेँ यश गुन गुनि अत्युक्ति ।
दान पानिसँ पल्लवित सुरतरु दानी युक्ति ॥ (अ०मा०)

पोथीमे प्रयुक्त संकेत

अ०क०	–	अलङ्कार-कमलाकर	बाजि०	–	बाजि उठल मुरली
अ० द०	–	अलङ्कारदर्पण	बा०बो०	–	बाल-बोधिनी
अ०मा०	–	अलङ्कार-मालिका	मे० प्र०	–	मेरुप्रभा
अ०स०	–	अलङ्कार-सर्वस्व	मै० का०	–	मैथिली काव्यशास्त्र
अ० सा०	–	अलङ्कारसागर	रा० वि०	–	राधा-विरह
उमा०	–	उमापति	लोक०	–	लोकलक्षण
ए० प०	–	एकावली-परिणय	विद्या०	–	विद्यापति
का०प्र०	–	काव्यप्रकाश	सा०द०	–	साहित्यदर्पण
कुव०	–	कुवलयानन्द	सा०भा०	–	साओन-भादव
गो०दा०	–	गोविन्द दास	सीता०	–	सीताराम झा
पृ०सं०	–	पृष्ठ संख्या			

संसृष्टि एवं संकर

दुनूमे दू वा दूसँ अधिक अलंकारक मिश्रण रहैत अछि, अन्तर एतबे अछि जे संसृष्टिमे ओ मिश्रण तिल-तण्डुलवत् रहैछ, जखन कि संकरमे नीर-क्षीरवत् । संसृष्टिक मिश्रण निरपेक्ष रहैत अछि, किन्तु संकरक मिश्रण सापेक्ष ।

l

एहन आश्चर्य जे असम्भव हो आ तकर यशोगुणक यदि गणना कयल जाय तऽ अत्युक्ति अलङ्कार होइछ; यथा— दानक पानिसँ सिंचित रहबाक कारणहिँ कल्पवृक्ष दानी कहबैत छथि ।

एतय कल्पवृक्षकेँ दानी कहबाक कारण सर्वथा असम्भव अछि, तेँ अत्युक्ति अलंकार भेल ।

उदाहरण :

1. तितल वसन तन लागू ।
मुनिहुक मानस मनमथ जागू ॥ (विद्यापति)

सद्यःस्नाताक भीजल वस्त्र देखि मुनियोक मोनमे रतिभाव जागृत भए जाइत छनि ।

2. जखनहि राम धनुष संधानल कुम्भकरण संहार हित ।
पृथ्वी दिग्गज असुर नाग सब डोलि उठल भूधर सहित ॥ (लेखक)

89—हेतु

जतय कारण एवं कार्यक अभेद वर्णन होअए, ओतय हेतु अलङ्कार होइछ ।

हेतुक अर्थ थिक कारण । अर्थात् एहि अलङ्कारमे कारण एवं कार्य एकहि ठाम वर्णित होइछ, जाहिसँ ओहिमे अभेदता देखा पड़ैछ ।

लक्षण :

'हेतु' हेतुमानक सङहि एकत रूपक बोध ।
शशि उगइत प्रमुदित कुमुद हँसी कौमुदी मोद ॥ (अ०मा०)

जतय कारण एवं कार्यक अभेद वर्णन होअए ओतय हेतु अलङ्कार होइछ; यथा— चन्द्रमाक उगिते कुमुद प्रमुदित भए जाइछ तथा ओकर हँसी कौमुदी थिक ।

एतय कारण थिक चन्द्रमाक उगब आ कार्य कुमुदक प्रमुदित होयब, जे संगहि वर्णित भेल अछि ।

उदाहरण :

उगितहि चन्द्रक रहल नहि
तिमिरक ओ घनभाव । (एकावली-परिणय)

एतय कारण चन्द्र एवं कार्य तिमिरक घनभाव हरब थिक, जे संगहि वर्णित भेल अछि।

काव्यलिङ्ग एवं हेतु

हेतुमे कार्य एवं कारणमे कोनो अन्तर नहि रहैत अछि, किन्तु काव्यलिङ्गमे बिना कारणक वाक्यार्थक सि□ नहि होइछ ।

90—अनुमान

जतय साधनक द्वारा साध्यक चमत्कारपूर्ण वर्णन होअए ओतय अनुमान अलङ्कार होइछ ।

एहि अलङ्कारमे साधनक द्वारा साध्यक ज्ञान होइछ । अर्थात् जखन कवि– कल्पनाजन्य चमत्कारसँ साधनक द्वारा साध्यक प्रतीति होअए तऽ अनुमान अलङ्कार होइछ । ई तर्कन्यायमूलक अलङ्कार थिक ।

लक्षण :

1. अनुमानं तदुक्तं यत्साध्यसाधनयोर्वचः । (का०प्र०)

जतय साध्य–साधन भावसँ कोनो वचनक प्रतिपादन कयल जाय ओतय अनुमान अलङ्कार होइछ ।

2. अनुमानं तु विच्छित्त्या ज्ञानं साध्यस्य साधनात् । (सा०द०)

जतय साधनसँ चमत्कारपूर्ण साध्यक ज्ञान होअए ओतय अनुमान अलङ्कार होइछ ।

3. हेतु लिंगकेर ज्ञानसँ अलङ्कार अनुमान ।
कमलिनि मुख मलिने बुझल, गेल अस्त दिनमान ॥ (अ०मा०)

साधनसँ जतय साध्यक ज्ञान होअए, ओतय अनुमान अलङ्कार होइछ; यथा— कमलिनीक मलिन मुखसँ ज्ञान भेल जे सूर्यास्त भए गेल ।

उदाहरण :

इंगित नयन तरंगित रे
वाम भौह भेल भंग ।
तखन न जानल तेसर रे
गुपुत मनोभव रंग ॥ (विद्यापति)

नायिकाक चंचल नयन आ टेढ़ भृकुटि देखि हुनक गुप्त काम पीड़ाक आभास भेल ।

एतय साधनसँ साध्यक ज्ञान भेल तेँ अनुमान अलङ्कार थिक ।

उत्प्रेक्षा एवं अनुमान

उत्प्रेक्षालङ्कारमे उपमानक उपमेयमे सम्भावना देखाओल जाइछ, किन्तु अनुमानमे साधनक द्वारा साध्यक ज्ञान होइछ । उत्प्रेक्षामे ज्ञान अनिश्चित रहैछ, अनुमानमे निश्चित ।

हेतु एवं अनुमान

हेतु अलङ्कारमे कार्य एवं कारणक अभेद वर्णित रहैछ, किन्तु अनुमानमे साध्यक द्वारा अनुमान कयल जाइछ ।

काव्यलिंग एवं अनुमान

दुनू अलंकारमे कार्यक सि□क हेतु कारण वर्णित रहैछ, किन्तु काव्यलिंगमे हेतु निष्पादक होइछ, जखन कि काव्यलिंगमे ज्ञापक ।

91—मिथ्याध्यवसिति

जतय कोनो मिथ्या अर्थकेँ सि□ करबाक हेतु अन्य मिथ्या अर्थक कल्पना कयल जाय, ओतय मिथ्याध्यवसिति अलंकार होइछ ।

जतय अलङ्कार परस्पर स्वतन्त्र नहि रहि, अङ्गाङ्गिभावसँ सम्ब□ रहैछ, ओतय अङ्गाङ्गिभाव संकर होइछ ।

3. संकर विविध अलंकृतिक दूध-पानि जनु योग ।
मुख-शशि समुदित समुख लखि चक-चकवीक वियोग ॥ (अ०मा०)

दूध पानि जेकाँ मिश्रित अलङ्कारकेँ संकर कहल जाइछ; यथा— मुखचन्द्रक उदयसँ चकवा–चकवीक जोड़ा बिछुड़ि गेल ।

एतय रूपक एवं काव्यलिङ्गक मिश्रणसँ संकर भेल ।

भेद :

एकर तीन भेद अछि—

1. अङ्गाङ्गिभाव संकर 2. एकाश्रयानुप्रवेश संकर 3. संदेह संकर ।

1. अङ्गाङ्गिभाव संकर

जतय अनेक अलङ्कार अन्योन्याश्रित रहैत अछि अर्थात् एकक सि□ दोसरक द्वारा होइछ; यथा—

रहितहु नयनक तिमिर बढ़ि
जग आन्हर कए देल ।
अहंकार ममकार ओ
इन्दजाल जनु खेल ॥ (एकावली–परिणय)

एतय पूर्वा□मे क्रमशः विशेषोक्ति एवं विभावना अछि एवं अंतमे उपमा, जे अन्योन्याश्रित अछि । अतः अङ्गाङ्गिभाव संकर भेल ।

2. एकाश्रयानुप्रवेश संकर

जतय एकक आश्रयमे अनेक अलङ्कारक स्थिति होअए ओतय एकाश्रयानुप्रवेश संकर होइछ; यथा—

वरुण-दिशा-मुखमे कएल, रजनी निकट विचारि
नवल राग सिन्दूर जनि, सन्ध्या-सखी-सम्हारि । (एकावली–परिणय)

एतय 'वरुण–दिशा–मुख'मे— रूपक एवं श्लेष अछि जकर आधार एकहि अछि, 'वरुण–दिशा–मुख' । अतः एकाश्रयानुप्रवेश संकर भेल ।

3. संदेह संकर

जतय अनेक अलङ्कारमे एक अलङ्कारक निर्णय नहि भए सकय ओतय संदेह संकर होइछ; यथा—

तत्कालहि सौतिनि-निकरक, पति-अनुगतिसँ जनु लज्जित ।
दुख-मलिन कुसुम-मुखकेँ झट, कए देल कुमुदनी मज्जित ॥ (एकावली–परिणय)

एतय कुसुम–मुखमे रूपक वा उपमा— तत्र संदेहः । अतः एतय रूपकोपमा संकर भेल ।

एतय 'पद'–'पर', 'पतित'–'पतित' इत्यादिसँ अनुप्रास एवं 'पतित'–'पतित', 'मुक्त'–'मुक्त' सँ यमक अलङ्कार होइछ, जे परस्पर निरपेक्ष अछि; तेँ संसृष्टि अलङ्कार भेल ।

2. अर्थालङ्कार संसृष्टि

जतय निरपेक्ष रूपसँ अनेक अर्थालङ्कारक सम्मिश्रण होअए ओतय अर्थालङ्कार संसृष्टि कहबैछ ।

उदाहरण :

तखनहि सिरजल सुत एकवीर,
रुचिमे मनोज, बलमे समीर ।
त्रिभुवन-पालन-ओजस अमेय,
जनि शम्भु उमामे कार्त्तिकेय ॥ (एकावली-परिणय)

एतय पूर्वा□मे अतिशयोक्ति ओ उत्तरा□मे उपमा अछि जे परस्पर निरपेक्ष अछि । अत: संसृष्टि अलङ्कार भेल ।

3. शब्दार्थालङ्कार संसृष्टि

जतय शब्दालङ्कार एवं अर्थालङ्कारक निरपेक्ष रूपसँ मिश्रण होअए ओतय शब्दार्थालङ्कार संसृष्टि कहबैछ ।

उदाहरण :

भेल हतप्रत्यास अनवरत-
जोर जोर सँ लैत निसास,
श्रान्ति-स्वेद-जल-भीजल देह,
सदेह कनक-लतिका जनु भास । (राधा-विरह)

एतय उत्तरा□क दुनू चरणमे अनुप्रास ओ उत्प्रेक्षाक निरपेक्ष भावसँ मिश्रण अछि, तेँ शब्दार्थालङ्कार संसृष्टि भेल ।

104—संकर

जतय दू वा अधिक अलङ्कार नीर-क्षीरवत् मिलल रहय ओतय संकर अलङ्कार होइछ।

नीर-क्षीर न्यायक तात्पर्य एहन मिश्रणसँ अछि जकर अनुभव तऽ होअए किन्तु पृथक् नहि कयल जा सकय । एकर मिश्रण सापेक्ष होइछ ।

लक्षण :

1. अङ्गाङ्गित्वेऽलंकृतीनां तद्वदेकाश्रयस्थितै: ॥ (सा०द०)

जतय एक अङ्गीकेँ आधार बनाकय अङ्गाङ्गिभावसँ अन्य अलंकार सभ रहए ओतय अङ्गाङ्गि संकर होइछ ।

2. अविश्रान्तिजुषामात्मन्यङ्गाङ्गित्वं तु संकर: । (का०प्र०)

एहि अलङ्कारमे असत्यक निश्चय करबाक हेतु अन्य असत्यक कल्पना कयल जाइत अछि ।

लक्षण :

'मिथ्याध्यवसिति' फूसि हित कथा फूसि गढ़ि आन ।
गगन कुसुम-स्रग पहिरि गर गणिका निज वस आन ॥ (अ०मा०)

मिथ्याध्यवसिति ओ अलङ्कार थिक जाहिमे फूसि कथाक सि□क लेल फूसिक स्थापना कयल जाइछ; यथा— आकाश-कुसुमक माला धारण कयनिहारेटा वेश्याकेँ अपन वशमे कय सकैत अछि ।

उदाहरण :

तटिनि तट न पाइअ बाट ।
तेँ कुच गरल कठिन काँट ॥ (विद्यापति)

बाट नहि भेटबाक कारण कुच कठिन काँटमे गड़ल अछि ।

एतय बाट नहि भेटब असत्य कथन अछि जकर सम्पुष्टिक हेतु कहल गेल अछि जे स्तन बीचहि काँटमे गड़ि गेल ।

92—प्रहर्षण

अत्यन्त हर्षक प्राप्तिक वर्णनमे प्रहर्षण अलङ्कार होइछ ।

एहि अलंकारमे अत्यन्त हर्षव□क वस्तुक प्राप्ति होइछ ।

लक्षण :

बिनु यतने यदि पूर्त्ति हो उत्कण्ठाक निवेश ।
वांछितसँ यदि अधिक वा फल हित यतन विशेष ।
सहसा सद्य: फल सकल 'प्रहर्षण'क थिक भेद ॥ (अ०मा०)

बिनु यतने यदि पूर्त्ति होअए, वा□छतसँ अधिक यदि पूर्त्ति होअए एवं उपायक ताकेमे फल भेटि जाय— एहि तीनू स्थितिमे प्रहर्षण अलंकार होइछ ।

भेद :

एकर तीन भेद होइछ—

1. प्रथम प्रहर्षण 2. द्वितीय प्रहर्षण 3. तृतीय प्रहर्षण ।

1. प्रथम प्रहर्षण

जतय वा□छत वस्तु अनायासहिँ प्राप्त भए जाय; यथा—

भरल मेघ नभ, श्याम वन, राति अन्हार गभीर ।
बड़ डेरबुक हरि, राधिके ! सङ-धरु यमुना तीर ॥ (अ०मा०)

आकाशमे मेघ भरल अछि, राति अन्हार अछि आ कृष्ण जंगलमे छथि, तेँ हे राधिके ! अहाँ यमुना कात धरि जा कय संग कय लियनु ।

एतय सभटा कामोदीपक वस्तुक वर्णन भेल अछि आ राधाकेँ मनोवा□छत वस्तु भेटि गेलनि । अर्थात् श्रीकृष्णक मिलनक हेतु एकान्त ओ उपयुक्त समय । अतः प्रथम प्रहर्षण भेल।

2. द्वितीय प्रहर्षण

जतय वा□छतसँ अधिकक लाभ होअए; यथा—

चातक स्वाती मेघसँ माङल कन दू चारि ।
तावत भूतल देखि भरि बरसि निरन्तर वारि ॥ (अ०मा०)

चातक पक्षी स्वातीक मेघसँ दू-चारिए बुन्द जलक याचना कयलक, किन्तु मेघ बरसि कय पृथ्वीकेँ भरि देलक ।

एतय वा□छतसँ अधिकक प्राप्ति भेलासँ द्वितीय प्रहर्षण भेल ।

3. तृतीय प्रहर्षण

उपाये तकबाक क्रममे जखन फलक प्राप्ति भए जाय; यथा—

दिव्यौषधि अंजन लगा ताकब वसुधा बूलि ।
गेल मूल खोधय ततहि भेटल निधि समतूल ॥ (अ०मा०)

आँखिमे अंजन लगाकय पृथ्वीपर बूलि दिव्यौषधि तकबाले' गेलाह, किन्तु जड़ि खोधबाक क्रममे उपयुक्त खजाने भेटि गेलनि ।

एतय उपायेक ताकमे फलप्राप्ति भए गेल अछि तेँ तृतीय प्रहर्षण भेल ।

93—विषादन

जतय वा□छत लाभक विपरीत फल भेटि जाय, ओतय विषादन अलङ्कार होइछ । ई प्रहर्षणक विरोधी अलङ्कार थिक । विषादनक अर्थ होइछ— विशेष दुख । अतः लोक फलक आशा करैत अछि । किन्तु, बदलामे विशेष दुखक प्राप्ति भए जाइत छैक ।

लक्षण :

इच्छा छल किछु, भेल किछु, विरुध विषादन अन्त ।
उसकाबय दीपक चलल मिझा गेल हा हन्त ॥ (अ०मा०)

जखन इच्छाक विपरीत फल होअए तऽ विषादन अलङ्कार होइछ; यथा— दीपककेँ उसकाबय लगलहुँ तऽ मिझाइये गेल ।

उदाहरण :

गढ़इत छल गणपतिक छवि बनल मर्कटक मूर्त्ति
लिखइत चानक कला लिपि राहुक मुँहहिक पूर्त्ति ॥ (अ०मा०)

गणपतिक मूर्त्ति गढ़ल जाइत छल किन्तु भए गेल बानरक मुँह । चानक लिपि लिखबाक बदला राहुक लिखा गेल ।

एतय विपरीत फल होयबामे विषादन अलङ्कार भेल ।

शब्दार्थालङ्कार

103—संसृष्टि

जतय तिल-तण्डुल न्यायसँ परस्पर निरपेक्ष अलङ्कारकेँ एकत्र देखाओल जाय ओतय संसृष्टि अलङ्कार होइछ ।

संसृष्टिक अर्थ थिक— मिझहर । एहिमे एहन दू वा दूसँ अधिक अलङ्कार मिलल रहैत अछि जे परस्पर निरपेक्ष होअए, अर्थात् ओकरा पृथक् कयल जा सकय ।

लक्षण :

1. सेष्टा संसृष्टिरेतेषां भेदेन यदिह स्थितिः । (का०प्रा)

संसृष्टि ओ अलङ्कार थिक जाहिमे पूर्व प्रतिपादित अलङ्कारक परस्पर निरपेक्ष रूपसँ मिश्रण भेल हो ।

2. मिथोऽनपेक्षमेतेषां स्थितिः संसृष्टि रुच्यते । (सा०द०)

जतय परस्पर निरपेक्ष रूपसँ अलङ्कारक एकत्र स्थिति देखल जाय ओतय संसृष्टि अलङ्कार होइछ ।

3. तिल-तण्डुल जन अनेकक योग जतय 'संसृष्टि' ।
ठनकि-तमकि अन-कनक लुटि गेल अकालिक वृष्टि ॥ (अ०मा०)

जतय तिल तण्डुलवत् अनेक अलङ्कारक योग होअए ओतय संसृष्टि अलंकार होइछ; यथा— ठनकि कय एवं तमकि कय असामयिक वृष्टि अन्नक कणकेँ लूटि लेलक, ई प्रस्तुत अर्थ थिक; दोसर अर्थ अछि जे क्यो व्यक्ति डाँटि-फटकारि कय अन्न एवं सोना लुटि लेलक ।

अतः एतय अनुप्रास, श्लेष एवं समासोक्तिक मिश्रण अछि, जे निरपेक्ष अछि ।

भेद :

एकर तीन भेद अछि— 1. शब्दालंकार संसृष्टि 2. अर्थालङ्कार संसृष्टि 3. शब्दार्थालङ्कार संसृष्टि ।

1. शब्दालंकार संसृष्टि

जतय स्वतंत्र रूपसँ अनेक शब्दालङ्कार एकत्र रहैछ ओतय शब्दालङ्कार संसृष्टि कहबैछ; यथा—

उदाहरण :

सन्तत सन्तति-तति-सर्जन-हित
नगन रहैत मगन जे अम्ब,
पद पर पतित पतित धरि मुक्त
बनाय मुक्त तेँ कच अविलम्ब । (राधा-विरह)

लक्षण :

विदितहु जतय निषेध हो तदपि कहब प्रतिषेध । (अ०मा०)

जतय प्रसि□ निषेधक चर्चा होइछ ओतय प्रतिषेध अलङ्कार होइछ ।

उदाहरण :

शकुनि ! न जूआ खेड़ि ई,
समर-भूमि शर बेध ॥ (अ०मा०)

हे शकुनि ! ई जूआ खेलायब नहि, समर-भूमि थिक; जतय लोक शरसँ बेधल जाइत अछि ।

102—विधि

जतय पूर्वसि□ वस्तुक पुनर्विधान कयल जाय ओतय विधि अलङ्कार होइछ । ई प्रतिषेधक विपरीत अलङ्कार थिक । एहि अलङ्कारमे ओहि वस्तुक पुन: वर्णन होइछ जकर विधान पूर्वहि भए चुकल अछि ।

लक्षण :

सि□ वस्तुहिक सि□ता थिक 'विधि' लक्षण उक्त । (अ०मा०)

सि□ वस्तुक सि□तावर्णनमे विधि अलङ्कार होइछ ।

उदाहरण :

समय सरस धुनि घनक सुनि,
मोरक नृत्य प्रवृत्त ॥ (अ०मा०)

समय सरस देखि एवं मेघक ध्वनि सूनि मोर नृत्यमे प्रवृत्त भए गेल ।

एतय मेघाच्छन्न समयमे मोरक नृत्य प्रसि□ अछिए, तथापि ओकर वर्णन भेल अछि । अत: विधि अलङ्कार भेल ।

94—अनुज्ञा

विशेष गुणकेँ देखि दोषयुक्त वस्तुक इच्छा करब अनुज्ञा अलङ्कार थिक ।

एहि अलङ्कारमे दोषमे गुण देखि ओकरा अनुकूल बुझि, ओकर इच्छा कयल जाइछ ।

लक्षण :

दोषहिकेँ गुन गुनि तकर माङ अनुज्ञा शिष्ट ।
विपतहि हरि मन पड़थि तेँ विपदे हमरा इष्ट ॥ (अ०मा०)

दोषहिकेँ गुण बुझि ओकर माङ करबामे अनुज्ञा अलङ्कार होइछ; यथा— विपत्तियेमे भगवान मोन पड़ै छथि, तेँ विपत्तिये हमरा पसिन्न अछि ।

उदाहरण :

'मरब पुत्र वियोगमे' सुनि नृपति अति हर्षित भेला ।
सुतहीन राजा शापकेँ वरदान बुझि प्रमुदित भेला ॥ (लेखक)

एतय शापकेँ वरदान मानि लेल गेल अछि। अत: अनुज्ञा अलङ्कार भेल।

95—तिरस्कार

जतय गुणयुक्तो पदार्थकेँ दोषयुक्त बुझि तिरस्कार कयल जाय, ओतय तिरस्कार अलङ्कार होइछ ।

ई अनुज्ञाक विपरीत अलङ्कार थिक । एहिमे गुणयुक्तो वस्तुकेँ दोषयुक्त कहि तिरस्कार कयल जाइछ ।

उदाहरण :

धन-सम्पति-परिवार-मित्रगण ।
राम-भक्ति केर बाधक सब क्षण ॥ (लेखक)

एतय धन, सम्पत्ति, परिवार एवं मित्रगण गुणयुक्त पदार्थ थिक जकरा 'राम-भक्ति केर बाधक' कहि दोषयुक्त सावित कयल गेल अछि ।

96—रत्नावली

रत्नावली ओ अलङ्कार थिक जाहिमे एहन प्राकरणिक अर्थक क्रमश: वर्णन होइछ जे क्रम प्रसि□ होअए ।

रत्नावलीक अर्थ थिक रत्नक माला । अर्थात् एहिमे प्राकरणिक अर्थक क्रमानुसार वर्णन कयल जाइछ ।

लक्षण :

प्रकृत अर्थ गाँथव क्रमिक 'रत्नावली' सुरेब । (अ०मा०)

रत्नावली ओ अलङ्कार थिक जाहिमे प्रसि□ क्रममे प्राकरणिक अर्थक वर्णन कयल जाइछ ।

उदाहरण :

चौमुख लक्ष्मीपति शिवहु धनपति दिगपति देव ! (अ०मा०)

कोनो कवि राजासँ कहैत छथि जे अहाँ चतुरमे प्रधान, लक्ष्मी सन पत्नी रखनिहार, कल्याण कयनिहार, धनवान एवं सब दिशाक पालन कयनिहार छी । ई प्रस्तुत अर्थ भेल । प्राकरणिक अर्थ थिक— चौमुख (ब्रह्मा), लक्ष्मीपति (विष्णु), शिव, धनपति (कुवेर) एवं दिग्पाल; जे प्रसि□ क्रममे अछि ।

97—अनुगुण

जतय दोसरक सामीप्यक कारण अपन गुणमे वृ□ भए जाइछ ओतय अनुगुण अलङ्कार होइछ ।

अनुगुणमे दू शब्द अछि— अनु (बढ़ब) एवं गुण । अर्थात् एहिमे कोनो वस्तुक गुणमे वृ□ भए जाइछ ।

लक्षण :

अनुगुण आनक परस वश पहिलुक गुण उत्कृष्ट । (अ०मा०)

अनुगुण अलङ्कारमे आनक स्पर्शसँ पहिलुक पदार्थक गुणमे उत्कृष्टता आबि जाइछ ।

उदाहरण :

नयन-नलिनसँ कुण्डलक नीलम रंग विशिष्ट । (अ०मा०)

कमलरूप नयनसँ कुण्डलक नील रंगमे विशिष्टता दृष्टिगत होइछ ।

98—गूढ़ोक्ति

जतय आनकेँ उद्देश्य कय कोनो वस्तु कहल जाइछ तऽ गूढ़ोक्ति अलङ्कार होइछ।

गूढ़ोक्तिक अर्थ होइछ एहन उक्ति जे सर्वसाधारण नहि बुझि सकय अर्थात् एहिमे श्लेषक माध्यमे वक्ता श्रोताकेँ किछु कहैत छैक, जे आन क्यो नहि बुझि सकय।

लक्षण :

'गूढ़-उक्ति' यदि आनकेँ कही उदेशेँ आन । (अ०मा०)

'गूढ़-उक्ति' ओ थिक जतय आनकेँ उद्देश्य कय कहल जाय ।

उदाहरण :

खेत चरब तजि वरद !
झट हटहि; अबैछ किसान । (अ०मा०)

किसानकेँ देखि, खेत चरब छोड़ि, बड़द केँ हटबा ले' कहल जाइत अछि— ई गूढ़ अर्थ थिक । किन्तु वस्तुतः बड़दकेँ स्वभाविक रूपमे कहल जाइत अछि जे किसानकेँ देखि बड़द खेत चरब छोड़ि दैत अछि ।

99—विवृतोक्ति

जतय कवि स्वयं रहस्योद्घाटन कय देथि ओतय विवृतोक्ति अलङ्कार होइछ । एहि अलङ्कारमे कवि अपन चमत्कारपूर्ण अभिव्यक्तिक द्वारा स्वयं रहस्योद्घाटन कय दैत छथि ।

लक्षण :

गूढ़ोक्तिक विवरण-वचन
सुनि 'विवृतोक्ति' बुझैछ । (अ०मा०)

गूढ़ोक्तिक विवरण सुनिकय विवृतोक्ति अलङ्कार बुझल जाइछ ।

उदाहरण :

सूचित कयलन्हि, खेत तज
वरद ! किसान अबैछ ॥ (अ०मा०)

एतय बड़दकेँ सूचना देल जाइत अछि जे खेत छोड़ि कय भागि जो, किसान आबि रहल अछि ।

100—छेकोक्ति

जतय लोकोक्तिक प्रयोगसँ अन्य अर्थक प्रतीति होअए ओतय छेकोक्ति अलंकार होइछ ।

छेकक अर्थ थिक चतुर । अतः एहिमे चतुर व्यक्तिक द्वारा एहन लोकोक्तिक प्रयोग होइत अछि जाहिसँ कोनो अन्य अर्थ प्रतीति होमय लगैछ ।

लक्षण :

अर्थान्तर अन्तर निहित लोकोक्तिहु छेकोक्ति । (अ०मा०)

जतय लोकोक्तिक प्रयोगमे अन्य अर्थ निहित रहय ओतय छेकोक्ति अलंकार होइछ ।

उदाहरण :

पाँक फसल गजकेँ
करय गज दिग्गज उन्मुक्त । (अ०मा०)

पाँकमे फसल हाथीकेँ मतवाला हाथीए निकालि सकैछ, तात्पर्य ई जे काँट गड़त तऽ काँटेसँ निकलत, ओहिपर कतबो रसगुल्ला थोपबै तऽ कोनो असरि नहि ।

101—प्रतिषेध

जतय प्रसि□ निषेधक पुनः वर्णन कयल जाइछ ओतय प्रतिषेध अलङ्कार होइछ। एहिमे प्रसि□ निषेधात्मक वस्तुक वर्णन होइछ ।

मैथिलीक अध्येताकेँ, उच्च वर्गक छात्रकेँ, अलंकार बड़ कठिन बुझि पड़ैत छैक । संस्कृतमे जे आकर ग्रन्थसभ छैक, ताहिमे अवगाहनक ओकरा सामर्थ्य नहि । मैथिलीमे जे सभ छैक, से की तँ आब उपलब्ध नहि छैक, अथवा जे छैको, ताहिमे तेहन संक्षेपमे, सूत्रब , कहल गेल छैक जे सामान्य जनक हृदयमे खचित नहि होइत छैक । ओकरा भाष्य चाहिऐक । नवका गुरुओ लोकनि भरिसक रस-अलंकार-गुण-ध्वनि-रीतिसँ प्रीति नहिए रखैत छथि, किछु तँ तेहन भयभीत भऽ जाइत छथि जे सात लग्गा दूरे रहऽ चाहैत छथि । एहना स्थितिमे ई शास्त्र आगाँ बढ़त कोना ? नवीन पीढ़ी अलंकारक झंकारकेँ अंगीकार नहि करत तँ काव्यशास्त्रक अगिला सीढ़ीपर चढ़त कोना ?.........

साहित्यक वर्तमान लहरिमे भासल जाइत समाजमे, जाहिमे परम्पराकेँ डुबा देबे इष्ट छैक, नवीन पीढ़ीमे, शु मैथिलीक अध्येता ओ प्राध्यापक, डॉ० रमण झाकेँ छोड़ि, क्यो हठात् नजरिपर नहि अबैत छथि जनिका काव्यशास्त्र, विशेषत: अलंकारशास्त्र, एतेक भीजल होइनि । हर्ष अछि जे रमणजी अपन एहि विषयक ज्ञानकेँ लिपिब कऽ लेलनि आ आइ तकरा ग्रन्थरूपमे प्रस्तुत कऽ मैथिली साहित्यक उपकार कयलनि अछि, मैथिली भण्डारक काव्यशास्त्रवला खानाकेँ, जे कने खलिआयल अछि, यथासाध्य भरलनि अछि । एहि हेतु ई अवश्य धन्यवादक पात्र थिकाह ।

भीमनाथ झा

प्रस्तुत ग्रंथ **अलंकार-भास्कर** डॉ० रमण झाक एक अमूल्य अलंकार-संग्रह ग्रंथ थीक। प्रस्तुत ग्रंथक अन्तर्गत विविध अलंकारकेँ तीन कोटि मध्य विभाजित कएल गेल अछि— शब्दालंकार, अर्थालंकार एवं उभयालंकार । एहि शताधिक अलंकारक संग्रह सम्पूर्ण ग्रंथमे प्रत्येक अलंकारक सूक्ष्मातिसूक्ष्म भेदक निदर्शन, लक्षण ओ उपलक्षणक सोदाहरण संपुष्टि, साम्य-वैषम्यक निर्देश-पूर्वक विशिष्ट विश्लेषण क्षमताक संग प्रस्तुत भेल अछि । डॉ० रमण झाकेँ जाहि कोनो सूक्ष्म भेदयुक्त अलंकारक उदाहरण सहजतासँ उपलब्ध नहि भए सकलनि ओतहु ओ अपन कवि-प्रतिभाक उपयोग कए ओहि अलंकारकेँ लक्षण ओ उदाहरणसँ संपुष्ट कएने छथि जे निर्विवाद रूपसँ हिनक साहित्यशास्त्रीय ज्ञानक परिचायक थीक।

हम हिनक एहि कृति **अलंकार-भास्कर**क संवर्धना करैत छी । जतए धरि एहि ग्रंथक उपयोगिताक प्रसंग अछि, मुक्त स्वरसँ कहब जे ई पुस्तक उच्च शिक्षाक प्रत्येक स्तरपर तँ उपयोगी होएबे करत, सामान्य ज्ञान रखनिहार विद्यालयीय छात्र लोकनिक हेतु सेहो न्यूनाधिक रूपसँ सहायक होएत ।

लक्ष्मण चौधरी 'लक्ष्मी'



डा० रमण झा

जन्म- 14 अगस्त 1957 ई०
हटाढ़-रुपौली, मधुबनी (बिहार)

H **शिक्षा-** बी०ए० प्रतिष्ठा (मैथिली) - 1976, प्रथम वर्गमे प्रथम
ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभङ्गा ।
एम०ए० (मैथिली) - 1978, प्रथम वर्गमे द्वितीय,
ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभङ्गा ।
पी-एच०डी० - 1986, आधुनिक मैथिली काव्यमे अलङ्कार-विधान,
ल०ना०मिथिला विश्वविद्यालय, दरभङ्गा ।
डी०लिट्० हेतु ल०ना०मि०वि०मे प जीकृत-मैथिली काव्य पर ज्यौतिषक प्रभाव।

H **वृत्ति :** 2 नवम्बर '82 सँ 5 फरवरी '96 धरि रास नारायण महाविद्यालय, पण्डौलमे प्राध्यापक; 6 फरवरी '96 सँ विश्वविद्यालय मैथिली विभाग, ल० ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभङ्गामे उपाचार्य ।

H **रचना :** पश्चात्ताप (कथा-संग्रह) - 1995
काव्य-वाटिका (कविता-संग्रह) - 1999
अलङ्कार-भास्कर (पूर्व-खण्ड) - 2002
पहिल कथा 'लगे लगे ढुइ' 1976 ई०मे चन्द्रधारी मिथिला महाविद्यालयक पत्रिका 'विदेह'मे तथा अनेक निबन्ध ओ कथा विभिन्न पत्रिकामे प्रकाशित ।

H **प्रसारण :** पहिल कथाक प्रसारण आकाशवाणी, दरभङ्गासँ 31.5.1978 ई०केँ । काव्य-वाटिकाक अधिकांश रचना आकाशवाणी दरभङ्गासँ प्रसारित ।

H **अभिरुचि :** ज्यौतिष-शास्त्र ।

अलङ्कार-भास्कर

डॉ० रमण झा

अलङ्कार-भास्कर

डॉ० रमण झा